# गायत्री की २४ शक्तियाँ

# एवं

# उनके यंत्र-मंत्र

- वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

# गायत्री की चौबीस शक्तियाँ एवं उनके यन्त्र-मन्त्र

लेखक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

सम्पादक
ब्रह्मवर्चस

प्रकाशक
श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट
शान्तिकुंज, हरिद्वार
उत्तरांचल-२४९४११

**लेखक-**

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

□

**प्रकाशक-**

श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट

शान्तिकुंज, हरिद्वार (उत्तरांचल)

□

**प्रथम संस्करण-**

गायत्री जयंती २० जून २००२

मूल्य- ४०=०० रुपया

□

**पत्र व्यवहार का पता-**

गायत्री तीर्थ-शान्तिकुंज, हरिद्वार

(उत्तरांचल) २४९४११

फोन - (०१३३) ४६०६०२, फैक्स- ४६०८६६

Email- shail@del2.vsnl.net.in

website-www gayatripariwar.com

## प्रस्तावना

गायत्री भारतीय संस्कृति की जननी है। उसे आद्यशक्ति कहा गया है। ब्रह्माजी ने आकाशवाणी द्वारा प्राप्त इसी महामंत्र की आराधना करके सृष्टि बनाई और मनुष्यों में दिव्य चेतना जगाई। देवताओं और ऋषियों ने इसी की आराधना से परम पद पाया।

गायत्री को वेदमाता कहा गया है, क्योंकि उसकी व्याख्या में ज्ञान और विज्ञान के भाण्डागार वेद-शास्त्रों की रचना हुई। गायत्री को देवमाता कहा गया है, क्योंकि उसका आश्रय लेने पर मनुष्य उत्कृष्टता, समर्थता और उदारता के देवोपम स्तर तक पहुँच सकता है। गायत्री विश्व माता है, क्योंकि उसमें विश्व कल्याण के समस्त सूत्रों का समावेश है।

गायत्री के चौबीस अक्षरों में २४ शक्तियाँ एवं सिद्धियाँ सन्निहित हैं। इसे बीज मंत्र माना गया है। उनमें २४ ऐसी प्रेरणाएँ भरी हुई हैं जिन्हें अपनाने से व्यक्ति और विश्व को सुनिश्चित सुख-शान्ति का मार्ग मिल सकता है। इन अक्षरों में सन्निहित रहस्यों को शास्त्रकारों ने अनेक प्रतिपादनों द्वारा समझाया है। चौबीस अवतारों की लीलाएँ गायत्री के चौबीस अक्षरों में सन्निहित प्रेरणाओं का व्यावहारिक रूप समझाती हैं। चौबीस देवताओं, चौबीस ऋषियों के स्वरूप, प्रकाश एवं अनुदानों का जो स्वरूप कथा पुराणों में मिलता है, वह प्रकारान्तर से गायत्री के चौबीस अक्षरों का ही रहस्योद्घाटन है। भगवान् दत्तात्रेय के चौबीस गुरु गायत्री के चौबीस बीजाक्षर ही हैं। ऋषि, महर्षि, राजर्षि , ब्रह्मर्षि और देवर्षि पाँचों वर्ग की उच्चस्तरीय साधनाएँ साधक को पाँच देवताओं का अनुग्रह प्रदान कराती हैं एवं उन्हीं के समतुल्य बनाती हैं। गायत्री के माध्यम से पाँच कोशों का अनावरण एवं पंच प्राणों को प्रचंड बनाने वाली महाकाली कुण्डलिनी का जागरण होता है। इन्हीं रहस्यों का संकेत गायत्री के पंचमुखी स्वरूप में किया गया है।

गायत्री मन्त्र को आत्मिक ऋद्धियों और भौतिक सिद्धियों का उद्गम केन्द्र बताया गया है। इन दो प्रयोजनों की पूर्ति करने की शक्ति से भरी-पूरी होने के कारण उसके दो नाम हैं- सावित्री और गायत्री। सावित्री को तप साधना और गायत्री को ऋतम्भरा प्रज्ञा कहा गया है। दोनों के समन्वय का नाम ब्रह्म विद्या है।

तत्त्वदर्शी महा-मनीषियों को गायत्री मन्त्र की क्षमता और प्रेरणा पर इतनी श्रद्धा थी कि उनने उसे विशिष्ठ व्यक्तियों की साधना तक ही सीमित न

रखकर जन-जन के नित्य कर्म में सम्मिलित होने योग्य ठहराया, उसकी दैनिक उपासना को अनिवार्य धर्म - कर्तव्य में सम्मिलित किया। दैनिक उपासना को संध्या वंदन कहते हैं। संध्या वंदन के जितने भी प्रकार हैं, उन सब में गायत्री अनिवार्य है। भारतीय धर्म में गुरु मन्त्र की संज्ञा मात्र गायत्री को ही मिली हैं। विद्याध्ययन आरंभ करते हुए सर्व प्रथम उसी को पढ़ाया जाता है। मस्तिष्क रूपी किले पर शिखा की स्थापना के रूप में गायत्री की प्रज्ञा ध्वजा फहराई जाती है। शरीर को कर्तव्यों के अनुशासन में बाँधने के लिए यज्ञोपवीत से जकड़ा जाता है। यह व्रतबंध और कुछ नहीं, गायत्री मन्त्र में सन्निहित नौ प्रेरणाओं और नौ प्रवृत्तियों का नौ धागों के रूप में प्रतीक समुच्चय ही है। शिखा और सूत्र की संस्कृति को भारतीय संस्कृति कह सकते हैं। वह प्रकारान्तर से गायत्री की ही उत्पत्ति है। इसलिए यह महामन्त्र ज्ञान गंगोत्री के रुप में विख्यात है।

गायत्री को ब्रह्मवर्चस् कहा गया है। उसमें ओजस्, तेजस् और वर्चस् प्रदान करने की क्षमता है। प्रज्ञा और ऊर्जा का समन्वय ही सविता है। गायत्री का देवता सविता साधक को पवित्रता और प्रखरता की दोनों विशेषताओं से सम्पन्न करके उसे उदात्त एवं उदार बनाता है। ब्रह्म तेज, ब्रह्मास्त्र, ब्रह्मदण्ड की तीनों शक्तियों को गायत्री के सिद्ध पुरुष धारण करते हैं। उसमें विघ्नविदारिणी और ऐश्वर्यदायिनी दोनों ही शक्तियाँ विद्यमान है। माता का अंचल श्रद्धापूर्वक पकड़ने से हर किसी का कल्याण ही होता है। सच्चे मन से की गई गायत्री साधना कभी निष्फल नहीं जाती।

गायत्री को त्रिपदा कहा गया है। उसके तीन चरणों में सत्, चित् आनंद की अनुभूति, सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की संवेदना, सत्, रज, तम की समर्थता का दर्शन किया जा सकता है। त्रिपदा ही त्रिवेणी संगम है। ज्ञान योग, कर्म योग और भक्ति योग के तीनों ही प्रवाह उसमें विद्यमान हैं। तीन देवता ब्रह्मा, विष्णु, महेश-तीन देवियाँ सरस्वती, लक्ष्मी, काली इन्हीं तीन धाराओं का परिचय देती हैं। ब्रह्म विद्या, ऋतम्भरा प्रज्ञा के अन्तर्गत आस्तिकता, आध्यात्मिकता और धार्मिकता के तीनों ही तत्त्व दर्शन गायत्री विज्ञान का ही विस्तार है। उसी को परा, अपरा, महाविद्या एवं महामाया कहते हैं। ब्रह्म की परम सहचरी ब्राह्मी शक्ति यही है। त्रिपदा गायत्री की उपासना के तीन फल बताये गये हैं- आस्थाओं में मुक्ति का, विचारणाओं में स्वर्ग का और व्यवहार में समृद्धि का समावेश है।

शारीरिक समर्थता, मानसिक जागरुकता, आर्थिक सम्पन्नता, व्यक्तित्व की प्रखरता, स्वभाव की सरसता की पाँच सम्पदाएँ गायत्री की सिद्धियाँ मानी गई हैं। जीवन साधना एवं उपचार उपासना के रूप में गायत्री विद्या का अनुशीलन करने वाले इन पाँचों को प्राप्त करने में सफल होते हैं। जिन्हें यह विभूतियाँ उपलब्ध हैं, उन्हें शारीरिक व्याधियाँ, मानसिक उद्विग्नता, आर्थिक दरिद्रता, पारिवारिक विपन्नता, सामाजिक असहकारिता का सामना नहीं करना पड़ता। कोई विक्षेप प्रारब्ध वश आते भी हैं, तो देर तक नहीं ठहरते। शरीर से ओजस्वी, चिन्तन से मनस्वी और भावना से तेजस्वी व्यक्ति कठिन प्रसंगों में भी न तो धैर्य खोते हैं, न हिम्मत हारते हैं। फलतः प्रस्तुत समस्याओं का समाधान निकालने में देर नहीं लगती है। प्रगति की सुव्यवस्थित योजना बनाना और उसे दृढ़तापूर्वक कार्यान्वित करना ही प्रगति पथ पर अग्रसर होने का आधार है। इसे गायत्री उपासना द्वारा प्राप्त करके सुसंस्कृत और समुन्नत जीवन जिया जा सकता है। ईश्वर को जिस भाव से भजा जाता है, वे उसी रूप में प्रत्युत्तर देते और प्रकट होते हैं। माता की करुणा, उदारता और ममता सर्वोपरि है। इसलिए मातृ भाव से गायत्री माता के रूप में भगवान को भजने से बदले में उनका अजस्र वात्सल्य एवं अनुग्रह बरसता है। थका, हारा, दुखी, विक्षुब्ध, रूग्ण, आहत और आर्त व्यक्ति माता को ही पुकारता है और उनकी कृपा दृष्टि, उनका अनुग्रह प्राप्त कर निहाल हो जाता है।

गायत्री उपासना कोई भी कर सकता है। जाति, लिंग का कोई भेद नहीं है। माँ की गोद में हानि का भय नहीं, कल्याण ही होता है। माँ की गोद में बालक निर्भय तो होता ही है, विकसित, समर्थ भी बनता है। उसके दिव्य-अनुदान अगणित शक्तियाँ और सुविधाएँ देने में समर्थ हैं। अनादि काल से गुरुमंत्र इसे ही माना जाता रहा है। मानव देह धारण करने वाले अवतारों, ऋषियों, महामानवों ने इसी की साधना से महान् शक्ति निखारी और महान् कार्यों में सफलता पायी। परम पूज्य गुरुदेव ने भी इसी महाशक्ति की गोद में बैठ कर ऋद्धि-सिद्धियाँ पार्यी। यह राजमार्ग सभी के लिए खुला हुआ है।

पतित पावनी गंगा की गोद, हिमालय की छाया एवं सप्तऋषियों की तपस्थली-सप्तसरोवर क्षेत्र में स्थित ब्रह्मवर्चस् शोध संस्थान के आधार तल पर निर्मित गायत्री शक्तिपीठ में गायत्री महामन्त्र के २४ अक्षरों की दिव्य प्रतिमायें प्रतिष्ठापित हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं-१. आद्यशक्ति २. ब्राह्मी ३. वैष्णवी ४. शाम्भवी ५. वेदमाता ६. देवमाता ७.विश्वमाता ८. ऋतम्भरा ९. मन्दाकिनी

१०. अजपा ११. ऋद्धि १२. सिद्धि १३. सावित्री १४. सरस्वती १५. लक्ष्मी १६. काली १७.कुण्डलिनी १८. प्राणाग्नि १९. भुवनेश्वरी २०. भवानी २१. अन्नपूर्णा २२. महामाया २३. पयस्विनी २४. त्रिपुरा। इन चौबीस देवियों के साथ उनके यन्त्र आदि स्थापित हैं, जिनके दर्शन करने वाले प्राण चेतना से ओतप्रोत हो मन्त्रमुग्ध हुए बिना नहीं रहते और अपने को कृतकृत्य हुआ समझते हैं।

इस पुस्तक में गायत्री के चौबीस अक्षरों में सन्निहित २४ अवतार, २४ देवता, २४ ऋषि, २४ मातृकायें, २४ कलायें, २४ शक्तियाँ, २४ सिद्धियाँ आदि के वर्णन के साथ ही आद्य शक्ति के उपरोक्त २४ स्वरूपों का, उनके यन्त्रों का तत्त्वज्ञान एवं व्यवहार की व्याख्या-विवेचना की गयी है। आशा है इससे उच्चस्तरीय साधकों से लेकर जनसामान्य तक लाभान्वित होंगे और गायत्री की युगान्तरीय चेतना के प्रचार-प्रसार में भागीदार बनकर जीवन-धन्य बनाएँगे।

**डॉ. प्रणव पण्ड्या**

❑

## विषय सूची

९

# गायत्री की चौबीस शक्तियाँ एवं उनके यन्त्र-मन्त्र

## समस्त विद्याओं की भांडागार गायत्री महाशक्ति

गायत्री संसार के समस्त ज्ञान-विज्ञान की आदि जननी है। वेदों को समस्त प्रकार की विद्याओं का भण्डार माना जाता है, वेद गायत्री की व्याख्या मात्र हैं। गायत्री को 'वेदमाता' कहा गया है। चारों वेद गायत्री के पुत्र हैं। ब्रह्माजी ने अपने एक-एक मुख से गायत्री के एक-एक चरण की व्याख्या करके चार वेदों को प्रकट किया। 'ॐ भूर्भवः स्वः' से-ऋग्वेद, 'तत्सवितुर्वरेण्यं' से-यजुर्वेद, 'भर्गोदेवस्य धीमहि' से-सामवेद और 'धियो योनः प्रचोदयात्' से अथर्ववेद की रचना हुई। इन वेदों से शास्त्र, दर्शन, ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, सूत्र, उपनिषद्, पुराण, स्मृति आदि का निर्माण हुआ। इन्हीं ग्रन्थों से शिल्प, वाणिज्य, शिक्षा, रसायन, वास्तु, संगीत आदि ८४ कलाओं का आविष्कार हुआ। इस प्रकार गायत्री संसार के समस्त ज्ञान-विज्ञान की जननी ठहरती है। जिस प्रकार बीज के भीतर वृक्ष तथा वीर्य की एक बूंद के भीतर पूरा मनुष्य सन्निहित होता है, उसी प्रकार गायत्री के २४ अक्षरों में संसार का समस्त ज्ञान-विज्ञान भरा हुआ है। यह सब गायत्री का ही अर्थ विस्तार है।

मंत्रों में शक्ति होती है। मंत्रों के अक्षर शक्ति बीज कहलाते हैं। उनका शब्द गुन्थन ऐसा होता है कि उनके विधिवत् उच्चारण एवं प्रयोग से अदृश्य आकाश मण्डल में शक्तिशाली विद्युत् तरंगें उत्पन्न होती हैं और मन:शक्ति तरंगों द्वारा नाना प्रकार के आध्यात्मिक एवं सांसारिक प्रयोजन पूरे होते हैं। साधारणत: सभी विशिष्ट मंत्रों में यही बात होती है। उनके शब्दों में शक्ति तो होती है, पर उन शब्दों का कोई विशेष महत्वपूर्ण अर्थ नहीं होता। पर गायत्री मंत्र में यह बात नहीं है। इसके एक-एक अक्षर में अनेक प्रकार के ज्ञान-विज्ञानों के रहस्यमय तत्त्व छिपे हुए हैं। 'तत् सवितु: वरेण्यं' आदि के स्थूल अर्थ तो सभी को मालूम है एवं पुस्तकों में छपे हुए हैं। यह अर्थ भी शिक्षाप्रद हैं, परन्तु इनके अतिरिक्त ६४ कलाओं, ६ शास्त्रों, ६ दर्शनों एवं ८४ विद्याओं के रहस्य प्रकाशित करने वाले अर्थ भी गायत्री के हैं। उन अर्थों का भेद कोई-कोई अधिकारी पुरुष ही जानते हैं। वे न तो छपे हुए हैं और न सबके लिये प्रकट हैं।

इन २४ अक्षरों में आयुर्वेद शास्त्र भरा हुआ है। ऐसी-ऐसी दिव्य औषधियों और रसायनों के बनाने की विधियाँ इन अक्षरों में संकेत रूप से मौजूद हैं जिनके द्वारा मनुष्य असाध्य रोगों से निवृत्त हो सकता है, अजर-अमर तक बन सकता है। इन २४ अक्षरों में सोना बनाने की विद्या का संकेत है। इन अक्षरों में अनेकों प्रकार के आग्नेयास्त्र, वरुणास्त्र, नारायणास्त्र, पाशुपतास्त्र, ब्रह्मास्त्र आदि दिव्यास्त्र बनाने के विधान मौजूद हैं। अनेक दिव्य शक्तियों पर अधिकार करने की विधियों के विज्ञान भरे हुए हैं। ऋद्धि-सिद्धियों को प्राप्त करने, लोक-लोकान्तरों के प्राणियों से सम्बन्ध स्थापित करने, ग्रहों की गतिविधि तथा प्रभाव को जानने, अतीत तथा भविष्य से परिचित होने, अदृश्य एवं अविज्ञात तत्त्वों को हस्तामलकवत् देखने आदि अनेकों प्रकार के विज्ञान मौजूद हैं। जिनकी थोड़ी सी भी जानकारी मनुष्य प्राप्त करले तो वह भूलोक में रहते हुए भी देवताओं के समान दिव्य शक्तियों से सुसम्पन्न बन सकता है। प्राचीन काल में ऐसी अनेक विद्याएँ हमारे पूर्वजों को मालूम थीं जो आज लुप्तप्राय हो गई हैं। उन विद्याओं के कारण हम एक समय जगद्गुरु, चक्रवर्ती शासक एवं स्वर्ग-सम्पदाओं के स्वामी बने हुए थे। आज हम उनसे वञ्चित होकर दीन-हीन बने हुए हैं। आवश्यकता इस बात की है कि गायत्री महामन्त्र में सन्निहित उन लुप्तप्राय

महाविद्याओं को खोज निकाला जाय, जो हमें फिर से स्वर्ग- सम्पदाओं का स्वामी बना सके। यह विषय सर्वसाधारण का नहीं है। हर एक का इस क्षेत्र में प्रवेश भी नहीं है। अधिकारी सत्पात्र ही इस क्षेत्र में कुछ अनुसंधान कर सकते हैं और उपलब्ध प्रतिफलों से जनसामान्य को लाभान्वित करा सकते हैं।

गायत्री के दोनों ही प्रयोग हैं। वह योग भी है और तन्त्र भी। उससे आत्म-दर्शन और ब्रह्मप्राप्ति भी होती है तथा सांसारिक उपार्जन-संहार भी। गायत्री-योग दक्षिण मार्ग है- उस मार्ग से हमारे आत्म-कल्याण का उद्देश्य पूरा होता है। दक्षिण मार्ग का आधार यह है कि -"विश्वव्यापी ईश्वरीय शक्तियों को आध्यात्मिक चुम्बकत्व से खींच कर अपने में धारण किया जाय, सतोगुण को बढ़ाया जाय और अन्तर्जगत् में अवस्थित पञ्चकोष, सप्त प्राण, चेतना चतुष्टय, षटचक्र एवं अनेक उपचक्रों, मातृकाओं, ग्रन्थियों, भ्रमरों, कमलों, उपत्यिकाओं को जागृत करके आनन्ददायिनी अलौकिक शक्तियों का आविर्भाव किया जाय।"

गायत्री-तन्त्र वाम मार्ग है- उससे सांसारिक वस्तुएँ प्राप्त की जा सकती हैं और किसी का नाश भी किया जा सकता है। वाम मार्ग का आधार यह है कि- " दूसरे प्राणियों के शरीरों में निवास करने वाली शक्ति को इधर से उधर हस्तान्तरित करके एक जगह विशेष मात्रा में शक्ति संचित कर ली जाय और उस शक्ति का मनमाना उपयोग किया जाय।"

तन्त्र का विषय गोपनीय है, इसलिए गायत्री तन्त्र के ग्रन्थों में ऐसी अनेकों साधनाएँ प्राप्त होती हैं, जिनमें धन, सन्तान, स्त्री, यश, आरोग्य, पद-प्राप्ति, रोग-निवारण, शत्रु नाश, पाप-नाश, वशीकरण आदि लाभों का वर्णन है और संकेत रूप से उन साधनाओं का एक अंश बताया गया है। परन्तु यह भली प्रकार स्मरण रखना चाहिये कि इन संक्षिप्त संकेतों के पीछे एक भारी कर्मकाण्ड एवं विधि-विधान है। वह पुस्तकों में नहीं, वरन् अनुभवी साधना सम्पन्न व्यक्तियों से प्राप्त होता है, जिन्हें सद्गुरु कहते हैं।

❑

# सर्वफलप्रदा उपास्य सर्वश्रेष्ठ गायत्री

भारतीय धर्म के उपासना विज्ञान में गायत्री को सर्वोपरि माना गया है और सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। इसके कई कारण हैं, एक तो यह कि इस महामंत्र के अक्षरों में बीज रूप में मानवी संस्कृति एवं आदर्शवादिता के सारे सिद्धान्त सन्निहित हैं। इसे विश्व का सबसे छोटा, मात्र २४ अक्षरों का वह ग्रन्थ क़ह सकते हैं, जिसमें धर्म और अध्यात्म का समूचा तत्वज्ञान साररूप से समाविष्ट मिल सकता है। इन अक्षरों की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि जो कुछ मानवी प्रगति एवं सुव्यवस्था के लिए आवश्यक है,वह सब कुछ इसमें समाहित है। यही प्रज्ञा का, विवेकशीलता का मन्त्र है। कहना न होगा कि मनुष्य जीवन की समस्त समस्याएँ दुर्बुद्धि के कारण उत्पन्न होती हैं। संसार पर आये दिन छाये रहने वाले संकट के बादल अशुभ चिंतन के खारे समुद्र में ही उठते हैं। विवेक सर्वोपरि है। सद्बुद्धि से बढ़कर इस संसार में और कुछ नहीं है। यह तथ्य प्रज्ञा की देवी गायत्री को सर्वोपरि ठहराने में सन्निहित है।

गायत्री सद्बुद्धि ही है। इस महामन्त्र में सद्बुद्धि के लिए ईश्वर से प्रार्थना की गई हैं। इसके २४ अक्षरों में २४ अमूल्य शिक्षा - संदेश भरे हुए हैं, वे सद्बुद्धि के मूर्तिमान् प्रतीक हैं। उन शिक्षाओं में वे सभी आधार मौजूद हैं, जिन्हें हृदयंगम करने वाले का सम्पूर्ण दृष्टिकोण शुद्ध हो जाता है और उस भ्रम जन्य अविद्या का नाश हो जाता है, जो आये दिन कोई न कोई कष्ट उत्पन्न करती है। गायत्री महामन्त्र की रचना ऐसे वैज्ञानिक आधार पर हुई है कि उसकी साधना से अपने भीतर छिपे हुए अनेकों गुप्त शक्ति केन्द्र खुल जाते हैं और अन्तस्थल में सात्विकता की निर्झरिणी बहने लगती है। विश्वव्यापी प्राण तत्त्व को अपनी प्रबल चुम्बक शक्ति से खींचकर अन्त: प्रदेश में जमा कर देने की अद्भुत शक्ति गायत्री में मौजूद है। इन सब कारणों से कुबुद्धि का शमन करनें में गायत्री अचूक रामबाण मन्त्र की तरह प्रभावशाली सिद्ध होती है। इस शमन के साथ-साथ अनेकों दु:खों का समाप्त हो जाना भी पूर्णतया निश्चित है। गायत्री प्रकाश की वह अखण्ड ज्योति है जिसके कारण कुबुद्धि का अज्ञानान्धकार दूर होता है और अपनी वही स्वाभाविक स्थिति प्राप्ति हो जाती है, जिसको लेकर आत्मा इस पुण्यमयी धरती माता की परम शान्ति दायक गोदी में किलोल करने आया है।

मानवी सत्ता से लेकर विस्तृत ब्रह्माण्ड में समान रूप से व्याप्त त्रिपदा गायत्री का भुवनेश्वरी रूप सर्व विदित है। गायत्री-बीज 'ॐकार' है। उसकी सत्ता तीनों लोक (भूः-भुवः-स्वः) लोकों में संव्याप्त है। साधक के लिए उसके २४ अक्षर सिद्धियों एवं उपलब्धियों से भरे-पूरे हैं। इन अक्षरों में सन्निहित प्रेरणाओं को अपनाने वाले साधक निश्चित रूप से आप्तकाम बनते हैं और उस तरह खिन्न-उद्विग्न नहीं रहते जिस तरह कि लिप्सा-लालसाओं की अनुपयुक्त कामनाओं की आग में लोग जलते-भुनते हुए शोक-संताप सहते हैं। इस तथ्य को ''रुद्रयामल'' में इस प्रकार प्रकट किया गया है-

**गायत्री त्रिपदा देवी त्र्यक्षरी भुवनेश्वरी।**
**चतुर्विंशाक्षरा विद्या सा चैवाभीष्ट देवता॥**

-रुद्रयामल तंत्र

अर्थात्- ''तीन पद वाली तथा तीन अक्षर (भूः भुर्वःस्वः) युक्त समस्त भुवनों की अधिष्ठात्री २४ अक्षर वाली परा विद्या रूपी गायत्री देवी-सबको इच्छित फल देने वाली है।''

संक्षेप में गायत्री भारतीय धर्म - दर्शन की आत्मा है। उसे परम प्रेरक गुरुमंत्र कहा गया है। गुरु शिक्षा भी देते हैं और सामर्थ्य भी प्रदान करते हैं। गायत्री में सद्ज्ञान की ब्रह्म चेतना और सत्प्रयोजन पूरा कर सकने की प्रचण्ड शक्ति भरी पड़ी है। इसलिए उसे ब्रह्मवर्चस् भी कहते हैं। इस तरह गायत्री के लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है।

## गायत्री महामन्त्र

**ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।**

यह महामन्त्र वेदों में कई-कई बार आया है। ऋग्वेद में ६।६२।१०, सामवेद में २।८।१२, यजुर्वेद वा० सं० में ३।३५-२२।९ -३०। २-३६।३, अथर्व वेद में १९।७१।१ में गायत्री की महिमा विस्तार पूर्वक गाई गई है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में गायत्री मन्त्र का उल्लेख अनेक स्थानों पर है। यथा- ऐतरेय ब्राह्मण ४।३२।२-५।५।६-१३।८, १९।८, कौशीतकी ब्राह्मण २२।३-२६।१०,गोपथ ब्राह्मण १।१।३४, दैवत ब्राह्मण ३।२५, शतपथ ब्राह्मण २।३।४।३९-२३।६।२।९-१४।९।३।११।

तैतरीय सं० १।५।६।४-४।१।१, मैत्रायणी सं० ४।१०।३-१४९।१४।

आरण्यकों में गायत्री का उल्लेख इन स्थानों पर है- तैत्तरीय आरण्यक १ ।१ ।२१० ।२७ ।१, वृहदारण्यक ६ ।३ ।११ ।४ ।८। उपनिषदों में इस महामन्त्र की चर्चा निम्न प्रकरणों में है- नारायण उपनिषद् १५-२, मैत्रेय उपनिषद् ६ ।७ ।३४, जैमिनी उपनिषद् ४। २८ ।१, श्वेताश्वर उपनिषद् ४ ।१८।

सूत्र ग्रंथों में गायत्री का विवेचन निम्न प्रसंगों में आया है- आश्वालायन श्रौत सूत्र ७। ६। ६-८। १। १८, शांखायन श्रौत सूत्र २। १० ।२-१२ ।७-५ ।५ ।२-१० ।६ ।१०-९ ।१६, आपस्तम्भ श्रौत सूत्र ६। १८। १, शांखायन गृह्य सूत्र २। ५ ।१२,७। १९,६। ४। ८, कौशीतकी सूत्र ९१। ६, खगटा गृह्य सूत्र २। ४। २१, आपस्तम्भ गृह्य सूत्र २। ४। २१, बोधायन ध० शा० २। १०। १७। १४, मान०ध०शा० २ ।७७, ऋग्विधान १। १२। ५ मान० गृ० सू० १। २। ३-४। ४।८-५ ।२।

## गायत्री का शीर्ष भाग : ॐ भूर्भुवः स्वः

गायत्री, वैदिक संस्कृत का एक छन्द है जिसमें आठ-आठ अक्षरों के तीन चरण-कुल २४ अक्षर होते हैं। गायत्री शब्द का अर्थ है- प्राण-रक्षक। 'गय' कहते हैं प्राण को, 'त्री' कहते हैं त्राण-संरक्षण करने वाली को। जिस शक्ति का आश्रय लेने पर प्राण का, प्रतिभा का, जीवन का संरक्षण होता है उसे गायत्री कहा जाता है। और भी कितने अर्थ शास्त्रकारों ने किये हैं। इन सब अर्थों पर विचार करने पर यह कहा जा सकता है कि यह छोटा-सा मन्त्र भारतीय संस्कृति, धर्म एवं तत्वज्ञान का बीज है। इसी के थोड़े से अक्षरों में सन्निहित प्रेरणाओं की व्याख्या स्वरूप चारों वेद बने। 'ॐ भूर्भुवः स्वः' यह गायत्री का शीर्ष कहलाता है। शेष आठ-आठ अक्षरों के तीन चरण हैं जिनके कारण उसे त्रिपदा कहा गया है। एक शीर्ष , तीन चरण, इस प्रकार उसके चार भाग हो गये, इन चारों का रहस्य एवं अर्थ चारों वेदों में है। कहा जाता है कि ब्रह्माजी ने अपने चार मुखों से गायत्री के इन चारों भागों का व्याख्यान चार वेदों के रूप में दिया। इस प्रकार उनका नाम वेदमाता पड़ा। 'गायत्री तत्वबोध'-श्लोक ४-७ में कहा गया है-

**ॐकारस्तु परंब्रह्म व्याप्तो ब्रह्माण्डमण्डले।**
**यः स एवोच्यते शब्द ब्रह्माथो नादब्रह्म च ॥**
**सर्वेषां वेदमन्त्राणां पूर्वं चोच्चारणादयम्।**
**ॐकारः कथ्यतें सर्वैः पाठान्तेऽपि च सर्वदा॥**

अर्थात्-ॐकार परब्रह्म है। वह निखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त है, उसे शब्द ब्रह्म और नाद ब्रह्म के नाम से भी जाना जाता है। प्रत्येक वेदमन्त्र के उच्चारण के

पूर्व तथा पाठ-सामाप्ति के बाद इसे लगाया जाता है।

**ॐकारस्यैव वर्णेभ्यस्त्रिभ्यस्तु व्याहृतित्रयम्।**
**उत्पन्नं यच्च गायत्र्यामोङ्कारान्ते प्रयुज्यते॥**
**भूर्भुवः स्वरयं शीर्षो भागो मन्त्रस्य विद्यते।**
**पृथक्त्वेऽप्यस्य मन्त्रस्य प्रारम्भेऽस्ति नियोजनम्॥**

अर्थात्-ॐकार के तीन अक्षरों (अ,उ,म्) से तीन व्याहृतियाँ उत्पन्न हुई। उन्हें भी गायत्री महामंत्र के साथ ॐ के उपरान्त जोड़ा जाता है। 'ॐ भूर्भुवः स्वः' यह गायत्री-मंत्र का शीर्ष भाग है। पृथक होते हुए भी इसका मंत्र के आदि में नियोजन होता है।

शब्दों की दृष्टि से गायत्री महामन्त्र का भावार्थ सरल है-

ॐ (परमात्मा) भूः (प्राण स्वरूप) भुवः (दुःख नाशक) स्वः (सुख स्वरूप) तत् (उस) सवितुः (तेजस्वी) वरेण्यं (श्रेष्ठ) भर्गः (पाप नाशक) देवस्य (दिव्य) धीमहि (धारण करें) धियो (बुद्धि) यः (जो) नः (हमारी) प्रचोदयात् (प्रेरित करें)।

अर्थात्-उस सुख स्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पाप नाशक, प्राण स्वरूप ब्रह्म को हम धारण करते हैं, जो हमारी बुद्धि को (सन्मार्ग की ओर) प्रेरणा देता है।

## ॐ - प्रणव

ॐकार को ब्रह्म कहा गया है। वह परमात्मा का स्वयं सिद्ध नाम है। योग विद्या के आचार्य समाधि अवस्था में पहुँच कर जब ब्रह्म का साक्षात्कार करते हैं, तो उन्हें प्रकृति के उच्च अन्तराल में ध्वनि होती हुई परिलक्षित होती है। जैसे घड़ियाल के चोट मार देने से वह बहुत देर तक झनझनाती रहती है, इसी प्रकार बार-बार एक ही कम्पन उन्हें सुनाई देते हैं। यह नाद 'ॐ' ध्वनि से मिलता-जुलता होता है। उसे ही ऋषियों ने ईश्वर का स्वयंसिद्ध नाम बताया है और उसे 'शब्द' कहा है।

इस शब्द ब्रह्म से रूप बनता है। इस शब्द के कम्पन सीधे चलकर दाहिनी ओर मुड़ जाते हैं। शब्द अपने केन्द्र की धुरी पर भी घूमता है, इस प्रकार वह चारों तरफ घूमता रहता है। इस भ्रमण, कम्पन, गति और मोड़ के आधार पर स्वस्तिक बनता है, यह स्वस्तिक ॐकार का रूप है।

ॐकार को प्रणव भी कहते हैं। यह सब मंत्रों का सेतु है, क्योंकि इसी से समस्त शब्द और मंत्र बनते हैं। प्रणव से व्याहृतियाँ उत्पन्न हुई और व्याहृतियों में से वेदों का आविर्भाव हुआ।

प्रणव की श्रेष्ठता को ध्यान में रखते हुए आचार्यों ने समस्त श्रेष्ठ कर्मों में ओंकार को प्राथमिकता देने का विचार किया है। यह मंत्रों का सेतु है, इस पुल पर चढ़कर मंत्र मार्ग को पार किया जा सकता है। बिना आधार के, नाव - पुल आदि अवलम्बन के किसी बड़े जलाशय को पार करना जिस प्रकार संभव नहीं, उसी प्रकार मंत्रों की सफलता के लिए ,बिना प्रणव के सफलता मिलना दुस्तर है। इसलिए आमतौर से सब मंत्रों में और विशेष रूप से गायत्री मंत्र में सर्वप्रथम प्रणव का उच्चारण आवश्यक बताया गया है।

**क्षरन्ति सर्वा चैवं यो जुहोति यजति क्रियाः।**
**अक्षरमक्षयं ज्ञेयं ब्रह्म चैव प्रजापतिः॥**

अर्थात् बिना ॐ के समस्त कर्म, यज्ञ, जप आदि निष्फल होते हैं। ॐ को अविनाशी, प्रजापति ब्रह्म जानना चाहिये।

**प्रणव मंत्राणां सेतुः।**

-व्यास

प्रणव मंत्रों का पुल है अर्थात् मंत्र पार करने के लिए प्रणव की आवश्यकता अपरित्याज्य है।

**यदोंकारमकृत्वा किंचिदारभ्यते तद्वज्रो भवति।**
**तस्माद्वज्रभयाद्भीत ओंकारं पूर्वमारभेदिति॥**

अर्थात्-बिना ओंकार का उच्चारण किये, सभी कार्य वज्रवत् अर्थात् निष्फल हो जाते हैं। अतः वज्र-भय से डर कर प्रथम ॐ का उच्चारण करें।

गायत्री मंत्र में सबसे प्रथम ॐ को इसलिए नियोजित किया है कि इस शक्ति की धारा को इस पुल पर चढ़कर पार किया जा सके। ॐ जिन अर्थों का बोधक है उन अर्थों की, गुणों की, आदर्शों की स्फुरणा साधक की अन्तर्भूमि में होती है, फलस्वरूप आध्यात्मिक साधना का मार्ग सुगम हो जाता है। ॐ की शिक्षायें यदि साधक के मन पर जम जावें तो उसका कल्याण होने में देर नहीं लगती है।

ॐ शब्द ब्रह्म है। गायत्री ब्रह्म की ही महाशक्ति 'ब्रह्म' है। नाद, बिन्दु और कला की त्रिपुटी प्रणव में सन्निहित है। त्रिपदा गायत्री के तीन चरणों में उस त्रिपुटी का जब सम्मिलन होता है तो अपार आनन्द की अनुभूति होती है। दक्षिणमार्गी और वाममार्गी अपने-अपने ढंग से इन आनन्दों का आस्वादन करते हैं।

## तीन व्याहृतियाँ ( भूः भुवः स्वः )

गायत्री में ॐकार के पश्चात् 'भूः भुवः स्वः' यह तीन व्याहृतियाँ आती हैं। इन तीनों व्याहृतियों का त्रिक् अनेकार्थ बोधक है, वे अनेकों भावनाओं का, अनेकों दिशाओं का संकेत करती हैं, अनेकों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करती हैं।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन तीन उत्पादक, पोषक, संहारक शक्तियों का नाम भूः भुवः स्वः है। सत्, रज, तम, इन तीनों गुणों को भी त्रिविध गायत्री कहा गया है। भूः को ब्रह्म, भुवः को प्रकृति और स्वः को जीव भी कहा जाता है। अग्नि, वायु और सूर्य इन प्रधान देवताओं का प्रतिनिधित्व तीन व्याहृतियाँ करती हैं। तीनों लोकों का भी इनमें संकेत है। इस प्रकार के अनेकों संकेत व्याहृतियों के त्रिक् में भरे हुए हैं।

यह तीन व्याहृतियाँ जिन तीन क्षेत्रों पर प्रकाश डालती हैं, वे तीनों ही अत्यन्त विचारणीय एवं ग्रहणीय हैं। ईश्वर, जीव, प्रकृति के गुंथन की गुत्थी को व्याहृतियाँ ही सुलझाती हैं। भूः लोक, भुवःलोक और स्वः लोक यद्यपि लोक विशेष भी हैं, पर अध्यात्म प्रयोजनों में 'भूः' स्थूल शरीर के लिए, 'भुवः' सूक्ष्म शरीर के लिए और 'स्वः' कारण शरीर के लिए प्रयुक्त होता है।' बाह्य जगत् और अन्तर्जगत् के तीनों लोकों में ॐकार अर्थात् परमेश्वर सर्वव्याप्त है। व्याहृतियों में इसी तथ्य का प्रतिपादन है। इसमें विशाल विश्व को विराट् ब्रह्म के रूप में देखने की वही मान्यता है, जिसे भगवान् ने अर्जुन को अपना विराट् रूप दिखाते हुए हृदयंगम कराया था। ॐ व्याहृतियों का समन्वित शीर्ष भाग इसी अर्थ और इसी प्रकाश को प्रकट करता है।

एक ॐ की तीन संतान हैं-(१) भूः (२) भुवः (३) स्वः। इन व्याहृतियों से त्रिपदा गायत्री का एक-एक चरण बना है। उसके एक-एक चरण में तीन पद हैं। इस प्रकार यह त्रिगुणित सूक्ष्म परम्पराएँ चलती हैं। इनके रहस्यों को जानकार तत्वज्ञानी लोग निर्वाण के अधिकारी बनते हैं। 'ॐ भूर्भुवः स्वः' इस शीर्ष भाग के पश्चात् गायत्री मंत्र प्रारंभ होता है। गायत्री तत्त्वबोध में स्पष्ट उल्लेख है-

**अस्यानन्तरमेषोऽस्ति प्रारब्धो मंत्र उत्तमः।**
**विद्यन्ते यत्र वर्णास्तु चतुर्विंशतिसंख्यकाः॥**

अर्थात्- इसके उपरान्त उत्तम गायत्री मंत्र प्रारंभ होता है। गायत्री के चौबीस अक्षर हैं।

## गायत्री के चौबीस अक्षर

गायत्री महामंत्र में अक्षरों की गणना इस प्रकार की जाती है-

**तदादिवर्णगानर्धान् वर्णानगण्यस्तु तान्।**
**'ण्यं' वर्णस्य च द्वौ भागौ 'णि' 'यं' कर्तुं च छान्दसे॥**
**इयादिपूरणे सूत्रे ध्वनिभेदतया पुनः।**
**चतुर्विंशतिरेवं च वर्णा मंत्रे भवन्त्यतः॥**

अर्थात्- गणना में 'तत्' आदि वर्णों में अर्धाक्षरों को नगण्य मानकर, उन्हें एक ही अक्षर गिना जाता है। ऐसी स्थिति में ध्वनि भेद के आधार पर छन्दः प्रयोग में 'इयादिपूरणे' सूत्रानुसार 'ण्यं' वर्ण को 'णि' और 'यं' इन दो भागों में बाँट लिया जाता है। इस प्रकार चौबीस की संख्या पूरी हो जाती है-

१-तत्, २-स, ३-वि, ४-तु, ५-र्व, ६-रे, ७-णि, ८-यं, ९-भ, १०-र्गो, ११-दे, १२-व, १३-स्य, १४-धी, १५-म, १६-हि, १७-धि, १८-यो, १९-यो, २०-नः, २१-प्र, २२-चो, २३-द, २४-यात्।

## गायत्री की २४ शक्तियाँ

गायत्री मंत्र में चौबीस अक्षर हैं। तत्त्वज्ञानियों ने इन अक्षरों में बीज रूप में विद्यमान उन शक्तियों को पहचाना जिन्हें चौबीस अवतार, चौबीस ऋषि, चौबीस शक्तियाँ तथा चौबीस सिद्धियाँ कहा जाता है। देवर्षि, ब्रह्मर्षि तथा राजर्षि इसी उपासना के सहारे उच्च पदासीन हुए हैं। 'अणोरणीयान महतो महीयान' यही महाशक्ति है। छोटे से छोटा चौबीस अक्षर का कलेवर, उसमें ज्ञान और विज्ञान का सम्पूर्ण भाण्डागार भरा हुआ है। सृष्टि में ऐसा कुछ भी नहीं, जो गायत्री में न हो। उसकी उच्चस्तरीय साधनाएँ कठिन और विशिष्ट भी हैं, पर साथ ही सरल भी इतनी हैं कि उन्हें हर स्थिति में व्यक्ति बड़ी सरलता और सुविधाओं के साथ सम्पन्न कर सकता है। इसी से उसे सार्वजनीन और सार्वभौम माना गया। नर-नारी, बाल-वृद्ध बिना किसी जाति व सम्प्रदाय भेद के उसकी आराधना प्रसन्नता पूर्वक कर सकते हैं और अपनी श्रद्धा के अनुरूप लाभ उठा सकते हैं।

'गायत्री संहिता' में गायत्री के २४ अक्षरों की शाब्दिक संरचना रहस्ययुक्त बतायी गयी है और उन्हें ढूँढ़ निकालने के लिए विज्ञजनों को प्रोत्साहित किया गया है। शब्दार्थ की दृष्टि से गायत्री की भाव-प्रक्रिया में कोई रहस्य नहीं है। सद्बुद्धि की प्रार्थना उसका प्रकट भावार्थ एवं प्रयोजन है। यह सीधी-सादी सी

बात है जो अन्यान्य वेदमंत्रों तथा आप्त वचनों में अनेकानेक स्थानों पर व्यक्त हुई है। अक्षरों का रहस्य इतना ही है कि साधक को सत्प्रवृत्तियाँ अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। इस प्रेरणा को जो जितना ग्रहण कर लेता है, वह उसी अनुपात से सिद्ध पुरुष बन जाता है। कहा गया है-

**चतुर्विंशतिवर्णेर्या गायत्री गुम्फिता श्रुतौ।**
**रहस्ययुक्तं तत्रापि दिव्यै रहस्यवादिभिः॥**

गायत्री संहिता -८५

अर्थात्-वेदों में जो गायत्री चौबीस अक्षरों में गूँथी हुई है, विद्वान् लोग इन चौबीस अक्षरों के गूँथने में बड़े-बड़े रहस्यों को छिपा बतलाते हैं।

गायत्री की २४ शक्तियों की उपासना करने के लिए शारदा तिलकतंत्र का मार्गदर्शन इस प्रकार है-

**ततः षडङ्गान्यभ्यर्चेत् केसरेषु यथाविधिः।**
**प्रह्लादिनी प्रभां पश्चान्नित्यां विश्वम्भरां पुनः॥**
**विलासिनी प्रभावत्यौ जयां शांतिं यजेत्पुनः।**
**कान्तिं दुर्गासरस्वत्यौ विश्वरूपां ततः परम्॥**
**विशालसंज्ञितामीशां व्यापिनीं विमलां यजेत्।**
**तमोऽपहारिणीं सूक्ष्मां विश्वयोनिं जयावहाम्॥**
**पद्मालयां परां शोभां पद्मरूपां ततोऽर्चयेत्।**
**ब्राह्म्याद्याः सारुणा बाह्यं पूजयेत् प्रोक्तलक्षणाः॥**

-शारदा० २१।२३ से २६

अर्थात्-पूजन उपचारों से षडंग पूजन के बाद प्रह्लादिनी, प्रभा, नित्या तथा विश्वम्भरा का यजन (पूजन) करें। पुनः विलासिनी, प्रभावती, जया और शान्ति का अर्चन करना चाहिए। इसके बाद कान्ति, दुर्गा, सरस्वती और विश्वरूपा का पूजन करें। पुनः विशाल संज्ञा वाली-ईशा (विशालेशा), 'व्यापिनी' और 'विमला' का यजन करना चाहिए। इसके अनन्तर 'तमोपहारिणी', 'सूक्ष्मा', 'विश्वयोनि', 'जयावहा', 'पद्मालया', 'पराशोभा' तथा पद्मरूपा आदि का यजन करें। 'ब्राह्मी' 'सारुणा' का बाद में पूजन करना चाहिए।

गायत्री के चौबीस अक्षरों में जो पृथक-पृथक शक्तियाँ हैं, उनके नाम शास्त्रकारों ने प्राचीन काल की आध्यात्मिक भाषा में बतलाये हैं। उस समय हर शक्ति को एक देवी के रूप में अलंकृत किया जाता था। देवी का अर्थ अब तो

अन्तरिक्ष वासिनी अदृश्यं महिला विशेष मानने का भ्रम चल पड़ा है, पर प्राचीन काल में देवी शब्द दिव्य शक्तियों के लिए ही प्रयोग किया जाता था। गायत्री की २४ शक्तियों का शास्त्रीय उल्लेख इस प्रकार है-

**वर्णानां शक्तयः काश्च ताः शृणुष्व महामुने।**
**वामदेवी प्रिया सत्या विश्वा भद्रविलासिनी॥**
**प्रभावती जया शान्ता कान्ता दुर्गा सरस्वती।**
**विद्रुमा च विशालेशा व्यापिनी विमला तथा॥**
**तमोऽपहारिणी सूक्ष्मा विश्वयोनिर्जया वशा।**
**पद्मालया परा शोभा भद्रा च त्रिपदा स्मृता॥**
**चतुर्विंशतिवर्णानां शक्तयः समुदाहृताः॥**

-देवी भागवत-१२।२।१-४

अर्थात् - हे मुनि! अब सुनो कि गायत्री के २४ अक्षरों में कौन-कौन २४ शक्तियाँ भरी पड़ी हैं- (१) वामदेवी (२)प्रिया (३) सत्या (४) विश्वा (५) भद्र विलासिनी (६) प्रभावती (७) शान्ता (८) कान्ता (९) दुर्गा (१०) सरस्वती (११) विद्रुमा (१२) विशालेशा (१३) व्यापिनी (१४) विमला (१५) तमोपहारिणी (१६) सूक्ष्मा (१७) विश्वयोनि (१८) जया (१९) वशा (२०) पद्मालया (२१) परा (२२) शोभा (२३) भद्रा (२४) त्रिपदा।

अन्यान्य ग्रंथों में गायत्री के एक-एक अक्षर के साथ जुड़ी हुई शक्तियों का वर्णन कई प्रकार से हुआ है। कहीं उन्हें शक्ति, कहीं मातृका, कहीं कला आदि नामों से संबोधित किया गया है। गायत्री मंत्र के अक्षर एवं उनसे संबंधित कलाओं का वर्णन इस प्रकार मिलता है-

## २४ अक्षरों से संबंधित २४ कलाएँ

गायत्री के चौबीस अक्षरों से संबंधित कलाएँ एवं मातृकाएँ इस प्रकार हैं-

(१) तापिनी (२) सकला (३) विश्वा (४) तुष्टा (५) वरदा (६) रेवती (७) सूक्ष्मा (८) ज्ञाना (९) भर्गा (१०) गोमती (११) दर्विका (१२) वरा (१३) सिंहिका (१४) ध्येया (१५) मर्यादा (१६) स्फुरा (१७) बुद्धि (१८) योगमाया (१९) योगान्तरा (२०) धरित्री (२१) प्रभवा (२२) कुला (२३) दृष्या (२४) ब्राह्मी।

## २४ अक्षरों से संबंधित २४ मातृकाएँ

(१) चन्द्रकेश्वरी (२) अजतवला (३) दुरितारि (४) कालिका (५) महाकाली (६) श्यामा (७) शान्ता (८) ज्वाला (९) तारिका (१०) अशोका (११) श्रीवत्सा (१२) चण्डी (१३) विजया (१४) अंकुशा (१५) पन्नगा (१६)निर्वाक्षी (१७) वेला (१८) धारिणी (१९) प्रिया (२०) नरदत्ता (२१) गन्धारी (२२) अम्बिका (२३) पद्मावती (२४) सिद्धायिका।

सामान्य दृष्टि से कलाएँ और मातृकाएँ अलग-अलग प्रतीत होती हैं, किन्तु तात्विक दृष्टि से देखने पर उन दोनों का अन्तर समाप्त हो जाता है। उन्हें श्रेष्ठता की सामर्थ्य कह सकते हैं और उनके नामों के अनुरूप उनके द्वारा उत्पन्न होने वाले सत्परिणामों का अनुमान लगा सकते हैं।

## गायत्री के २४ अक्षर २४ दिव्य प्रकाश स्तम्भ

गोपथ ब्राह्मण में गायत्री के २४ अक्षरों को २४ स्तम्भों का दिव्य तेज बताया गया है। समुद्र में जहाजों का मार्गदर्शन करने के लिए जहाँ-तहाँ प्रकाश स्तम्भ खड़े रहते हैं। उनमें जलने वाले प्रकाश को देखकर नाविक अपने जलपोत को सही रास्ते से ले जाते हैं और चट्टानों से टकराने एवं कीचड़ आदि में धँसने से बच जाते हैं। इसी प्रकार गायत्री के २४ अक्षर २४ प्रकाश स्तम्भ बनकर प्रजा की जीवन नौका को प्रगति एवं समृद्धि के मार्ग पर ठीक तरह चलते रहने की प्रेरणा करते हैं। आपत्तियों से बचाते हैं और अनिश्चितता को दूर करते हैं।

गोपथ के अनुसार गायत्री चारों वेदों की प्राण, सार, रहस्य एवं तन है। साम संगीत का यह रथन्तर आत्मा के उल्लास को उद्देलित करता है। जो इस तेज को अपने में धारण करता है, उसकी वंश परम्परा तेजस्वी बनती चली जाती है। उसकी पारिवारिक संतति और अनुयायियों की श्रृंखला में एक से एक बढ़कर तेजस्वी, प्रतिभाशाली उत्पन्न होते चले जाते हैं। श्रुति कहती है-

**तेजो वै गायत्री छन्दसां रथन्तरं साम्नाम् तेजश्चतुर्विंशस्ते माना तेज एवं तत्सम्यक् दधाति पुत्रस्थ पुत्रस्तेजस्वी भवति॥**

-गोपथ ब्राह्मण

अर्थात्-गायत्री सब वेदों का तेज है। सामवेद का यह रथन्तर छन्द ही २४ स्तम्भों का यह दिव्य तेज है। इस तेज को धारण करने वाले की वंश परम्परा तेजस्वी होती है।

## गायत्री के २४ अक्षर २४ प्रत्यक्ष देवता

गायत्री मंत्र के २४ अक्षरों को २४ देवताओं का शक्ति - बीज मंत्र माना गया है। प्रत्येक अक्षर का एक देवता है। प्रकारान्तर से इस महामंत्र को २४ देवताओं का एक संघ समुच्चय या संयुक्त परिवार कह सकते हैं। इस परिवार के सदस्यों की गणना के विषय में शास्त्र बतलाते हैं-

गायत्री मंत्र का एक-एक अक्षर एक-एक देवता का प्रतिनिधित्व करता है। इन २४ अक्षरों की शब्द शृंखला में बँधे हुए २४ देवता माने गये हैं-

**गायत्र्या वर्णमेकक साक्षात देवरूपकम्।**
**तस्मात् उच्चारण तस्य त्राणयेव भविष्यति॥**

-गायत्री संहिता

अर्थात्-गायत्री का एक-एक अक्षर साक्षात् देव स्वरूप है। इसलिए उसकी आराधना से उपासक का कल्याण ही होता है।

**दैवतानि शृणु प्राज्ञ तेषामेवानुपूर्वशः।**
**आग्नेयं प्रथमं प्रोक्तं प्राजापत्यं द्वितीयकम्॥**
**तृतीय च तथा सोम्यमीशानं च चतुर्थकम्।**
**सावित्रं पञ्चमं प्रोक्तं षष्टमादित्यदैवतम्॥**
**वार्हस्पत्यं सप्तमं तु मैत्रावरुणमष्टमम्।**
**नवम भगदैवत्यं दशमं चार्यमैश्वरम्॥**
**गणेशमेकादशकं त्वाष्टं द्वादशकं स्मृतम्।**
**पौष्णं त्रयोदशं प्रोक्तमैद्राग्नं च चतुर्दशम्॥**
**वायव्यं पंचदशकं वामदेव्यं च षोडशम्।**
**मैत्रावरुण दैवत्यं प्रोक्तं सप्तदशाक्षरम्॥**
**अष्ठादशं वैश्वदेवमूनविंशंतुमातृकम्।**
**वैष्णवं विंशतितमं वसुदैवतमीरितम्॥**
**एकविंशतिसंख्याकं द्वाविंशं रुद्रदैवतम्।**
**त्रयोविशं च कौवेरेमाश्विने तत्वसंख्यकम्॥**
**चतुर्विंशतिवर्णानां देवतानां च संग्रहः।**

-गायत्री तंत्र प्रथम पटल

अर्थात्-हे प्राज्ञ! अव गायत्री के २४ अक्षरों में विद्यमान २४ देवताओं के नाम सुनो-

(१) अग्नि (२) प्रजापति (३) चन्द्रमा (४) ईशान (५) सविता (६) आदित्य (७) बृहस्पति (८) मित्रावरुण (९) भग (१०) अर्यमा (११) गणेश (१२) त्वष्टा (१३) पूषा (१४) इन्द्राग्नि (१५) वायु (१६) वामदेव (१७) मैत्रावरूण (१८) विश्वेदेवा (१९) मातृक (२०) विष्णु (२१) वसुगण (२२) रूद्रगण (२३) कुबेर (२४) अश्विनीकुमार।

गायत्री ब्रह्मकल्प में देवताओं के नामों का उल्लेख इस तरह से किया गया है-

(१) अग्नि (२) वायु (३) सूर्य (४) कुबेर (५) यम (६) वरुण (७) बृहस्पति (८) पर्जन्य (९) इन्द्र (१०) गन्धर्व (११) प्रोष्ठ (१२) मित्रावरूण (१३) त्वष्टा (१४) वासव (१५) मरूत ( १६) सोम (१७) अंगिरा (१८) विश्वेदेवा (१९) अश्विनीकुमार (२०) पूषा (२१) रूद्र (२२) विद्युत (२३) ब्रह्म (२४)अदिति।

## गायत्री के २४ अक्षर २४ ऋषि

गायत्री के समग्र विनियोग में सविता देवता, विश्वामित्र ऋषि एवं गायत्री छन्द का उल्लेख किया गया है, परन्तु उसके वर्गीकरण में प्रत्येक अक्षर एक स्वतंत्र शक्ति बन जाता है। हर अक्षर अपने आप में एक मंत्र है। ऐसी दशा में २४ देवता, २४ ऋषि एवं २४ छन्दों का उल्लेख होना भी आवश्यक है। तत्वदर्शियों ने वैसा किया भी है। गायत्री विज्ञान की गहराई में उतरने पर इन विभेदों का स्पष्टीकरण होता है। नारंगी ऊपर से एक दीखती है, पर छिलका उतारने पर उसके खण्ड घटक स्वतंत्र इकाइयों के रूप में भी दृष्टिगोचर होते हैं। गायत्री को नारंगी की उपमा दी जाय तो उसके अन्तराल में चौबीस अक्षरों के रूप में २४ खण्ड घटकों के दर्शन होते हैं। जो विनियोग एक समय गायत्री मंत्र का होता है, वैसा ही प्रत्येक अक्षर का भी आवश्यक होता है। चौबीस अक्षरों के लिए चौबीस विनियोग बनने पर उनके २४ देवता २४ ऋषि एवं २४ छन्द भी बन जाते हैं।

ऋषियों और देवताओं का परस्पर समन्वय है। ऋषियों की साधना से विष्णु की तरह सुप्तावस्था में पड़ी रहने वाली देवसत्ता को जाग्रत होने का अवसर मिलता है। देवताओं के अनुग्रह से ऋषियों को उच्चस्तरीय वरदान मिलते हैं। वे सामर्थ्यवान् बनते हैं और स्व- पर कल्याण की महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करते हैं।

ऋषि सद्गुण हैं और देवता उनके प्रतिफल। ऋषि को जड़ और देवता को वृक्ष कहा जा सकता है। ऋषित्व और देवत्व के संयुक्त प्रभाव का परिणाम फल-सम्पदा के रूप में सामने आता है। ऋषि लाखों हुए हैं और देवता तो करोड़ों तक बताये जाते हैं। ऋषि पृथ्वी पर और देवता स्वर्ग में रहने वाले माने जाते हैं। स्थूल दृष्टि से दोनों के बीच ऐसा कोई तारतम्य नहीं है, जिससे उनकी संख्या समान ही रहे। उस असमंजस का निराकरण गायत्री के २४ अक्षरों से सम्बद्ध ऋषि एवं देवताओं से होता है। हर सद्गुण का विशिष्ट परिणाम होना समझ में आने योग्य बात है। यों प्रत्येक सद्गुण परिस्थिति के अनुसार अनेकानेक सत्परिणाम प्रस्तुत कर सकता है, फिर भी यह मान कर ही चलना होगा कि प्रत्येक सत्प्रवृत्ति की अपनी विशिष्ट स्थिति होती है और उसी के अनुरूप अतिरिक्त प्रतिक्रिया भी होती है। ऋषि रूपी पुरुषार्थ से देवता रूपी वरदान संयुक्त रूप से जुड़े रहने की बात हर दृष्टि से समझी जाने योग्य है।

मूर्धन्य ऋषियों की गणना २४ है। इसका उल्लेख गायत्री तंत्र में इस प्रकार मिलता है-

**वामदेवोऽत्रिर्वसिष्ठः शुक्रः कण्वः पराशरः।**
**विश्वामित्रो महातेजाः कपिलः शौनको महान्॥ १३॥**
**याज्ञवल्क्या भरद्वाजो जमदग्निस्तपोनिधिः।**
**गौतमो मुद्गलश्चैव वेदव्यासश्च लोमशः॥ १४॥**
**अगस्त्यः कौशिको वत्सः पुलस्त्यो मांडुकस्तथा।**
**दुर्वासास्तपसां श्रेष्ठो नारदः कश्यपस्तथा॥ १५॥**
**इत्येते ऋषयः प्रोक्ता वर्णानां क्रमशोमुने।**

– गायत्री तंत्र प्रथम पटल

अर्थात्-गायत्री के २४ अक्षरों के द्रष्टा २४ ऋषि यह हैं-(१) वामदेव (२) अत्रि (३) वशिष्ठ (४) शुक्र (५) कण्व (६) पाराशर (७) विश्वामित्र (८) कपिल (९) शौनक (१०) याज्ञवल्क्य (११) भरद्वाज (१२) जमदग्नि (१३) गौतम (१४) मुद्गल (१५) वेदव्यास (१६) लोमश (१७) अगस्त्य (१८) कौशिक (१९) वत्स (२०) पुलस्त्य (२१) माण्डूक (२२) दुर्वासा (२३) नारद (२४) कश्यप।

इन २४ ऋषियों को सामान्य जन-जीवन में जिन सत्प्रवृत्तियों के रूप में जाना जा सकता है, वे यह हैं-

(१) प्रज्ञा (२) सृजन (३) व्यवस्था (४) नियंत्रण (५) सद्ज्ञान (६) उदारता (७) आत्मीयता (८) आस्तिकता (९) श्रद्धा (१०) शुचिता (११) संतोष (१२) सहृदयता (१३) सत्य (१४) पराक्रम (१५) सरसता (१६) स्वावलम्बन (१७) साहस (१८) ऐक्य (१९) संयम (२०) सहकारिता (२१) श्रमशीलता (२२) सादगी (२३) शील (२४) समन्वय। प्रत्यक्ष ऋषि यही २४ हैं।

## गायत्री के २४ अक्षर २४ छन्द

उपरोक्त ऋषियों की कार्य पद्धति छन्द हैं। मोटे रूप से इसे उनकी उपासना में प्रयुक्त होने वाले मंत्रों की उच्चारण विधि-स्वर संहिता कह सकते हैं। सामवेद में मंत्र विद्या के महत्त्वपूर्ण आधार उच्चारण विधान-स्वर संकेतों का विस्तारपूर्वक विधान, निर्धारण मिलता है। प्रत्येक वेद मंत्र के साथ उदात्त-अनुदात्त-त्वरित के स्वर संकेत लिखे मिलते हैं। यह जप एवं पाठ प्रक्रिया का सामान्य विधान हुआ। पर यह वर्णन भी बालबोध जैसा ही है। वस्तुतः छन्द उस साधना प्रक्रिया को कहते हैं, जिसमें प्रगति के लिए समग्र विधि-विधानों का समावेश हो।

साधना की विधियाँ वैदिकी भी हैं और तांत्रिकी भी। व्यक्ति विशेष की स्थिति के अनुरूप उनके क्रम-उपक्रम में अन्तर भी पड़ता है। किस स्तर का व्यक्ति किस प्रयोजनों के लिए, किस स्थिति में क्या साधना करे, इसका एक स्वतंत्र शास्त्र है। इसका स्पष्ट निर्देश ग्रंथ रूप में करा सकना कठिन है। इस प्रक्रिया का निर्धारण अनुभवी मार्गदर्शक की सूक्ष्म दृष्टि पर निर्भर है। रोगों के निदान और उनके उपचार का वर्णन चिकित्सा ग्रंथों में विस्तार पूर्वक मिल जाता है। इतने पर भी अनुभवी चिकित्सक द्वारा रोगी की विशेष स्थिति को देखते हुए उपचार का विशिष्ट निर्धारण करने की आवश्यकता बनी ही रहती है। यह चिकित्सक की स्वतंत्र सूझबूझ पर ही निर्भर है। इसके लिए कोई लक्ष्मण रेखा खिंच नहीं सकती, जिसके अनुसार चिकित्सक पर यह प्रतिबंध

लगे कि वह अमुक स्थिति के रोगी का उपचार अमुक प्रकार करने के लिए ही प्रतिबंधित है।

चिकित्सक की सूझ-बूझ को मौलिक कहा जा सकता है। ठीक इसी प्रकार छन्द को अनुभवी मार्ग दर्शक द्वारा किया गया इंगित कहा जा सकता है। साधना विधियों का वर्णन एक ही प्रक्रिया का अनेक प्रकार से हुआ है। उसमें से किस परिस्थिति में क्या उपयोग हो सकता है, इसकी बहुमुखी निर्धारण प्रज्ञा को 'छन्द' कह सकते हैं।

समस्त गायत्री साधना का स्वतंत्र विधान है। यों स्थिति के अनुरूप उस विधान के भी भेद और उपभेद हैं, किन्तु २४ अक्षरों में सन्निहित किसी शक्ति विशेष की साधना करनी हो तो व्यक्ति के स्तर तथा प्रयोजन को ध्यान में रखते हुए जो निर्धारण करना पड़े, उसका संकेत 'छन्द' रूप में किया गया है। अच्छा तो यह होता कि पिंगलशास्त्र में जिस प्रकार छन्दों के स्वरूप का स्पष्ट निर्धारण कर दिया गया है, उसी प्रकार साधना की छन्द-प्रक्रिया का भी शास्त्र बना होता, भले ही उसका विस्तार कितना ही बड़ा क्यों न करना पड़ता, यदि ऐसा हो सका होता तो सरलता रहती, किन्तु इतने पर भी स्वतंत्र निर्धारण की आवश्यकता से छुटकारा नहीं ही मिलता।

जो भी हो आज स्थिति यही है कि छन्द रूप में यह संकेत मौजूद हैं कि उपचार की दिशा-धारा क्या होनी चाहिए। यह सांकेतिक भाषा है। पारंगतों के लिए इस अंगुलि निर्देश से भी काम चल सकता है और प्राचीन काल में चलता भी रहा है। पर आज की आवश्यकता यह है कि 'गुरु परम्परा' तक सीमित रहने वाली रहस्मयी विधि-व्यवस्था को अब सर्व सुलभ बनाया जाय। प्राचीनकाल में ऐसे प्रयोजन गोपनीय रखे जाते थे। आज भी परमाणु-विस्फोट जैसे प्रयोगों की विधियाँ गोपनीय ही रखी जा रही हैं। राजनैतिक रहस्यों के सम्बन्ध में भी अधिकारियों को गोपनीयता की शपथ लेनी पड़ती है। पर एक सीमा तक ही यह उचित है। 'छन्द' के सम्बन्ध में भी एक सीमा तक गोपनीयता बरती जा सकती है, फिर भी उसका उतना विस्तार तो होना ही चाहिए कि उसके लुप्त होने का खतरा न रहे।

गायत्री मंत्र के हर अक्षर का एक स्वतंत्र छन्द स्वतंत्र साधना विधान है,

जिसका संकेत-उल्लेख 'गायत्री तंत्र' में इस प्रकार मिलता है-

**गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पंक्तिरेव च।**
**त्रिष्टुभं जगती चैव तथाऽतिजगती मता॥**
**शक्वर्यतिशक्वरी च धृतिश्चातिधृतिस्तथा।**
**विराट् प्रस्तारपंक्तिश्च कृतिः प्रकृतिराकृतिः॥**
**विकृतिः संकृतिश्चैवाक्षरपंक्तिस्तथैव च॥**
**भूर्भुवः स्वरिति छन्दस्तथा ज्योतिष्मती स्मृतम्।**
**इत्येतानि च छन्दासि कीर्तितानि महामुने॥**

अर्थात्-हे नारद! गायत्री के २४ अक्षरों में २४ छन्द सन्निहित हैं-(१)गायत्री (२) उष्णिक (३) अनुष्टुप (४) वृहती (५) पंक्ति (६) त्रिष्टुप (७) जगती (८) अतिजगती (९) शक्वरी (१०) अतिशक्वरी (११) धृति (१२) अतिधृति (१३) विराट् (१४) प्रस्तार पंक्ति (१५) कृति (१६) प्रकृति (१७) आकृति (१८) विकृति (१९) संकृति (२०) अक्षर पंक्ति (२१) भूः (२२) भुवः (२३) स्वः (२४) ज्योतिष्मती।

संक्षेप में ऋषि गुण हैं, देवता प्रभाव, छन्द को विधाता कह सकते हैं।

## गायत्री के २४ अक्षर २४ अवतार

'मार्कण्डेय पुराण' में शक्ति अवतार की कथा इस प्रकार है कि सब देवताओं से उनका तेज एकत्रित किया गया और उन सबकी सम्मिलित शक्ति का संग्रह-समुच्चय आद्य-शक्ति के रूप में प्रकट हुआ। इस कथानक से स्पष्ट है कि स्वरूप एक रहने पर भी उसके अंतर्गत विभिन्न घटकों का सम्मिलन-समावेश है। गायत्री के २४ अक्षरों की विभिन्न शक्ति धाराओं को देखते हुए यही कहा जा सकता है कि उस महासमुद्र में अनेक महानदियों ने अपना अनुदान समर्पित-विसर्जित किया है। फलतः उन सबकी विशेषताएँ भी इस मध्य केन्द्र में विद्यमान हैं। २४ अक्षरों को अनेकानेक शक्तिधाराओं का एकीकरण कह सकते हैं। यह धाराएँ कितने ही स्तर की हैं, कितनी ही दिशाओं से आई हैं। कितनी ही विशेषताओं से युक्त हैं। उन वर्गों का उल्लेख अवतारों-देवताओं, दिव्य-शक्तियों, ऋषियों के रूप में हुआ है। शक्तियों में से कुछ भौतिकी हैं, कुछ आत्मिकी। इनके नामकरण उनकी विशेषताओं के अनुरूप हुए हैं। शास्त्र में इन भेद-प्रभेद का सुविस्तृत वर्णन हैं।

चौबीस अवतारों की गणना कई प्रकार से की गई है। पुराणों में उनके जो नाम गिनाये गये हैं, उनमें एकरूपता नहीं है। दस अवतारों के सम्बन्ध में प्राय: जिस प्रकार की सहमान्यता है, वैसी २४ अवतारों के सम्बन्ध में नहीं है। किन्तु गायत्री के अक्षरों के अनुसार उनकी संख्या सभी स्थलों पर २४ ही है। उनमें से अधिक प्रतिपादनों के आधार पर जिन्हें २४ अवतार ठहराया गया है, वे यह हैं- (१) नारायण (विराट्) (२) हंस (३) यज्ञपुरुष (४) मत्स्य (५) कूर्म (६) वाराह (७) वामन (८) नृसिंह (९) परशुराम (१०) नारद (११) धन्वन्तरि (१२) सनत्कुमार (१३) दत्तात्रेय (१४) कपिल (१५) ऋषभदेव (१६) हयग्रीव (१७) मोहिनी (१८) हरि (१९) प्रभु (२०) राम (२१) कृष्ण (२२) व्यास (२३) बुद्ध (२४) निष्कलंक-प्रज्ञावतार।

भगवान् के सभी अवतार सृष्टि संतुलन के लिए हुए हैं। धर्म की स्थापना और अधर्म का निराकरण उनका प्रमुख उद्देश्य रहा है। इन सभी अवतारों की लीलाएँ भिन्न-भिन्न हैं। उनके क्रिया-कलाप, प्रतिपादन, उपदेश, निर्धारण भी पृथक्-पृथक् हैं। किन्तु लक्ष्य एक ही है-व्यक्ति की परिस्थिति और समाज की परिस्थिति में उत्कृष्टता का अभिवर्धन एवं निकृष्टता का निवारण। इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भगवान् समय-समय पर अवतरित होते रहे हैं। इन्हीं उद्देश्यों की गायत्री के २४ अक्षरों में सन्निहित प्रेरणाओं के साथ पूरी तरह संगति बैठ जाती है। प्रकारान्तर से यह भी कहा जा सकता है कि भगवान् के २४ अवतार, गायत्री मंत्र में प्रतिपादित २४ तथ्यों-आदर्शों को व्यावहारिक जीवन में उतारने की विधि-व्यवस्था का लोकशिक्षण करने के लिए प्रकट हुए हैं।

कथा है कि दत्तात्रेय की जिज्ञासाओं का जब कहीं समाधान न हो सका, तो वे प्रजापति के पास पहुँचे और सद्ज्ञान दे सकने वाले समर्थ गुरु को उपलब्ध करा देने का अनुरोध किया। प्रजापति ने गायत्री मंत्र का संकेत किया। दत्तात्रेय वापिस लौटे तो उन्होंने सामान्य प्राणियों और घटनाओं से अध्यात्म तत्त्वज्ञान की शिक्षा-प्रेरणा ग्रहण की। कथा के अनुसार यही २४ संकेत उनके २४ गुरु बन गये। इस अलंकारिक कथा वर्णन में गायत्री के २४ अक्षर ही दत्तात्रेय के परम समाधान कारक सद्गुरु हैं।

## गायत्री के २४ अक्षरों से संबंधित २४ रहस्य

तत्त्वज्ञानियों ने गायत्री मंत्र में अनेकानेक तथ्यों को ढूँढ़ निकाला है और यह समझने-समझाने का प्रयत्न किया है कि गायत्री मंत्र के २४ अक्षरों में किन रहस्यों का समावेश है। उनके शोध निष्कर्षों में से कुछ इस प्रकार हैं-

(१) ब्रह्म-विज्ञान के २४ महाग्रंथ हैं। ४ वेद, ४ उपवेद, ४ ब्राह्मण, ६ दर्शन, ६ वेदाङ्ग। यह सब मिलाकर २४ होते हैं। तत्त्वज्ञों का ऐसा मत है कि गायत्री के २४ अक्षरों की व्याख्या के लिए उनका विस्तृत रहस्य समझाने के लिए इन शास्त्रों का निर्माण हुआ है।

(२) हृदय को जीव का और ब्रह्मरंध्र को ईश्वर का स्थान माना गया है। हृदय से ब्रह्मरंध्र की दूरी २४ अंगुल है। इस दूरी को पार करने के लिए २४ कदम उठाने पड़ते हैं। २४ सद्‌गुण अपनाने पड़ते हैं- इन्हीं को २४ योग कहा गया है।

(३) विराट् ब्रह्म का शरीर २४ अवयवों वाला है। मनुष्य शरीर के भी प्रधान अंग २४ ही हैं।

(४) सूक्ष्म शरीर की शक्ति प्रवाहिकी नाड़ियों में २४ प्रधान हैं। ग्रीवा में ७, पीठ में १२, कमर में ५ इन सबको मेरुदण्ड के सुषुम्ना परिवार का अंग माना गया है।

(५) गायत्री को अष्टसिद्धियों और नवनिधियों की अधिष्ठात्री माना गया है। इन दोनों के समन्वय से शुभ गतियाँ प्राप्त होती हैं। यह २४ महान् लाभ गायत्री परिवार के अन्तर्गत आते हैं।

(६) सांख्य दर्शन के अनुसार यह सारा सृष्टिक्रम २४ तत्त्वों के सहारे चलता है। उनका प्रतिनिधित्व गायत्री के २४ अक्षर करते हैं।

'योगी याज्ञवल्क्य' नामक ग्रंथ में गायत्री के अक्षरों का विवरण दूसरी तरह लिखा है-

**कर्मेन्द्रियाणि पंचैव पंच बुद्धीन्द्रियाणि च।**
**पंच पंचेन्द्रियार्थाश्च भूतानाम् चैव पंचकम्॥**
**मनोबुद्धिस्तथात्याच अव्यक्तं च यदुत्तमम्।**
**चतुर्विंशत्यथैतानि गायत्र्या अक्षराणितु॥**
**प्रणवं पुरुषं विद्धि सर्वगं पंचविशकम्॥**

अर्थात्-(१) पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (२) पाँच कर्मेन्द्रियाँ (३) पाँच तत्त्व (४) पाँच तन्मात्राएँ। शब्द, रूप, रस, गंध, स्पर्श। यह बीस हुए। इनके अतिरिक्त अन्तःकरण चतुष्टय (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) यह चौबीस हो गये। परमात्म-पुरुष इन सबसे ऊपर पच्चीसवाँ हैं।

ऐसे-ऐसे अनेक कारण और आधार हैं, जिनसे गायत्री में २४ ही अक्षर क्यों हैं, इसका समाधान भी मिलता है। विश्व की महान् विशिष्टताओं के कितने ही परिकर ऐसे हैं, जिनका जोड़ २४ बैठ जाता है। गायत्री मंत्र में उन परिकरों का प्रतिनिधित्व रहने की बात, इस महामंत्र में २४ की ही संख्या होने से, समाधान करने वाली प्रतीत हो सकती है।

'महाभारत' का विशुद्ध स्वरूप प्राचीन काल में 'भारत-संहिता' के नाम से प्रख्यात था। उसमें २४००० श्लोक थे-"चतुर्विंशति साहस्रीं चक्रे भारतम्" में उसी का उल्लेख है। इस प्रकार महत्त्वपूर्ण ग्रंथ रचयिताओं ने किसी न किसी रूप में गायत्री के महत्त्व को स्वीकार करते हुए उसके प्रति किसी न किसी रूप में अपनी श्रद्धा व्यक्त की है।

वाल्मीकि रामायण में हर एक हजार श्लोकों के बाद गायत्री के एक अक्षर का सम्पुट है। श्रीमद् भागवत के बारे में भी यही बात है

## २४ अक्षरों से सम्बन्धित २४ मुद्राएँ

छन्द-विद्या के अन्तर्गत साधना-विधान का जो उल्लेख मिलता है, उसे मुद्रा कहा जाता है। मुद्राओं में यों कई ग्रंथों में मात्र अंगुलि संचालन की सामान्य क्रियाओं को ही पर्याप्त मान लिया गया है और गायत्री उपासकों को उन्हें ही कर लेने पर काम चल सकने का आश्वासन दिया गया है। पर यह आरंभ है। वास्तव में मुद्रा-विज्ञान अपने आप में एक समग्र शक्ति है। उसमें उँगलियों का ही नहीं, शरीर के विभिन्न अवयवों का-श्वसन-संस्थान का तथा मन के विशिष्ट भाव-प्रवाहों का समावेश होता है। २४ मुद्रा साधनाओं को गायत्री के २४ अक्षरों के लिए किस प्रकार उपयोग किया जाना चाहिए, इसका निर्धारण अनुभवी मार्गदर्शक के परामर्श से ही हो सकता है। मुद्राओं का उल्लेख 'घेरण्डसंहिता' में इस प्रकार है-

**महामुद्रा नभोमुद्रा उड्डियानं जलन्धरम्।**
**मूलबन्धो महाबन्धो महाबेधश्च खेचरी ॥ १ ॥**

विपरितकरी योनिर्बज्रोली शक्तिचालिनी।
ताड़ागी माण्डवी मुद्रा शाम्भवी पंचधारणी॥ २॥
अश्विनी पाशिनी काकी मातंगी च भुजंगिनी।
चतुर्विंशति मुद्राणि सिद्धदानीह योगिनाम् ॥ ३॥

–घेरण्ड संहिता - तृतीयोपदेश

अर्थात्- (१) महामुद्रा (२) नभोमुद्रा (३) उड्डीयान (४) जालन्धर बन्ध (५) मूलबन्ध (६) महाबन्ध (७) खेचरी (८) विपरीत करणी (९) योनिमुद्रा (१०) बज्रोली (११) शक्ति चालनी (१२) ताड़ागी (१३) माण्डवी (१४) शांभवी (१५) अश्विनी (१६) पाशिनी (१७) काकी (१८) मातंगी (१९) भुजङ्गिनी (२०) पार्थिवी (२१) आम्भसी (२२) वैश्वानरी (२३) वायवी (२४) आकाशी। यह चौबीस मुद्रा साधनाएँ योग साधकों को सिद्धियाँ प्रदान करने वाली हैं।

तंत्र प्रकरण में दोनों हाथों की उँगलियों को मिलाकर कुछ विशेष प्रकार की आकृतियाँ बनाई जाती हैं। इन्हें मुद्राएँ कहते हैं। मुद्राओं की संख्या २४ हैं। प्रत्येक अक्षर की एक मुद्रा है। अक्षरों के क्रम से मुद्रा निर्धारण निम्न प्रकार किया गया है। इन्हें किसी अभ्यासी विज्ञजन से अथवा उपासना ग्रंथों में उपलब्ध चित्रों के माध्यम से जाना जा सकता है-

अतः परं प्रवक्ष्यामि वर्णमुद्राः क्रमेण तु।
सुमुखं सम्पुटं चैव, विततं विस्तृतं तथा॥ १॥
द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुःपंचमुखं तथा।
षण्मुखाधोमुखं चैव व्यापकांजलिकं तथा ॥ २॥
शकटं यमपाशं च ग्रंथितं सन्मुखोन्मुखम्।
प्रलम्बं मुष्टिकं चैव मत्स्यं कूर्मं वराहकम्॥ ३॥
सिंहाक्रान्तं, महाक्रांन्तं, मुद्‌गरं, पल्लवं तथा।
चतुर्विंशतिमुद्राक्षाज्जपादौ परिकीर्तितत:॥ ४॥

देवी भागवत १२। २ ।१४-१६

अर्थात्-गायत्री की २४ मुद्राएँ इस प्रकार हैं-(१) सुमुख (२) सम्पुट (३) वितत (४) विस्तृत (५) द्विमुख (६) त्रिमुख (७) चतुर्मुख (८) पंचमुख (९) षडमुख (१०) अधोमुख (११) व्यापकाञ्जलि (१२) शकट (१३) यम पाश (१४) ग्रंथित (१५) सन्मुखोन्मुख (१६) प्रलम्ब (१७) मुष्टिक (१८) मत्स्य (१९) कूर्म (२०) बराहक (२१) सिंहाक्रान्त (२२) महाक्रान्त (२३) मुद्‌गर (२४) पल्लव।

## २४ अक्षरों के २४ देवताओं से सम्बन्धित २४ सिद्धियाँ

गायत्री विनियोग में सविता देवता का उल्लेख है। २४ अक्षरों के २४ देवताओं की नामावली पहले दी गई है। उन देवताओं को अष्टसिद्धि, नव निद्धि एवं सप्त विभूतियों के रूप में गिना गया है। ८+९+७=२४ होता है। गायत्री के प्राचीन काल के साधकों को उन चमत्कारी विशिष्टिताओं की उपलब्धि होती होगी। आज के सामान्य साधक सामान्य व्यक्तित्व के रहते हुए जो सफलताएँ प्राप्त कर सकते हैं, उन्हें इस प्रकार समझा जा सकता है-

(१) प्रज्ञा (२) वैभव (३) सहयोग (४) प्रतिभा (५) ओजस् (६) तेजस् (७) वर्चस् (८) कान्ति (९) साहसिकता (१०) दिव्य दृष्टि (११) पूर्वाभास (१२) विचार संचार (१३) वरदान (१४) शाप (१५) शान्ति (१६) प्राण प्रयोग (१७) देहान्तर सम्पर्क (१८) प्राणाकर्षण (१९) ऐश्वर्य (२०) दूर श्रवण (२१) दूरदर्शन (२२) लोकान्तर सम्पर्क (२३) देव सम्पर्क (२४) कीर्ति। इन्हीं को गायत्री की २४ सिद्धियाँ कहा जाता है।

गायत्री उपासक पर देव अनुग्रह की निरन्तर वर्षा होती है। उसमें ऋषि तत्त्व बढ़ता है। छन्द-पुरुषार्थ में-साधना प्रयोजन में श्रद्धा रहती है। मन लगता है। फलतः उसकी भाव भरी अन्तरात्मा का चुम्बकत्व उन देवताओं का अजस्र वरदान प्राप्त करता है, जिनका इस महामंत्र के साथ सघन सम्बन्ध है। कहा भी है-

**चतुर्विंशति-त्वा सा यदा भवति शोभना।**
**गायत्रीं सवितुः शम्भो गायत्रीं मदनात्मिकाम्॥**
**गायत्रीं विष्णुगायत्री गायत्री त्रिपदात्मनः।**
**गायत्रीं दक्षिणामूर्तेर्गायत्री शम्भुयोषितः॥**

अर्थात्-गायत्री के चौबीस अक्षर, चौबीस तत्त्व हैं। गायत्री, सविता, शिव, विष्णु, दक्षिणामूर्ति, शम्भु शक्ति और काम बीज है।

## २४ अक्षरों से सम्बन्धित २४ तत्व

सृष्टि की पदार्थ-सम्पदा का वर्गीकरण करने की दृष्टि से जिन पंच तत्त्वों की चर्चा की जाती है, उसे भौतिक जगत् की सृजन सामग्री कहा जाता है। उस सामान्य वर्गीकरण का विज्ञानवेत्ताओं ने अधिक गंभीर विश्लेषण किया है, तो उनकी संख्या १०० से भी अधिक हो गई है। यह भौतिक जगत् की तत्त्व चर्चा हुई। आत्मिक क्षेत्र में चेतना ही सर्वस्व है। इस चेतना को जिन-जिन माध्यमों की अपने अस्तित्व का परिचय देने, संवेदनाएँ ग्रहण करने तथा अभीष्ट प्रयोजन सम्पन्न करने में आवश्यकता पड़ती है, उन्हें तत्त्व कहा गया है। ऐसे चेतन तत्त्व २४ हैं। इसी गणना में भौतिक पंचतत्त्वों की भी गणना की जाती है।

सांख्य दर्शन में जिन २४ तत्त्वों का उल्लेख है, वे पदार्थ परक नहीं, वरन् चेतना को प्रभावित करने वाली तथा चेतना से प्रभावित होने वाली सृष्टि धाराएँ हैं। ऐसी धाराओं की गणना २४ की संख्या में की गई हैं। इन्हें प्रकारान्तर से गायत्री महाशक्ति की सृष्टि संचालन एवं जीवन प्रवाह में महत्त्वपूर्ण भूमिका सम्पन्न करने वाली दिव्य-धाराएँ-देव सम्पदाएँ, सृष्टि प्रेरणाएँ कहा जा सकता है। प्रवाह परिकर को गायत्री महाशक्ति की सशक्त स्फुरणायें समझा जा सकता है। गायत्री तत्त्वदर्शन की विवेचना इसी रूप में होती रही है।

गायत्री महाशक्ति के २४ अक्षरों के साथ जुड़े हुए २४ तत्त्व इस प्रकार हैं-

**पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाश एव च॥ १०॥**
**गन्धो रसश्च रूपं च शब्दः स्पर्शस्तथैव च॥**
**उपस्थम् पायुपादम च पाणि वागपि च क्रमात्॥ ११॥**
**प्राणम् जिह्वा च चक्षुश्चत्वक्श्रोत्रम च ततः परं।**
**प्राणोऽपानस्तथा व्यानः समानश्च ततः परम् ॥ १२॥**
**तत्त्वान्येतानि वर्णानां क्रमशः कीर्तितानितु।**

-गायत्री तंत्र द्वितीय पटल

अर्थात्-(१) पृथ्वी (२) जल (३) अग्नि (४) वायु (५) आकाश (६) गन्ध (७) रस (८) रूप (९) शब्द (१०) स्पर्श (११) उपस्थ (१२) गुदा (१३) पाद (१४) पाणि (१५) वाणी (१६) प्राण (१७) जिह्वा (१८) चक्षु (१९) त्वचा (२०) श्रोत्र (२१) प्राण (२२) अपान (२३) व्यान (२४) समान।

इसके अतिरिक्त २४ तत्त्वों का एक अन्य प्रतिपादन इस प्रकार मिलता है-

(१) पृथ्वी (२) जल (३) तेज (४) वायु (५) आकाश (६) गन्ध (७) रस (८) रूप (९) स्पर्श (१०) शब्द (११) वाक् (१२) पैर (१३) गुदा (१४) जननेन्द्रिय (१५) त्वचा (१६) नेत्र (१७) कान (१८) जीभ (१९) नाक (२०) मन (२१) बुद्धि (२२) अहंकार (२३) चित्त (२४) ज्ञान। इस तरह-

**चतुर्विंशाक्षरी विद्या पर तत्त्व विनिर्मिता।**
**तत्करातु यात्कार पर्यन्तं शब्द ब्रह्मस्वरूपिणी॥**

- गायत्री तंत्र

अर्थात्-'तत् से लेकर प्रचोदयात्' तक के २४ अक्षरों वाली गायत्री परातत्त्व अर्थात् परा-विद्या से ओत-प्रोत है।

सच्ची गायत्री उपासना का महात्म्य और प्रतिफल शास्त्रकारों ने जिस

प्रकार बताया है, उसे देखते हुए यही प्रतीत होता है कि सर्वतोमुखी आत्म-प्रगति के पथ पर बढ़ने के लिए गायत्री विद्या का महत्त्व असाधारण है। कहा गया है-

**परब्रह्म स्वरूपा च निर्वाण पददायिनी।**
**ब्रह्मतेजोमयी शक्ति स्तधिष्ठातृ देवता।**

अर्थात्- गायत्री परब्रह्म स्वरूप तथा निर्वाण पद देने वाली है। वह ब्रह्म तेज शक्ति की अधिष्ठात्री देवी है।

## २४ अक्षरों से सम्बन्धित शरीरस्थ २४ ग्रंथियाँ और उनकी शक्तियाँ

पिण्ड को ब्रह्माण्ड की छोटी प्रतिकृति माना गया है। वृक्ष की सारी सत्ता छोटे से बीज में भरी रहती है। सौर मण्डल की पूरी प्रक्रिया छोटे से परमाणु में ठीक उसी तरह काम करती देखी जा सकती है। मनुष्य की शारीरिक और मानसिक संरचना का छोटा रूप शुक्राणु में विद्यमान रहता है। यह 'महतोमहीयान् का अणोरणीयान्' में दर्शन है। छोटी-सी 'माइक्रो' फिल्म पर सुविस्तृत ग्रंथों का चित्र उतर आता है। जीव में ब्रह्म की सारी विभूतियाँ और शक्तियाँ विद्यमान है। ब्रह्म का विस्तार यह ब्रह्माण्ड है। जीव का विस्तार शरीर में है। मानवी-काया यों हाड़-मांस की बनी दीखती है और मलमूत्र की गठरी प्रतीत होती है, पर उसकी मूल सत्ता, जो गंभीर विवेचन करने पर प्रतीत होती है, वह है, जिससे इस छोटे से कलेवर में वह सब विद्यमान मिलता है, जो विराट् विश्व में दृष्टिगोचर होता है।

स्थूल दृष्टि से स्थूल का दर्शन होता है और सूक्ष्म से सूक्ष्म का। चर्म-चक्षुओं से सीमित आकार-प्रकार- दूरी की वस्तुएँ देखी जा सकती हैं। शक्तिशाली माइक्रोस्कोप अदृश्य वस्तुओं को भी दृश्य रूप में प्रस्तुत कर देते हैं। दुरबीनों से वे दूरवर्ती वस्तुएँ दीखती हैं, जिन्हें साधारण दृष्टि से देख सकना संभव नहीं है। ज्ञान चक्षुओं से सूक्ष्म जगत् की स्थिति को भली प्रकार जाना जा सकता है। अर्जुन को, यशोदा को भगवान् श्रीकृष्ण ने ज्ञान चक्षुओं से ही अपने विराट् रूप के दर्शन कराये थे। उसी माध्यम से राम के वास्तविक रूप का साक्षात्कार कौशिल्या और काकभुसुण्डि को हुआ था। उसी दृष्टि से देख सकना जिस किसी के लिए भी संभव हुआ है, वह अपनी ही मानवी काया में देव शक्तियों की उपस्थिति सत्प्रवृत्तियों के रूप में स्पष्टतया देखता है। प्रसुप्त स्थिति में तो

जीवित मनुष्य भी मृतकवत् पड़ा रहता है, पर जागृति की स्थिति में पहुँच कर वही प्रबल पुरुषार्थ करता और अपनी प्रखरता का परिचय देता है। मानवी काया वन-मानुष के-नर-वानर के समतुल्य इस लिए बनी रहती है कि उसकी देवात्मा प्रसुप्त स्थिति में पड़ी होती है। साधना, उपचारों की सहायता से जो उसे जगा लेते हैं, उन्हें दिव्य शक्ति सम्पन्न सिद्ध पुरुष बनने में देर नहीं लगती।

मानवी सत्ता में देवशक्तियों की उपस्थिति का वर्णन करते हुए भगवान् शिव, पार्वती के सम्मुख रहस्योद्घाटन करते हैं-

**देहेऽस्मिन् वर्तते मेरुः सप्तद्वीपसमन्वितः।**
**सरितः सागराः शैलाः क्षेत्राणि क्षेत्र पालकाः॥**
**ऋषियो मुनयः सर्वे नक्षत्राणि ग्रहास्तथा।**
**पुण्यतीर्थानि पीठानि वर्तन्ते पीठदेवताः॥**
**सृष्टिसंहारकर्तारौ भ्रमन्तौ शशिभास्करौ।**
**नभो वायुश्च वह्निश्च जलं पृथ्वी तथैव च॥**
**त्रैलोक्ये यानि भूतानि तानि सर्वाणि देहतः।**
**मेरुं संवेष्ट्य सर्वत्र व्यवहारः प्रवर्तते॥**
**जानाति यः सर्वमिदं स योगी नात्र संशयः।**
**ब्रह्माण्डसंज्ञके देहे यथा देशं व्यवस्थितः॥**

- शिव संहिता २/१-४

अर्थात् इसी देह में मेरु, सप्त द्वीप, सरिता, सागर, शैल, क्षेत्र पालक, ऋषि, मुनि, नक्षत्र, ग्रह, पीठ, पीठ देवता, शिव, चन्द्र, सूर्य, आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, तीनों लोक, सब प्राणी निवास करते हैं। जो ब्रह्माण्ड में है वही पिण्ड में है। इस रहस्य को जो जान सकता है वही योगी है।

मनुष्य शरीर में अनेक विलक्षण शक्तियाँ सन्निहित हैं, यह तथ्य अब वैज्ञानिक भी स्वीकार करते हैं। यह शक्तियाँ शरीर में कुछ केन्द्रों-ग्रंथियों से संचालित होती हैं। गायत्री का हर अक्षर किसी न किसी महत्त्वपूर्ण शक्ति केन्द्रों को प्रभावित करता है। जैसे टाइपराइटर की चाभियों पर उँगली रखने से निश्चित अक्षर छपते हैं, उसी प्रकार निश्चित शब्दों का प्रभाव शरीरस्थ शक्ति केन्द्रों पर पड़ता है। गायत्री मंत्र के हर अक्षर से सम्बन्धित ग्रंथियों और उनकी शक्तियों की तालिका यहाँ दी जा रही है।

२४ अक्षरों से सम्बन्धित २४ ग्रंथियों एवं २४ शक्तियों के नाम इस प्रकार हैं-

| क्र.सं. | अक्षर | ग्रंथि का नाम | उसमें भरी हुई शक्ति |
|---|---|---|---|
| (१) | तत् | तापिनी | सफलता |
| (२) | स | सकला | पराक्रम |
| (३) | वि | विश्वा | पालन |
| (४) | तुर | तुष्टा | कल्याण |
| (५) | व | वरदा | योग |
| (६) | रे | रेवती | प्रेम |
| (७) | णि | सूक्ष्मा | धन |
| (८) | यं | ज्ञाना | तेज |
| (९) | भर् | भर्गा | रक्षा |
| (१०) | गो | गोमती | बुद्धि |
| (११) | दे | दर्विका | दमन |
| (१२) | व | वराही | निष्ठा |
| (१३) | स्य | सिंहनी | धारणी |
| (१४) | धी | ध्योना | प्राण |
| (१५) | म | मर्यादा | संयम |
| (१६) | हि | स्फुटा | तप |
| (१७) | धि | मेधा | दूरदर्शिता |
| (१८) | यो | योगमाया | जागृति |
| (१९) | यो | योगिनी | उत्पादन |
| (२०) | नः | धारिणी | सरसता |
| (२१) | प्र | प्रभवा | आदर्श |
| (२२) | चो | ऊष्मा | साहस |
| (२३) | द | दृश्या | विवेक |
| (२४) | यात् | निरंजना | सेवा |

गायत्री उपरोक्त २४ शक्तियों को साधक में जागृत करती है। यह गुण इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि इनके जागरण के साथ-साथ अनेक प्रकार की सफलाएँ, सिद्धियाँ और सम्पन्नता प्राप्त होना आरंभ हो जाता है। गायत्री साधना कोई अन्ध विश्वास नहीं, एक ठोस वैज्ञानिक कृत्य है और उसके द्वारा लाभ भी सुनिश्चित ही होते हैं। इसलिए शास्त्रों में इसे भूलोक की कामधेनु कहा गया है।

मंत्र विद्या के वैज्ञानिक जानते हैं कि जीभ से जो भी शब्द निकलते हैं, उनका उच्चारण कण्ठ, तालु, मूर्धा, ओष्ठ, दन्त, जिह्वामूल आदि मुख के विभिन्न अंगों द्वारा होता है। इस उच्चारण काल में मुख के जिन भागों से ध्वनि निकलती है, उन अंगों के नाड़ी तन्तु शरीर के विभिन्न भागों तक फैलते हैं। इस फैलाव क्षेत्र में कई ग्रंथियाँ होती हैं, जिन पर उन उच्चारण का दबाव पड़ता है। जिन लोगों की कोई सूक्ष्म ग्रंथियाँ रोगी या नष्ट हो जाती हैं, उनके मुख से कुछ खास शब्द अशुद्ध या रुक-रुक कर निकलते हैं, इसी को हकलाना या तुतलाना कहते हैं। शरीर में अनेक छोटी-बड़ी, दृश्य-अदृश्य ग्रंथियाँ होती हैं। योगी लोग जानते हैं कि उन कोशों में कोई विशेष शक्ति-भण्डार छिपा रहता है। सुषुम्ना से सम्बद्ध षट्चक्र प्रसिद्ध है, ऐसी अगणित ग्रंथियाँ शरीर में हैं। विविध शब्दों का उच्चारण इन विविध ग्रंथियों पर अपना प्रभाव डालता है और उस प्रभाव से उन ग्रंथियों का शक्ति भण्डार जागृत होता है। मंत्रों का गठन इसी आधार पर हुआ है। गायत्री मंत्र में २४ अक्षर हैं। इसका सम्बन्ध शरीर में स्थित ऐसी २४ ग्रंथियों से है जो जागृत होने पर सद्बुद्धि प्रकाशक शक्तियों को सतेज करती हैं। गायत्री मंत्र के उच्चारण से सूक्ष्म शरीर का सितार २४ स्थानों से झंकार देता है और उससे एक ऐसी स्वर-लहरी उत्पन्न होती है, जिसका प्रभाव अदृश्य जगत् के महत्त्वपूर्ण तत्त्वों पर पड़ता है। यह प्रभाव ही गायत्री साधना के फलों का प्रभाव हेतु है।

षट्चक्र प्रख्यात हैं। उनके अतिरिक्त २४ विशिष्ट और ८४ सामान्य शक्ति-केन्द्र भी इस शरीर में विद्यमान हैं। इन्हें 'उपत्यिकाएँ' और 'विभेदिकाएँ 'कहते हैं। २४ उपत्यिकाएँ छोटे-छोटे षट्चक्रों जैसे शक्ति संस्थान ही हैं। यह शरीर के विभिन्न स्थानों पर विद्यमान हैं। गायत्री महामंत्र में २४ अक्षर जब स्पन्दित होते हैं, तब मुख में उत्पन्न हुई गतिविधियों का सूक्ष्म प्रभाव उन उपत्यिकाओं पर पड़ता है और वे स्वसंचालित हलचल बनकर उन्हें प्रसुप्त स्थिति से जागृत स्थिति में परिणत करने का कार्य आरंभ कर देती हैं। अधिक जप करने की निरन्तर चल रही प्रक्रिया पत्थर पर घिसने वाली रस्सी की तरह प्रभाव डालती रहती है और वे संस्थान जैसे-तैसे अपनी मूर्च्छा दूर करके चेतन-भूमिका में आते जाते हैं, वैसे-वैसे इस उपासना में संलग्न व्यक्ति अपने आपको अलौकिक शक्तियों से सुसम्पन्न अनुभव करता हुआ आत्म-विकास की ओर बढ़ता चला जाता है।

किस संस्थान में किस देव शक्ति का निवास है और वहाँ कौन-सी विशिष्ट शक्ति छिपी पड़ी है। शरीर के किस स्थान पर कौन उपत्यिका उपस्थित है और गायत्री मंत्र का कौन-सा अक्षर उसे प्रभावित करने का प्रयोजन पूर्ण करता है, इसका उल्लेख शास्त्रकारों ने संकेत रूप से किया है। न्यास, कवच, रक्षा विधान आदि के माध्यम से पूजा-प्रार्थना करते हुए यह अनुभव किया जाता है कि इस स्थान पर विद्यमान अमुक शक्ति का नव जागरण हो रहा है, उस केन्द्र पर ब्रह्माण्ड में संव्याप्त दिव्य कामनाओं का अवतरण हो रहा है। स्थापना, श्रद्धा, अनुभूति एवं उपलब्धि के चार चरण ध्यान-धारणा में प्रयुक्त होते हैं। यह संगति इन उपचारों के सहारे भली प्रकार बैठ जाती है। फलतः न्यास, कवच, रक्षाविधान आदि कृत्यों के माध्यम से शरीर में देवशक्तियों के जागरण एवं अवतरण का द्वार खुल जाता है।

## २४ अक्षरों से सम्बन्धित २४ अनुभूतियाँ

देव शक्तियों के जागरण एवं अवतरण की अनुभूति प्रायः दो रूपों में होती है। प्रथम-रंग, दूसरा-गंध। ध्यानावस्था में भीतर एवं बाहर किसी रंग विशेष की झाँकी बार-बार हो अथवा किसी पुष्प विशेष की गंध भीतर से बाहर को उभरती प्रतीत हो, तो समझना चाहिये कि गायत्री के अक्षरों में सन्निहित अमुक शक्ति का उभार विशेष रूप से हो रहा है। इस अनुभूति के लिए २४ पुष्पों का उदाहरण दिया गया है। उनके रंग या गंध की अन्तः अनुभूति के आधार पर देव शक्तियों का अनुमान लगाया जा सकता है। ऐसा भी कहा जाता है कि अमुक शब्द शक्तियों की साधना में इन फूलों का उपयोग विशेष सहायक सिद्ध होता है।

अक्षरों और पुष्पों की संगति का उल्लेख इस प्रकार है-

**अतः परं वर्णवर्णान्व्याहरामि यथातथम्।**<br>
**चम्पका अतसीपुष्पसन्निभं विद्रुमं तथा।**<br>
**स्फटिकाकारकं चैव पद्मपुष्पसमप्रभम्॥**<br>
**तरुणादित्यसंकाशं शङ्खकुन्देन्दुसन्निभम्।**<br>
**प्रवालपद्मपत्राभं पद्मरागसमप्रभम्॥**<br>
**इन्द्रनीलमणिप्रख्यं मौक्तिकम् कुङ्कुमप्रभम्।**<br>
**अन्जनाभं च रक्तं च वैदूर्यं क्षौद्रसन्निभम्॥**<br>
**हारिद्रं कुन्ददुग्धाभं रविकांतिसमप्रभम्।**<br>
**शुकपुच्छनिभं तद्वच्छतपत्रनिभं तथा॥**

**केतकीपुष्पसंकाशं मल्लिकाकुसुमप्रभम्।**
**करवीरश्च इत्येते क्रमेण परिकीर्तिताः॥**
**वर्णाः प्रोक्ताश्च वर्णानां महापापविधुन्वनाः।**

देवी भागवत १२।२।४-९

अर्थात्-गायत्री महामंत्र के २४ अक्षरों की प्रकाश किरणों के २४ रंग नीचे दिये पदार्थों तथा पुष्पों के रंग जैसे समझने चाहिए-

(१) चम्पा (२) अलसी (३) स्फटिक (४) कमल (५) सूर्य (६) कुन्द (७) शंख (८) प्रवाल (९) पद्म पत्र (१०) पद्मराग (११) इन्द्रनील (१२) मुक्ता (१३) कुंकुम (१४) अंजन (१५) बैदूर्य (१६) हल्दी (१७) कुन्द (१८) दुग्ध (१९) सूर्यकान्त (२०) शुक की पूँछ (२१) शतपत्र (२२) केतकी (२३) चमेली (मल्लिका) (२४) कनेर (करवीर)

किस अक्षर का नियोजन किस स्थान पर हो, इस संदर्भ में भी मतभेद पाये जाते हैं। इन बारीकियों में न उलझ कर हमें इतना ही मानने से भी काम चल सकता है कि इन स्थानों में विशेष शक्तियों का निवास है और उन्हें गायत्री साधना के माध्यम से जगाया जा सकता है। पौष्टिक आहार-विहार से शरीर के समस्त अवयवों का परिपोषण होता है। रोग निवारक औषधि से किसी भी अंग में छिपी बीमारी के निराकरण का लाभ मिलता है, इसी प्रकार समग्र गायत्री उपासना साधारण रीति से करने पर भी विभिन्न अवयवों में विद्यमान देव शक्तियाँ समर्थ बनाई जा सकती हैं। सामान्यतया विशिष्ट अंग साधना की अतिरिक्त आवश्यकता नहीं पड़ती। संयुक्त साधना से ही संतुलित उत्कर्ष होता रहता है।

छन्द शास्त्र की दृष्टि से चौबीस अक्षरों के तीन विराम वाले पद्य को 'गायत्री' कहते हैं। मंत्रार्थ की दृष्टि से उसमें सविता-तत्त्व का ध्यान और प्रज्ञा-प्रेरणा का विधान सन्निहित है। साधना-विज्ञान की दृष्टि से गायत्री मंत्र का हर अक्षर बीज मंत्र हैं। उन सभी का स्वतंत्र अस्तित्व है। उस अस्तित्व के गर्भ में एक विशिष्ट शक्ति-प्रवाह समाया हुआ है।

## २४ अक्षरों से सम्बन्धित २४ सिद्धियाँ

समग्र गायत्री को सर्वविघ्नविनासिनी, सर्वसिद्धि प्रदायिनी कहा गया है। संकटों का संवरण और सौभाग्य संवर्धन के लिए उसका आश्रय लेना सदा सुखद परिणाम ही उत्पन्न करता है। तो भी विशेष प्रयोजनों के लिए उसके २४

अक्षरों में पृथक्-पृथक् प्रकार की विशेषताएँ भरी हैं। किसी विशेष प्रयोजन की सामयिक आवश्यकता पूरी करने के लिए उसकी विशेष शक्ति धारा का भी आश्रय लिया जा सकता है। चौबीस अक्षरों की अपनी विशेषताएँ और प्रतिक्रियाएँ हैं-जिन्हें सिद्धियाँ भी कहा जा सकता है, जो इस प्रकार बताई गई हैं-

(१) आरोग्य (२) आयुष्य (३) तुष्टि (४) पुष्टि (५) शान्ति (६) वैभव (७) ऐश्वर्य (८) कीर्ति (९) अनुग्रह (१०) श्रेय (११) सौभाग्य (१२) ओजस् (१३) तेजस् (१४) गृहलक्ष्मी (१५) सुसंतति (१६) विजय (१७) विद्या (१८) बुद्धि (१९) प्रतिभा (२०) ऋद्धि (२१) सिद्धि (२२) संगति (२३) स्वर्ग (२४) मुक्ति।

जहाँ उपलब्धियों की चर्चा होती है, वहाँ शक्तियों का भी उल्लेख होता है। शक्ति की चर्चा सामर्थ्य का स्वरूप निर्धारण करने के संदर्भ में होती है। बिजली एक शक्ति है। विज्ञान के विद्यार्थी उसका स्वरूप और प्रभाव अपने पाठ्यक्रम में पढ़ते हैं। इस जानकारी के बिना उसके प्रयोग करते समय जो अनेकानेक समस्याएँ पैदा होती हैं, उनका समाधान नहीं हो सकता। प्रयोक्ता की जानकारी इस प्रसंग में जितनी अधिक होगी, वह उतनी ही सफलतापूर्वक उस शक्ति का सही रीति से प्रयोग करने तथा अभीष्ट लाभ उठाने में सफल हो सकेगा। प्रयोग के परिणाम को सिद्धि कहते हैं। सिद्धि अर्थात् लाभ। शक्ति अर्थात् पूँजी। शक्तियाँ-सिद्धियों की आधार हैं। शक्ति के बिना सिद्धि नहीं मिलती। दोनों को अन्योन्याश्रित कहा जा सकता है। इतने पर भी पृथकता तो माननी ही पड़ेगी।

## गायत्री के २४ अक्षर २४ बीज मंत्र

वेदमंत्र का संक्षिप्त रूप बीजमंत्र कहलाता है। वेद वृक्ष का सार संक्षेप बीज है। मनुष्य का बीज वीर्य है। समूचा काम विस्तार बीज में सन्निहित रहता है। गायत्री के तीन चरण हैं। इन तीनों का एक-एक बीज- "भूः, भुवः, स्वः" है। इस व्याहृति भाग का भी बीज है-ॐ। यह समग्र गायत्री मंत्र की बात हुई। प्रत्येक अक्षर का भी एक-एक बीज है। उसमें उस अक्षर की सार- शक्ति विद्यमान है। तांत्रिक प्रयोजनों में बीजमंत्र का अत्यधिक महत्त्व है। इसलिए गायत्री एवं महामृत्युंजय जैसे प्रख्यात मंत्रों की भी एक या कई बीजों समेत उपासना की जाती है। चौबीस अक्षरों के २४ बीज इस प्रकार हैं-

(१) ॐ (२) ह्रीं (३) श्रीं (४) क्लीं (५) हों (६) जूं (७) यं (८) रं (९) लं (१०) वं (११) शं (१२) सं (१३) ऐं (१४) क्रों (१५) हुं (१६) ह्लीं (१७) पं (१८) फं (१९) टं (२०) ठं (२१) डं (२२) ढं (२३) क्षं (२४) लृं।

यह बीज मंत्र व्याहृतियों के पश्चात् एवं मंत्र भाग से पूर्व लगाये जाते हैं। भूर्भुवः स्वः के पश्चात् 'तत्सवितुः' से पहले का स्थान ही बीज मंत्र लगाने का स्थान है। 'प्रचोदयात्' के पश्चात् भी इन्हें लगाया जाता है। ऐसी दशा में उसे सम्पुट कहा जाता है। बीज या सम्पुट में से किसे कहाँ लगाना चाहिए, इसका निर्णय किसी अनुभवी के परामर्श से करना चाहिए। बीज-विधान, तंत्र-विधान के अन्तर्गत आता है। इसलिए इनके प्रयोग में विशेष सतर्कता की आवश्यकता रहती है।

## २४ बीज मंत्रों से सम्बन्धित २४ यंत्र

प्रत्येक बीज मंत्र का एक यंत्र भी है। इन्हें अक्षर यंत्र या बीज यंत्र कहते हैं। तांत्रिक उपासनाओं में पूजा प्रतीक में चित्र-प्रतीक की भाँति किसी धातु पर खोदे हुए यंत्र की भी प्रतिष्ठापना की जाती है और प्रतिमा पूजन की तरह यंत्र का भी पंचोपचार या षोडशोपचार पूजन किया जाता है। दक्षिणमार्गी साधनों में प्रतिमा पूजन का जो स्थान है, वही वाममार्गी उपासना उपचार में यंत्र-स्थापना का है। गायत्री यंत्र विख्यात है। बीजाक्षरों से युक्त २४ यंत्र उसके अतिरिक्त हैं। इन्हें २४ अक्षरों में सन्निहित २४ शक्तियों की प्रतीक-प्रतिमा कहा जा सकता है। अगले पृष्ठ पर इस सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी दी गयी है-

गायत्री के चौबीस बीज मंत्रों से युक्त २४ यंत्रों के नाम इस प्रकार हैं–

| क्र.सं. | बीज मंत्र | यन्त्रम् |
|---|---|---|
| (१) | ॐ | गायत्री यंत्रम् |
| (२) | ह्रीं | ब्राह्मी यंत्रम् |
| (३) | णं | वैष्णवी यंत्रम् |
| (४) | शं | शाम्भवी यंत्रम् |
| (५) | ओं | विद्या यंत्रम् |
| (६) | ळूं | देवेश यंत्रम् |
| (७) | स्त्रीं | मातृ यंत्रम् |
| (८) | ऋं | ऋत् यंत्रम् |
| (९) | उं | निर्मला यंत्रम् |
| (१०) | यं | निरंजना यंत्रम् |
| (११) | गं | ऋद्धि यंत्रम् |
| (१२) | क्षं | सिद्धि यंत्रम् |
| (१३) | ज्ञं | सावित्री यंत्रम् |
| (१४) | ऐं | सरस्वती यंत्रम् |
| (१५) | श्रीं | श्री यंत्रम् |
| (१६) | क्लीं | कालिका यंत्रम् |
| (१७) | लं | भैरव यंत्रम् |
| (१८) | रं | ऊर्जा यंत्रम् |
| (१९) | खं | विभूति यंत्रम् |
| (२०) | हुं | दुर्गा यंत्रम् |
| (२१) | अं | अन्नपूर्णेश्वरी यंत्रम् |
| (२२) | हं | योगिनी यंत्रम् |
| (२३) | वं | वरुण यंत्रम् |
| (२४) | त्रीं | त्रिधा यंत्रम् |

# गायत्री के २४ अक्षरों से सम्बन्धित
# २४ रंग, २४ शक्तियाँ तथा २४ तत्त्व

श्री विद्यार्णव तंत्र के अनुसार गायत्री महामंत्र में सन्निहित शक्तियों का वर्णन इस प्रकार है-

| क्र० | अक्षर | रंग | शक्ति-देवियाँ | स्थूल-सूक्ष्म तत्त्व |
|---|---|---|---|---|
| (१) | तत् | पीला | प्रह्लादिनी | पृथ्वी |
| (२) | स | गुलाबी | प्रभा | जल |
| (३) | वि | लाल | नित्या | अग्नि |
| (४) | तुर् | नीला | विश्वभद्रा | वायु |
| (५) | व | सिन्दूरी | विलासिनी | आकाश |
| (६) | रे | श्वेत | प्रभावती | गन्ध |
| (७) | णि | श्वेत | जया | स्वाद |
| (८) | यम् | श्वेत | शान्ता | रूप |
| (९) | भ | काला | कान्ता | स्पर्श |
| (१०) | र्गो | लाल | दुर्गा | शब्द |
| (११) | दे | लाल कमल | सरस्वती | वाणी |
| (१२) | व | श्वेत | विश्वमाया | हस्त |
| (१३) | स्य | सुनहरा पीला | विशालेशा | जननेन्द्रिय |
| (१४) | धी | श्वेत | ब्यापिनी | गुदा |
| (१५) | म | गुलावी | विमला | पाद |
| (१६) | हि | श्वेत-शंख | तमोपहारिणी | कान |
| (१७) | धि | मोतिया | सूक्ष्मा | मुख |
| (१८) | यो | लाल | विश्वयोनि | आँख |
| (१९) | यो | लाल | जयावहा | जिह्वा |
| (२०) | नः | स्वर्णिम | पद्मालया | नाक |
| (२१) | प्र | नीलकमल | परा | मन |
| (२२) | चो | पीला | शोभा | अहं |
| (२३) | द | श्वेत | भद्ररूपा | महत्-बुद्धि,चित्त,अन्तः. |
| (२४) | यात् | श्वेत, लाल,काला | त्रिमूर्ति | सत्, रज, तम् |

गायत्री यन्त्र जो कि विश्व ब्रह्माण्ड का प्रतीक है, उपरोक्त तत्वों से मिलकर बनता है।

# गायत्री चक्रम्-प्रथम

गायत्री पंचांग में गायत्री के चौबीस अक्षरों से सम्बन्धित ऋषि, छन्द, देवता, वर्ण, तत्त्व, शक्ति, मुद्रा, कला तथा उनकी उपासना से मिलने वाली फलश्रुति का वर्णन कुछ इस तरह से किया गया है-

| क्र. | अक्षर | ऋषि | छन्द | देवता | वर्ण | तत्त्व |
|---|---|---|---|---|---|---|
| (१) | त | वशिष्ठ | गायत्री | अग्नि | पीला | पृथ्वी |
| (२) | त्स | भारद्वाज | उष्णिक | वायु | श्याम | जल |
| (३) | वि | गौतम | अनुष्टुप | सूर्य | श्वेत | तेज |
| (४) | तु | विश्वामित्र | बृहती | विद्युत् | नीला | वायु |
| (५) | र्व | भृगु | पंक्ति | यम | अग्नि | आकाश |
| (६) | रे | शांडिल्य | त्रिष्टुप | वरुण | अतिशुभ्र | गंध |
| (७) | णि | लोहित | व्यक्ति | वृहस्पति | हरित | रस |
| (८) | यं | गर्ग | कान्ति | पर्जन्य | अतिपीत | रूप |
| (९) | भ | शातातप | बृहती | इन्द्र | ताम्र | स्पर्श |
| (१०) | र्गो | सनत्कुमार | सत्या | गन्धर्व | लाल | शब्द |
| (११) | दे | शुनःशेप | पंक्ति | त्वष्टा | श्याम | वाक् |
| (१२) | व | भार्गव | विराट् | मैत्रावरुण | पीला | पाणि |
| (१३) | स्य | पाराशर | विभ्राट् | पौष्ण | विद्युत | चरण |
| (१४) | धी | पुण्डरीक | विस्तार | सुरेश | शुभ्र | उपस्थ |
| (१५) | म | कुत्स | कत्यायनी | मरुत | लाल | वायु |
| (१६) | हि | दक्ष | पंक्ति | सौम्य | नीला | श्रोत्र |
| (१७) | धि | कश्यप | त्रिष्टुप | अंगिरा | लाल | त्वचा |
| (१८) | यो | जमदग्नि | जगती | विश्वेदेवा | रुक्मसदृश | चक्षु |
| (१९) | यो | आत्रेय | महाजगती | अश्विनी | उद्यत्सूर्य | जिह्वा |
| (२०) | नः | विष्णु | महिष्मती | प्रजापति | श्वेत | नासिका |
| (२१) | प्र | अंगिरा | नृमती | कुबेर | रोचनाभ | मन |
| (२२) | चो | कुमार | भूछन्द | शंकर | चन्द्र सदृश | अहंकार |
| (२३) | द | मृगश्रृंग | भुवः | ब्रह्मा | पीला | बुद्धि |
| (२४) | यात् | भग | स्वः | विष्णु | शुभ्र वर्ण, | गुदा |

| शक्ति | मुद्रा | कला | फलश्रुति | पापहरफलम् |
|---|---|---|---|---|
| ब्राह्मी | सुमुखं | तापिनी | आयुष्यं | अज्ञानदोषहरं |
| गौरी | सम्पुटम् | सकला | आरोग्यं | उपपातकहरं |
| प्रभा | विततम् | विश्वा | ऐश्वर्यदम् | महापातकहरं |
| नित्या | विस्तृतं | तुष्टा | धनदम् | दुष्टग्रहदोषहरं |
| विश्वा | एकमुखं | वरदा | कामदम् | भ्रूणहत्यादोषहरं |
| भद्रा | द्विमुखं | रेवती | विद्यादम् | अगम्यागमनहरं |
| विलासिनी | त्रिमुखं | सूक्ष्मा | कामदम् | अभक्षाभक्ष्यहरं |
| वित्ता | चतुर्मुखं | ज्ञाना | धनदम् | पुरुषहत्याहरं |
| काली | पंचमुखं | भर्गा | सन्ततिदम् | गौहत्याहरं |
| जया | षण्मुखं | गोमती | अभीष्टदम् | स्त्रीहत्याहरं |
| कान्ता | अधोमुखं | दर्विका | इष्टकन्यादम् | ऐनसदोषहरं |
| शान्ता | शकटम् | वरा | कान्तिदम् | कायरादोषहरं |
| दुर्गा | यमपाशं | सिद्धान्ता | चिन्तितसिद्धि. | पितृभ्रातृदोषहरं |
| सरस्वती | ग्रंथितं | ध्योना | कीर्तिदम् | पूर्वजनितपापहरं |
| विद्युद्वार्णा | उन्मुखो. | मर्यादा | सौभाग्यदम् | सर्वपापहरं |
| विशाला | प्रलम्बम् | स्फुटा | अभीष्टसिद्धि. | प्रतिग्रहदोषहरं |
| विभूति | मुष्टिकं | बुद्धि | त्रैलोक्यमोहन. | प्रायरुपक्षेपहरं |
| कमला | मत्स्यं | योगमाया | पराश्रयप्रदम् | मन:सर्वपापहरं |
| कला | कूर्मं | योगान्तरा | देवप्रतिग्रह. | इन्द्रपदप्राप्ति: |
| पाष्मा | वराहकं | पृथ्वी | त्रैलोक्यदम् | विष्णुपदप्राप्ति: |
| अचला | सिंहाक्रातं | प्रभवा | परानुग्रह. | रुद्रपदप्राप्ति: |
| परा | महाक्रान्तं | उष्मा | तेजसोतिदम् | ब्रह्मपदप्राप्ति: |
| भृशोला | मुद्गरं | दिध्यामान | स्वर्गप्रदम् | सायुज्यपदप्राप्ति: |
| वज्रद्वाय | पल्लवं | निरंजना | स्वर्गलोकप्रदम् | सर्वव्यापित्वम् |

उपरोक्त चक्र को 'गायत्री चक्र' कहा जाता है। इसमें गायत्री महामंत्र में सन्निहित समस्त रहस्यों को बीज रूप में दर्शाया गया है। गायत्री उपासक इन रहस्यों के गूढ़ार्थ को समझकर उपासना करते और ऋद्धि-सिद्धि एवं स्वर्ग-मुक्ति के अधिकारी बनते हैं।

# गायत्री की चौबीस शक्तियाँ तथा सम्बन्धित २४ यन्त्र

## गायत्री की चौबीस शक्तियाँ तथा सम्बन्धित २४ यन्त्र :

यों तो गायत्री में सन्निहित शक्तियाँ और उनकी प्रतिक्रियाओं के नामों का उल्लेख अनेक साधना शास्त्रों में अनेक प्रकार से हुआ है। इनके नाम, रूपों में भिन्नता दिखाई पड़ती है। इस मतभेद या विरोधाभास से किसी असमंजस में पड़ने की आवश्यकता नहीं है। एक ही शक्ति को विभिन्न प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त करने पर उसके विभिन्न परिणाम निकलते हैं। दूध पीने पर व्यायाम प्रिय व्यक्ति पहलवान बनता है। विद्यार्थी की स्मरण शक्ति बढ़ती है। योगी को उस सात्त्विक आहार से साधना में मन लगता है। प्रसूता के स्तनों में दूध बढ़ता है। यह लाभ एक दूसरे से भिन्न है। इससे प्रतीत होता है कि दूध के गुणों का जो वर्णन किया गया है, उसमें मतभेद है। यह विरोधाभास ऊपरी है। भीतरी व्यवस्था को समझने पर यों कहा जा सकता है कि हर स्थिति के व्यक्ति को उसकी आवश्यकता के अनुसार इससे लाभ पहुँचता है। दूध के गुणों में जो

विरोधाभास जान पड़ता है, उसके लिए असमंजस नहीं करना चाहिए। कई बार शब्दों के अन्तर से भी वस्तु की भिन्नता मालूम पड़ती है। एक ही पदार्थ के विभिन्न भाषाओं में विभिन्न नाम होते हैं। उन्हें सुनने पर सहज-बुद्धि को भ्रम हो सकता है और अनेक पदार्थों की बात चलती लग सकती है। पर जब यह प्रतीत होगा कि एक ही वस्तु के भावभेद से अनेक उच्चारण हो रहे हैं तो उस अन्तर को समझने में देर नहीं लगती, जिससे एकता को अनेकता में समझा जा रहा था।

एक सूर्य के अनेक लहरों पर अनेक प्रतिबिम्ब चमकते हैं। व्यक्तियों की मन:स्थिति के अनुरूप एक ही उपलब्धि का प्रतिफल अनेक प्रकार का हो सकता है। धन को पाकर एक व्यक्ति व्यवसायी, दूसरा दानी, तीसरा अपव्ययी हो सकता है। धन के इन गुणोंको देखकर उसकी भिन्न प्रतिक्रियाएँ झाँकने की बात अवास्तविक है। वास्तविक बात यह है कि हर व्यक्ति अपनी इच्छानुसार धन का उपयोग करके अभीष्ट प्रयोजन पूरे कर सकता है। गायत्री के २४ अक्षरों में सन्निहित चौबीस शक्तियों का प्रभाव यह है कि मनुष्य की मौलिक विशिष्टताओं को उभारने में उनके आधार पर असाधारण सहायता मिलती है। इसे आन्तरिक उत्कर्ष या दैवी अनुग्रह-दोनों में से किसी नाम से पुकारा जा सकता है। कहने-सुनने में इन दोनों शक्तियों में जमीन आसमान जैसा अन्तर दिखता है और दो भिन्न बातें कही जाती प्रतीत होती हैं, किन्तु वास्तविकता यह है कि व्यक्तित्व में बढ़ी हुई विशिष्टताएँ सुखद परिणाम उत्पन्न करती हैं और प्रगति क्रम में सहायक सिद्ध होती हैं। इतना कहने से भी काम चलता है। भीतरी उत्कर्ष और बाहरी अनुग्रह वस्तुत: एक ही तथ्य के दो प्रतिपादन भर हैं । उन्हें अन्योन्याश्रित भी कहा जा सकता है।

गायत्री की २४ शक्तियों का वर्णन शास्त्रों ने अनेक नाम रूपों से किया है। उनके क्रम में अन्तर है। इतने पर भी इस मूल तथ्य में रत्ती भर भी अन्तर नहीं आता कि इस महाशक्ति के अवलम्बन से मनुष्य की उच्चस्तरीय प्रगति का द्वार खुलता है और जिस दिशा में भी उसके कदम बढ़ते हैं उसमें सफलता का सहज दर्शन होता है।

गायत्री ब्रह्म चेतना है। समस्त ब्रह्माण्ड के अन्तराल में वही संव्याप्त है। जड़ जगत् का समस्त संचालन उसी की प्रेरणा एवं व्यवस्था के अन्तर्गत हो रहा है। अन्य प्राणियों में उसका उतना ही अंश है, जिससे अपना जीवन निर्वाह सुविधा पूर्वक चला सकें। मनुष्य में उसकी विशेषता है। यह विशेषता सामान्य

रूप से मस्तिष्क क्षेत्र की अधिष्ठात्री बुद्धि के रूप में दृष्टिगोचर होती है। सुख-सुविधाओं को जुटाने वाले साधन इसी के सहारे प्राप्त होते हैं। असामान्य रूप से यह ब्रह्म चेतना प्रज्ञा है। यह अन्तःकरण की गहराई में रहती है और प्रायः प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहती है। पुरुषार्थी उसे प्रयत्न पूर्वक जगाते और क्रियाशील बनाते हैं। इस जागरण का प्रतिफल बहिरंग और अन्तरंग में मुक्ति बन कर प्रकट होता है। बुद्धिबल से मनुष्य वैभववान् बनता है, प्रज्ञाबल से ऐश्वर्यवान्। वैभव का स्वरूप है- धन, बल, कौशल, यश, प्रभाव। ऐश्वर्य का रूप महान् व्यक्तित्व है। इसके पाँच वर्ग हैं- सन्त, ऋषि, महर्षि, ब्रह्मर्षि, देवर्षि। पांच देवों का वर्गीकरण इन्हीं विशेषताओं के अनुपात से किया है। विभिन्न स्वरूप, विभिन्न क्षेत्रों में प्रकट होने वाले उत्कृष्टता के ही पाँच स्वरूप हैं। वैभव सम्पन्नों को दैत्य (समृद्ध) और ऐश्वर्यवान् महामानवों को दैव (उदात्त) कहा गया है।

वैभव उपार्जन करने के लिए आवश्यक ज्ञान और साधन किस प्रकार अर्जित किये जा सकते हैं, इसे शिक्षा कहते हैं। ऐश्वर्यवान् बनने के लिए जिस ज्ञान एवं उपाय को अपनाना पड़ता है, उसका परिचय विद्या से मिलता है। विद्या का पूरा नाम ऋतम्भरा प्रज्ञा या विद्या है। इसका ज्ञान पक्ष योग और साधन पक्ष तप कहलाता है। योग उपासना है और तप साधना। इन्हें अपनाना परम पुरुषार्थ कहलाता है। जिस अन्तराल में प्रसुप्त स्थिति में पड़ी हुई-बीजरूप से विद्यमान शक्ति को सक्रिय बनाने में जितनी सफलता मिलती है, वह उतना ही बड़ा महामानव-सिद्ध पुरुष, देवात्मा एवं अवतार कहलाता है।

ब्रह्म चेतना-गायत्री सर्वव्यापक होने से सर्व शक्तिमान् है। उसके साथ विशिष्ट घनिष्ठता स्थापित करने के प्रयास साधना कहलाते हैं। इस सान्निध्य में प्रधान माध्यम-भक्ति है। भक्ति अर्थात् भाव-संवेदना। भाव शरीर धारियों के साथ ही विकसित हो सकता है। साधना की सफलता के लिएं भाव भरी साधना अनिवार्य है। मनुष्य को जिस स्तर का चेतना-तन्त्र मिला है उसके दिव्य शक्तियों को देव-काया में प्रतिष्ठापित करने के उपरान्त ही ध्यान-धारणा का प्रयोजन पूरा हो सकता है। तत्त्वदर्शियों ने इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए समस्त दिव्य शक्तियों के स्वरूप मानव आकृति में प्रतिष्ठित किये हैं। यही देवता और देवियाँ हैं। गायत्री को आद्य शक्ति के रूप में मान्यता दी गई है। निराकार उपासक प्रातःकाल के स्वर्णिम सूर्य के रूप में उसकी धारणा करते हैं।

आद्यशक्ति गायत्री को संक्षेप में विश्वव्यापी ब्रह्म चेतना समझा जाना चाहिए। उसकी असंख्य तरंगें हैं अर्थात् उस एक ही महासागर में असंख्यों लहरें उठती हैं। उनके अस्तित्व पृथक्-पृथक् दीखते हुए भी वस्तुतः उन्हें सागर की जलराशि के अंग-अवयव ही माना जायगा। गायत्री की सहस्र शक्तियों में जिन २४ की प्रधानता है, वे विभिन्न प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने वाली शक्ति धाराएँ हैं। २४ अवतार-२४देवता-२४ ऋषि-२४ गीताएँ आदि में गायत्री के २४ अक्षरों का ही तत्त्वज्ञान विभिन्न पृष्ठभूमि पर बताया, समझाया गया है। इन २४ अक्षरों में सन्निहित शक्तियों की उपासना २४ देवियों के रूप में की जाती है।

तथ्य को समझने में बिजली के उदाहरण से अधिक सरलता पड़ेगी। बिजली सर्वत्र संव्याप्त ऊर्जा तत्त्व है। यह सर्वत्र संव्याप्त और निराकार है। उसे विशेष मात्रा में उपार्जित एवं एकत्रित करने के लिए बिजलीघर बनाये जाते हैं। उपलपब्ध विद्युत् शक्ति को स्विच तक पहुँचाया जाता है। स्विच के साथ जिस प्रकार का यन्त्र जोड़ दिया जाता हैं, बिजली उसी प्रयोजन को पूरा करने लगती है। बत्ती जलाकर प्रकाश, पंखा चलाकर हवा, हीटर से गर्मी, कूलर से ठण्डक, रेडियो से आवाज, टेलीविजन से दृश्य, मोटर से गति,स्पर्श से झटका जैसे अनेकानेक प्रयोजन पूरे होते हैं। इनका लाभ एवंअनुभव अलग-अलग प्रकार का होता है। इन सबके यन्त्र भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं। इतने पर भी विद्युत् शक्ति के मूल स्वरूप में कोई अन्तर नहीं आता है। इन विविधताओं को उसके प्रयोगों की भिन्नताएँ भर कहा जा सकता है। आद्य- शक्ति गायत्री एक ही है, पर उसका प्रयोग विभिन्न प्रयोजनों के लिए करने पर नाम-रूप में भिन्नता आ जाती है और ऐसा भ्रम होने लगता है कि वे एक दूसरे से पृथक् तो नहीं है? विचारवान जानते है कि बिजली एक ही है। उद्देश्यों और प्रयोगो की भिन्नता के कारण उनके नाम रूप में अंतर आता है और पृथकता होने जैसा आभास मिलता है। तत्त्वदर्शी इस पृथकता में भी एकता का अनुभव करते हैं। गायत्री की २४ शक्तियों के वारे में ठीक इसी प्रकार समझा जाना चाहिए।

पेड़ के कई अंग अवयव होते हैं- जड़, तना, छाल, टहनी, पत्ता, फूल, पराग, फल, बीज आदि। इन सबके नाम, रूप, स्वाद, गंध, गुण आदि भी सब मिला कर यह सारा परिवार वृक्ष की सत्ता में ही सन्निहित माना जाता है। गायत्री की २४ शक्तियाँ भी इसी प्रकार मानी जानी चाहिए। सूर्य के सात रंग, सात अश्व- पृथक्-पृथक् निरूपित किये जाते हैं। उनके गुण, धर्म भी अलग-अलग होते हैं। इतने पर भी ये सूर्य-परिवार के अन्तर्गत ही हैं। गायत्री की २४

शक्तियों की उपासना को विभिन्न प्रयोजनों के लिए विभिन्न नाम रूपों में किया जा सकता है, पर यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि वे सभी स्वतन्त्र एवं विरोधी हैं। उन्हें एक ही काया के विभिन्न अवयव एवं परस्पर पूरक मान कर चलना ही उपयुक्त है।

गायत्री का उपास्य सूर्य-सविता है। सविता का तेजस सहस्रांशु कहलाता है। उसके सात रंग सात अश्व हैं और सहस्र किरणें गायत्री की सहस्र शक्तियाँ हैं। इनका उल्लेख-संकेत उसके सहस्र नामों में वर्णित है। गायत्री सहस्रनाम प्रख्यात हैं। इनमें अष्टोत्तरशत अधिक प्रचलित हैं। इनमें भी २४ की प्रमुखता है। विश्वामित्र तन्त्र में इन २४ नामों का उल्लेख है। इन शक्तियों में से १२ दक्षिण पक्षीय हैं और १२ वाम पक्षीय। दक्षिण पक्ष को आगम और वाम पक्ष को निगम कहते हैं। कहा गया है-

**गायत्री बहुनामास्ति संयुक्ता देव शक्तिभिः।**
**सर्वसिद्धिषु व्याप्ता सा दृष्टा मुनिभिराहता॥**

अर्थात्-"गायत्री के असंख्य नाम हैं, समस्त देवशक्तियाँ उसी से अनुप्राणित हैं, समस्त सिद्धियों में उसी का दर्शन होता है।"

**चतुर्विंशति साहस्रं महा प्रज्ञा मुखं मतम्।**
**चतुर्विंशति रेवं तु मुख्यं मनीषिभिः॥**

अर्थात्- महा प्रज्ञा के २४ हजार नाम प्रधान हैं, इनमें २४ को अधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है।

**तत्रापि च सहस्रं तु प्रधानं परिकीर्तितम्।**
**अष्टोत्तरशतं मुख्यं तेषु प्रोक्तं महर्षिभिः॥**

अर्थात्-उन (२४००० नामों) में भी मात्र सहस्रनाम ही सर्वविदित हैं। सहस्रों में से एक सौ आठ चुने जा सकते हैं

**चतुर्विंशतिदेवास्याः गायत्र्याश्चाक्षराणि तु।**
**सन्ति सर्वसमर्थानि तस्याः सादान्वितानि च॥**

अर्थात्- चौबीस अक्षरों वाली सर्व समर्थ गायत्री के चौबीस नाम भी ऐसे ही हैं, जिनमें सार रूप से गायत्री के वैभव - विस्तार का आभास मिल जाता है।

**चतुर्विंशतिकेष्वेवं नामसु द्वादशैव तु।**
**वैदिकानि तथाऽन्यानि शेषाणि तान्त्रिकानि तु॥**

अर्थात्- गायत्री के चौबीस नामों में बारह वैदिक वर्ग के हैं और बारह तान्त्रिक वर्ग के।

**चतुर्विंशतु वर्णेषु चतुर्विंशति शक्तयः।**
**शक्तिरूपानुसारं च तासां पूजाविधीयते॥**

अर्थात्- गायत्री के चौबीस अक्षरों में चौबीस देवशक्तियाँ निवास करती हैं। इसलिए उनके अनुरूपों की ही पूजा-अर्चा की जाती है।

**आद्य शक्तिस्तथा ब्राह्मी, वैष्णवी शाम्भवीति च।**
**वेदमाता देवमाता विश्वमाता ऋतम्भरा॥**
**मन्दाकिन्यजपा चैव, ऋद्धि सिद्धि प्रकीर्तिता।**
**वैदिकानि तु नामानि पूर्वोक्तानि हि द्वादश॥**

अर्थात्- (१) आद्यशक्ति (२) ब्राह्मी (३) वैष्णवी (४) शाम्भवी (५) वेदमाता (६) देवमाता (७) विश्वमाता (८)ऋतम्भरा (९) मन्दाकिनी (१०)अजपा (११)ऋद्धि (१२) सिद्धि-इन बारह को वैदिकी कहा गया है।

**सावित्री सरस्वती ज्ञेया, लक्ष्मी दुर्गा तथैव च।**
**कुण्डलिनी प्राणग्रिश्च भवानी भुवनेश्वरी॥**
**अन्नपूर्णेति नामानि महामाया पयस्विनी।**
**त्रिपुरा चैवेति विज्ञेया तान्त्रिकानि च द्वादश॥**

अर्थात्-(१) सावित्री (२) सरस्वती (३) लक्ष्मी (४) दुर्गा (५) कुण्डलिनी (६) प्राणाग्नि (७) भवानी (८) भुवनेश्वरी (९) अन्नपूर्णा (१०) महामाया (११) पयस्विनी और (१२) त्रिपुरा-इन बारह को तान्त्रिकी कहा गया है।

बारह ज्ञान पक्ष की, बारह विज्ञान पक्ष की शक्तियों के मिलन से चौबीस अक्षर वाला गायत्री मन्त्र विनिर्मित हुआ। गायत्री तत्त्वबोध के अनुसार-

**गायत्रीमंत्रगावर्णाः प्रतीका निश्चितं मताः।**
**स्वस्वविशिष्टदेवीनां देवतानामथापि च॥**
**ऋषीणां शक्तिबीजानां यंत्राणामपि पार्वति।**
**सन्त्येषां च प्रयोगोऽथ रहस्यं तत्फलं पृथक्॥**
**तत्त्वज्ञानयुता योगरतास्ते हि तपस्विनः।**
**उद्भावयन्ति यान्येवं लाभमासादयन्ति च॥**

अर्थात्- गायत्री मंत्र का प्रत्येक अक्षर एक-एक विशिष्ट शक्तिधारा-देवी का, देवता का, ऋषि का, शक्तिबीज का, यन्त्र चक्र का प्रतीक है। इनमें से प्रत्येक के अपने-अपने प्रयोग और प्रतिफल है। जिन्हें तत्त्वज्ञानी, योगी तपस्वी प्रकट करते और लाभान्वित होते रहते हैं। इनका विस्तार पूर्वक विवेचन आगे किया जा रहा है।

❑

# गायत्री की चौबीस शक्तियाँ तथा सम्बन्धित २४ यन्त्र-वैदिकी

# गायत्री की चौबीस शक्तियाँ
# तथा
# सम्बन्धित २४ यन्त्र-वैदिकी

आद्य शक्तिस्तथा ब्राह्मी, वैष्णवी शाम्भवीति च।
वेदमाता देवमाता विश्वमाता ऋतम्भरा॥
मन्दाकिन्यजपा चैव, ऋद्धि सिद्धि प्रकीर्तिता।
वैदिकानि तु नामानि पूर्वोक्तानि हि द्वादश॥

अर्थात्-
(१) आद्यशक्ति (२) ब्राह्मी (३) वैष्णवी (४) शाम्भवी (५) वेदमाता (६) देवमाता (७) विश्वमाता (८) ऋतम्भरा (९) मन्दाकिनी (१०) अजपा (११) ऋद्धि (१२) सिद्धि

इन बारह को वैदिकी कहा गया है। शक्तियों एवं उनके यंत्रों का वर्णन अगले पृष्ठों पर किया गया है।

## १.आद्यशक्ति

यह ब्रह्म के लिए नारी बोधक अभिव्यक्ति है। इसे आदि चेतना का स्पंदन - संकल्प की शक्ति भी कह सकते हैं। संकल्प से सक्रियता और सक्रियता से पदार्थ आदि सृजन का क्रम मान्य है। इसे त्रिपदा सृजन, पालन एवं विलय या त्रिगुण सत्, रज, तम युक्त कहा गया है। इसे सर्वकामधुक् सभी सत् संकल्पों को पूरा करने वाली कहा गया है।

गायत्री यंत्रम्
शक्ति
आद्यशक्ति
परब्रह्म
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
तत्
ॐ
आध्यात्मि शक्ति
लौकिक शक्ति
प्रज्ञा
दीक्षा
फलश्रुति
आप्तकाम
सुसंस्कारिता

( अ )
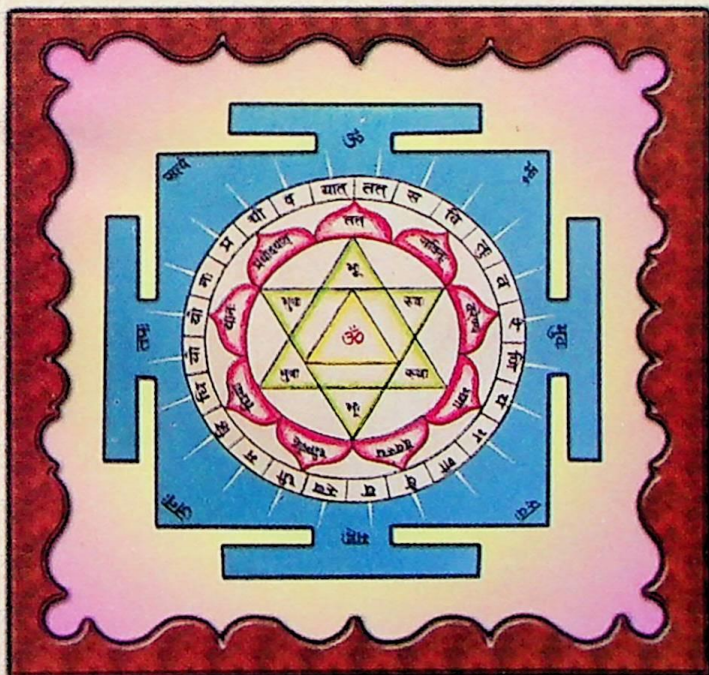
( ब )

## २.ब्राह्मी

सृष्टि की सृजनात्मक शक्ति प्रजापति ब्रह्मा की पर्याय। यह चतुर्मुख-चारों युगों, अन्तःकरण चतुष्टय से युक्त है। वेद-ज्ञान एवं कमण्डल-पात्रता का प्रतीक हैं। यह हंस की तरह मुक्ता चयन, सतोगुणी वृत्ति की क्षमता तथा अभीष्ट सृजन की शक्ति देने वाली है।

ब्राह्मी यंत्रम्
शक्ति
ब्राह्मी
ब्रह्म
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
स
ह्रीं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
श्रद्धा
युक्ता
फलश्रुति
अन्तर्जगत् में नई सृष्टि
सुसंतति की प्राप्ति

( अ )

ॐ
तत्
भर्गो
ह्रीं
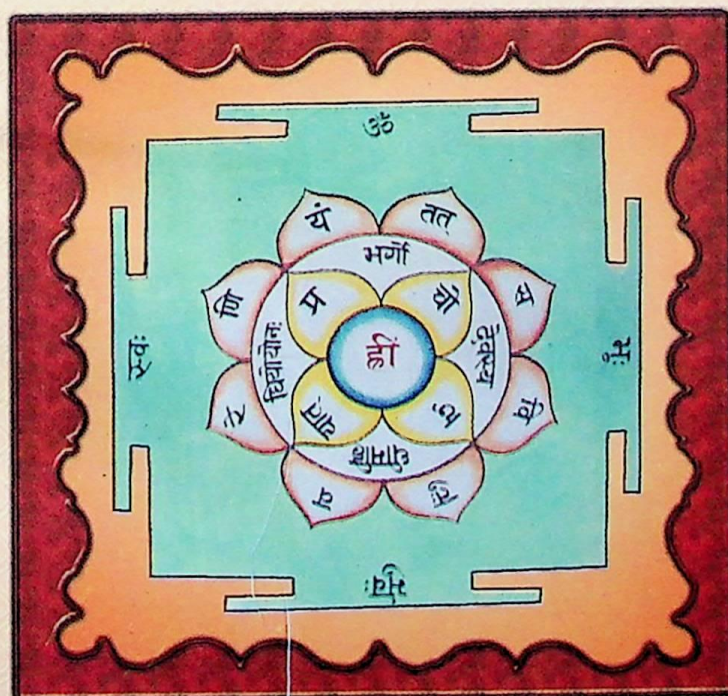
( ब )

## ३.वैष्णवी

विष्णु स्वरूपा, पालनकर्त्री । सृजन के साथ ही पोषण का क्रम प्रारम्भ होता है। सृष्टि की पोषक धाराएँ इसी की कलाएँ हैं। व्यवस्था स्वरूपा, सफलता प्रदायिनी यही है। आतंक के प्रतीक सर्प का भक्षक गरुड़ इसका वाहन है। शंख-सत्संकल्प, चक्र-प्रगति, गदा-शक्ति तथा पद्म-सौम्यता, पवित्रता के प्रतीक इसके आयुध हैं।

वैष्णवी यंत्रम्
शक्ति
वैष्णवी
विष्णु
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
वि
णं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
निष्ठा
क्षेमा
फलश्रुति
वर्चस् की प्राप्ति
वैभव, दीर्घायुष्य

(अ)

णं
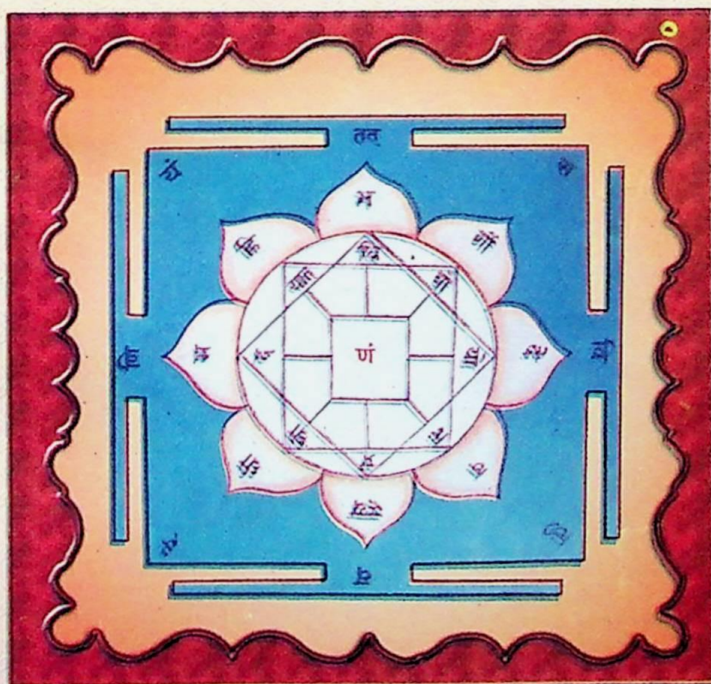
(ब)
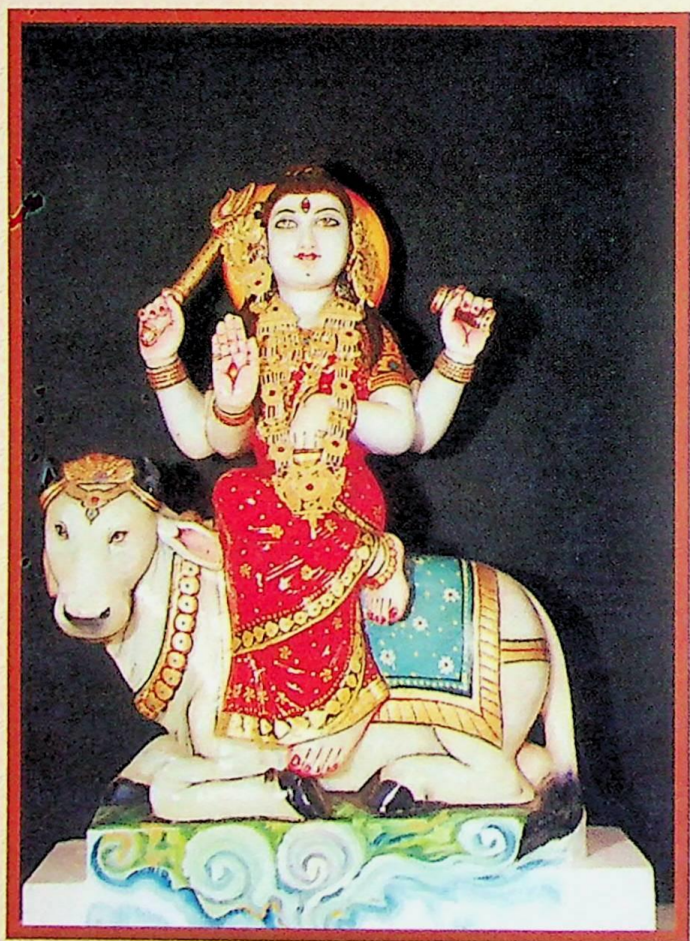
## ४. शाम्भवी

शं-कल्याण करने वाली । पोषण के साथ परिवर्तन का भी चक्र इस सृष्टि में चलता है। उसे कल्याणकारी दिशा में गतिशील रखने वाली शिवशक्ति । धर्मरूप वृषभ इसका वाहन है। तीसरा नेत्र कषाय- कल्मषों को नष्ट करने वाली प्रज्ञा का प्रतीक है। वासना, तृष्णा, अहंता तीन आसुरी पुरियों का उच्छेदन करने वाला त्रिशूल आयुध है। मस्तक पर चन्द्रमा-शान्ति एवं विकासशील चिन्तन का प्रतीक है।

शाम्भवी यंत्रम्
शक्ति
शांभवी
शिव
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
तुः
शं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
मुक्ता
शिवा
फलश्रुति
मुक्ति का अधिकार
अनिष्ट का निवारण

(अ)

ॐ
भुवः
स्वः
भूः
शं
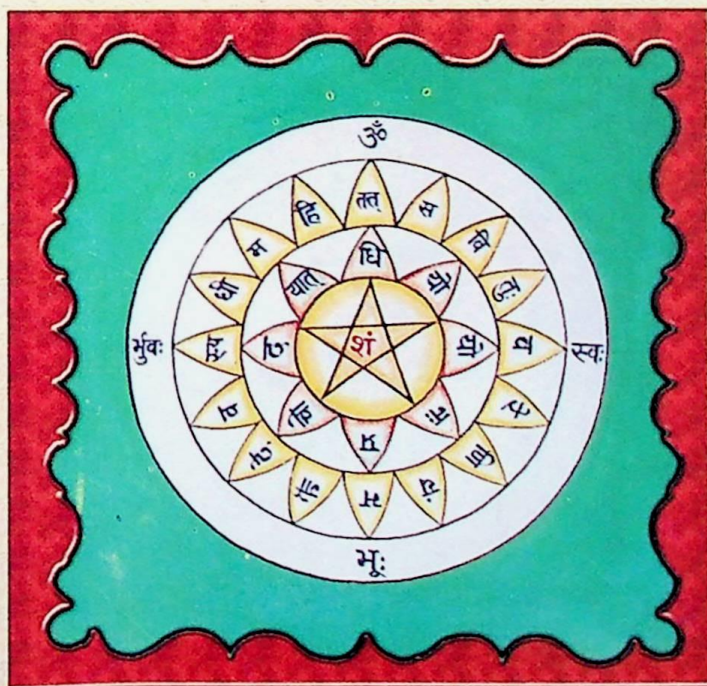
(ब)

## ५.वेदमाता

गायत्री को वेदमाता, ज्ञान की जननी कहा गया है। इसके चार चरणों से चारों वेदों का प्रादुर्भाव हुआ । ज्ञान प्रकट करने वाली वैखरी, मध्यमा, पश्यन्ती, परा आदि वाणियाँ तथा ज्ञान को क्रियान्वित करने वाले अन्त:करण-मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का जागरण एवं परिष्कार इसी की कृपा से होता है।

विद्या यंत्रम्
शक्ति
वेदमाता
आदित्य
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
वं
ओं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
स्मृति
विद्या
फलश्रुति
दैवी संदेशों की प्राप्ति
सद्ज्ञान

( अ )

ॐ
भूर्भुवः स्वः
तत्
वरेण्यं
भर्गो
देवस्य
धीमहि
धियो
यो नः
प्रचोदयात्
ओं
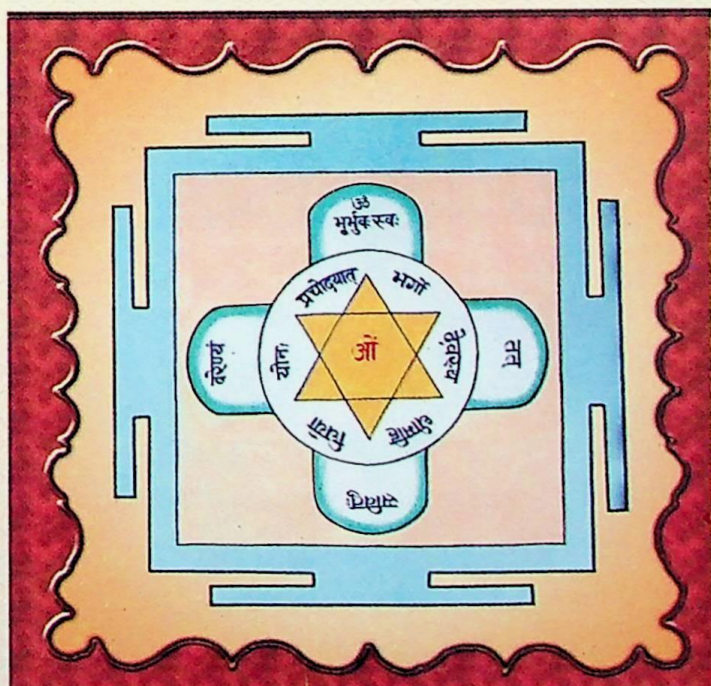
( ब )

## ६.देवमाता

गायत्री देवमाता भी है। इसका ज्ञानामृत रूपी पयपान करने वाले में देवत्व जाग जाता है। गायत्री द्वारा देववृत्तियों के विकास से आत्म सन्तोष, लोक सम्मान तथा दैवी अनुग्रह जैसे दिव्य लाभ होते हैं। व्यक्तित्व देवों जैसा आकर्षक तथा सदा उत्साह युक्त बना रहता है।

देवेश यंत्रम्
शक्ति
देवमाता
इन्द्र
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
रे
लृं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
दिव्या
देवयानी
फलश्रुति
दैवी व्यक्तित्व
सच्चरित्रता

( अ )

ॐ
प्रचोदयात्
तत् सवितुः
ॐ
वरेण्यं
ॐ
धीमहि
ॐ
धियो योनः
भूः
भुवः
स्वः
लृं
स्वः
भुवः
भूः
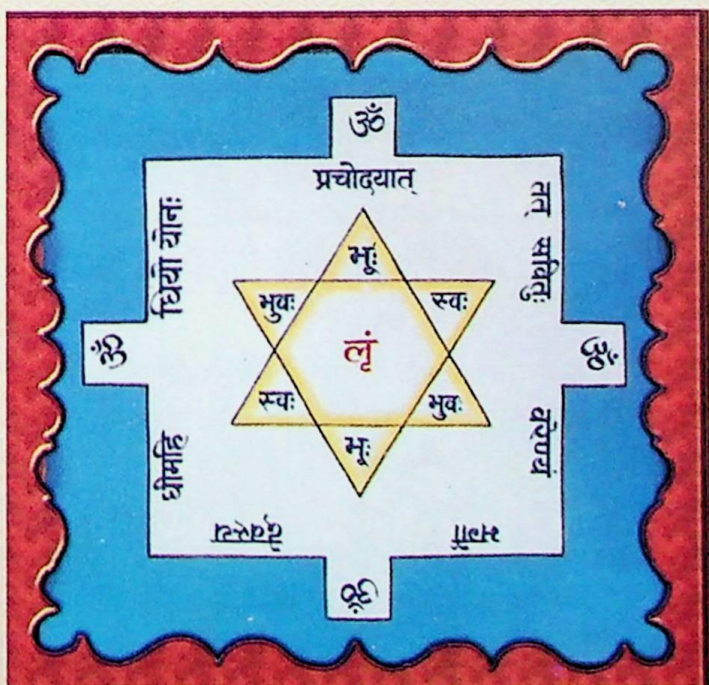
( ब )

## ७.विश्वमाता

विश्वमाता विश्व के सभी प्राणियों के बीच सद्भाव पैदा करने में समर्थ है। वसुधैव कुटुम्बकम् -विश्वबन्धुत्व की भावना को फलित करती है। हर मनुष्य को विवेक का अनुदान देकर वर्गभेद मिटाकर विश्व में एक भाषा, एक धर्म, एक व्यवस्था, एक संस्कृति की स्थापना करने में सक्षम है।

मातृ यंत्रम्
शक्ति
विश्वमाता
परमपिता
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
णि
स्त्रीं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
विराटा
ध्येया
फलश्रुति
विराट् की अनुभूति
सहयोग की प्राप्ति

( अ )

ॐ
दे
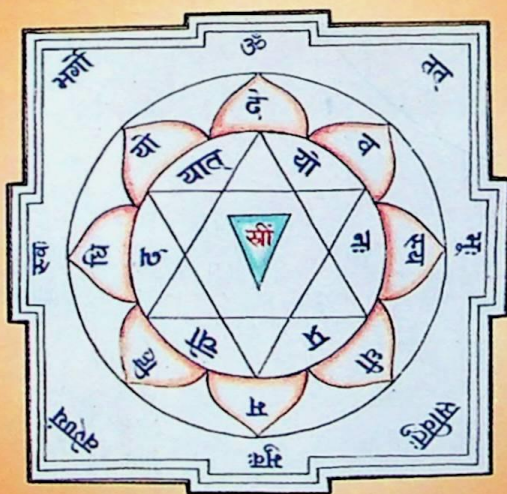
( ब )

## ८. ऋतम्भरा

ऋतम्भरा प्रज्ञा के जागते ही माया के तमाम बन्धन कट जाते हैं। इसी के सहारे दिव्य दर्शन की क्षमता प्राप्त होती है। सामान्य बुद्धि तो शोषण-उत्पीड़न में भटक जाती है। ऋतम्भरा की कृपा से मनुष्य महामानव, ऋषि, देवमानव जैसा महान् बन जाता है। आत्मबोध,ब्रह्म साक्षात्कार जैसे लाभ इसी की अनुकम्पा से प्राप्त होते हैं।

ऋत यंत्रम्
शक्ति
ऋतम्भरा
सत्यनारायण
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
यं
ॠं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
सत्या
सुमुखी
फलश्रुति
स्थितप्रज्ञता
न्याय प्राप्ति

( अ )
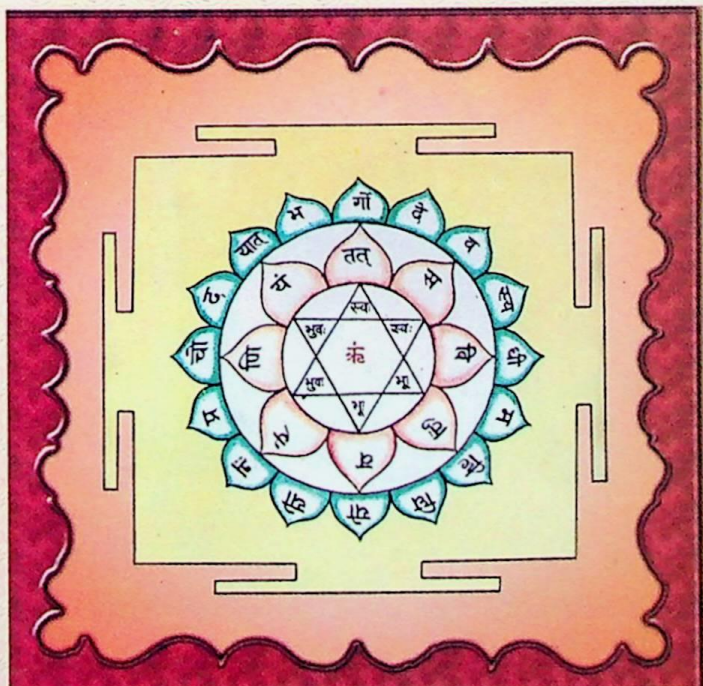
( ब )
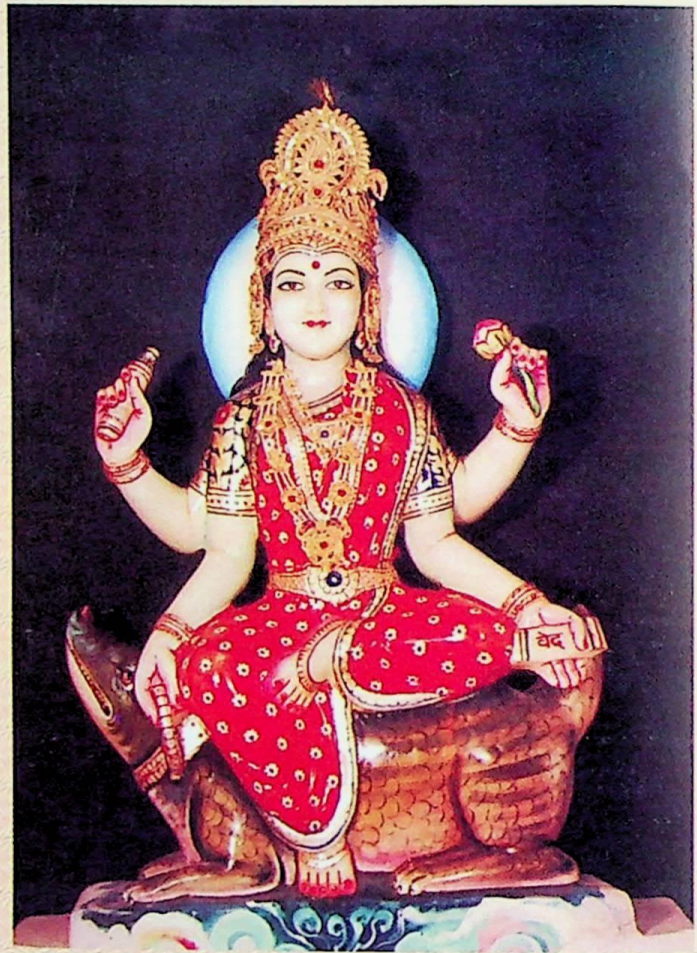
## ९. मन्दाकिनी

यह पवित्रता- निर्मलता प्रदायिनी है। गंगा और गायत्री की जयंती एक ही दिन मनायी जाती है। वे एक ही तथ्य की स्थूल एवं सूक्ष्म अभिव्यक्तियाँ हैं। यह मन - बुद्धि - चित्त को निर्मल बनाती है। निर्मल मन वाले सहज ही आत्म दर्शन एवं ईश्वर दर्शन के अधिकारी बन जाते हैं।

निर्मला यंत्रम्
शक्ति
मन्दाकिनी
पतित पावन
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
भ
उं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
निर्मला
विरजा
फलश्रुति
निर्मलता
पापनाश

( अ )

स्व
स्व
भुव:
भुव:
भू:
भू:
उं
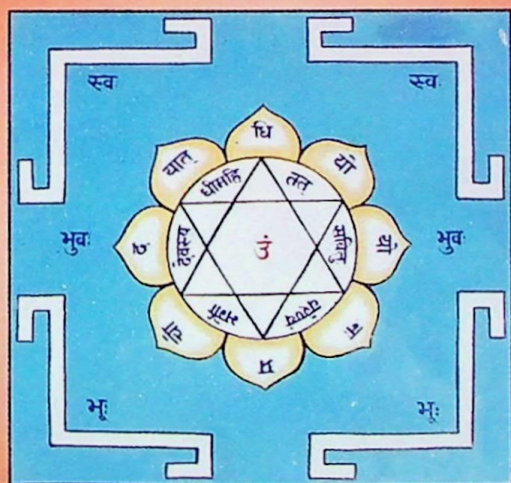
( ब )

## १०. अजपा

जप द्वारा साधक अपने आपको दिव्य प्रवाहों से जोड़ता है। अजपा की कृपा से वह प्रक्रिया अनायास-सतत् चलने लगती है। यह 'सो' हं भाव को श्वास के साथ जोड़ देती है। श्वास खीचते समय 'सो' का स्वर तथा छोड़ते समय 'ह' का स्वर स्पंदित होता रहता है। ॐकार, शब्द-ब्रह्म, नाद साधना इसी के रूप हैं। यह साधक को आत्मस्थ बनाती है।

निरंजना यंत्रम्
शक्ति
अजपा
मरुत
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
गों
यं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
निरंजना
सहजा
फलश्रुति
शान्ति
भयनाश

(अ)

यं
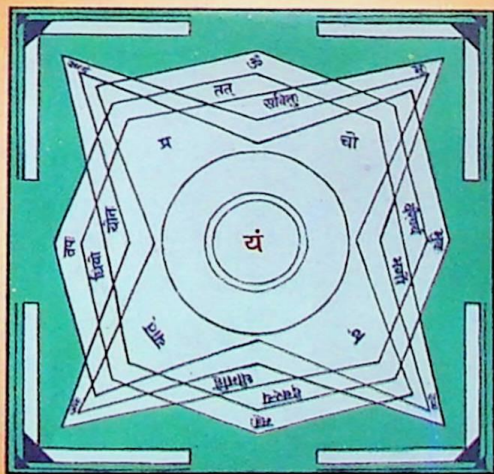
(ब)

# ११. ऋद्धि

ऋद्धि -सिद्धि गणपति की सहचरी कही गयीं हैं। इन्हीं के संयोग से जीवन में नेतृत्व के गुण तथा सफलता के सूत्र बनते हैं। ऋद्धि आत्मिक-आन्तरिक विभूतियों को कहते हैं। आत्मबल, अंतरंग उल्लास, स्नेह-सहयोग इसी की विभिन्न धाराएँ हैं। यह दैवी सम्पदा उपयोग करने से घटती नहीं, बढ़ती है। साधक बाहरी आकर्षणों में भटकता नहीं। ऋद्धि के साथ ही सिद्धि भी आती है।

ऋद्धि यंत्रम्
शक्ति
ऋद्धि
गणेश
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
दे
गं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
तुष्टा
भद्रा
फलश्रुति
तुष्टि
गुण संवर्धन

( अ )

तत्
सवितु
प्रचोदयात्
यो:
न:
गं
देवस्य
धियो
धीमहि
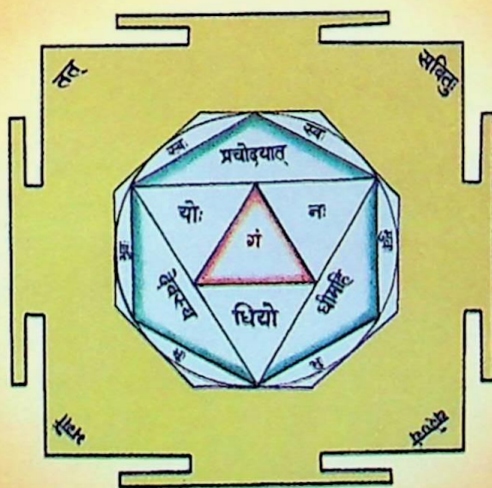
( ब )
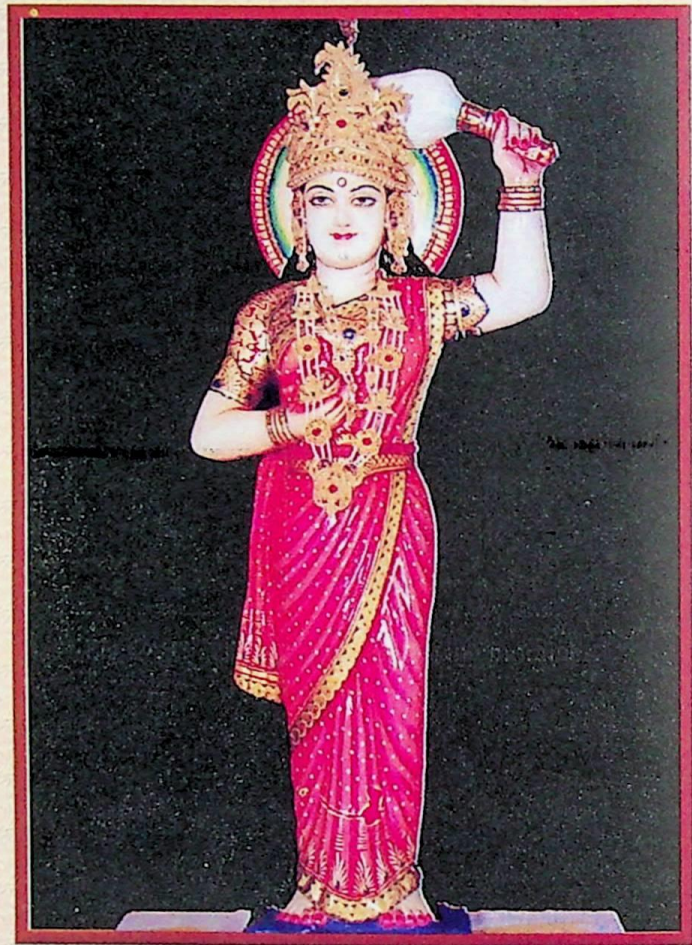
## १२.सिद्धि

यह लौकिक कुशलता, समर्थता प्रदायिनी है। सिद्धि कोई जादुई खेल नहीं, एक उत्कृष्ट साधना है। सिद्धहस्त वह, जिसके हाथ का काम बिगड़े नहीं- बढ़िया बने । सिद्ध जीवन वह जो बहके नहीं- दिव्य अनुशासन में चले। कला- कौशल, शिल्प-संगीत सभी में साधना से सिद्धि का अकाट्य नियम है। गायत्री की यह धारा सभी सिद्धियाँ उपजाने में समर्थ है।

सिद्धि यंत्रम्
शक्ति
सिद्धि
क्षेत्रपाल
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
व
क्षं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
सूक्ष्मा
योगिनी
फलश्रुति
तन्मयता
कार्य कुशलता

( अ )

ॐ
भूः
भुवः
स्वः
तत् सवितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि
महः
क्षं
जनः
तपः
धि
यो
यो
सत्यं
नः
प्रचोदयात्
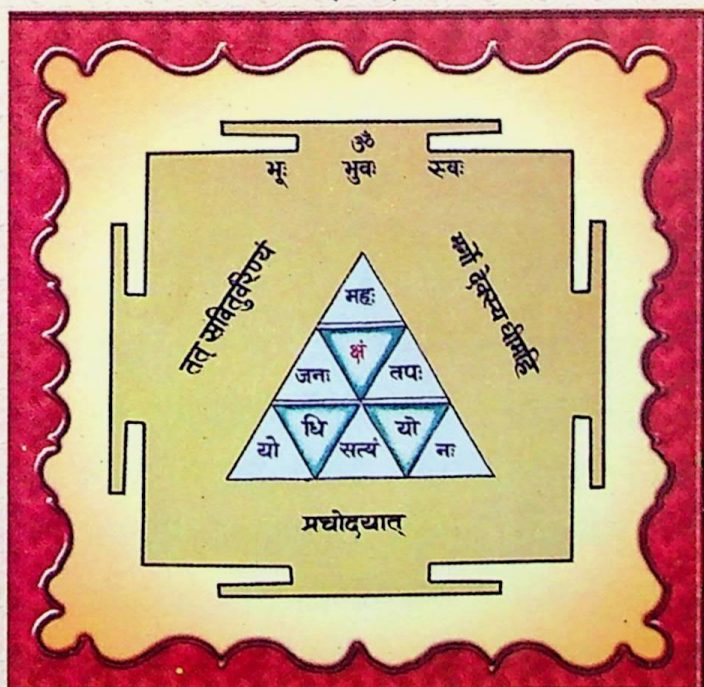
( ब )

# गायत्री माहात्म्य
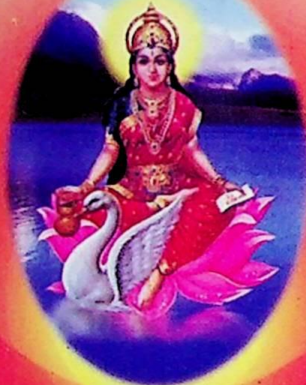
गायत्री की महिमा को वेद, शास्त्र, पुराण सभी वर्णन करते हैं। अथर्व वेद में गायत्री की स्तुति की गई है, जिसमें उसे आयु, प्राण, शक्ति, पशु, कीर्ति, धन और ब्रह्मतेज प्रदान करने वाली कहा है।

**स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्। आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्॥**

**( अथर्व वेद-१९-७१.१ )**

अर्थात्-हम साधकों द्वारा स्तुत (पूजित) हुई, अभीष्ट फल प्रदान करनेवाली वेदमाता (गायत्री) द्विजों को पवित्रता और प्रेरणा प्रदान करने वाली हैं। आप हमें दीर्घ जीवन, प्राणशक्ति, सुसंतति, श्रेष्ठ पशु (धन), कीर्ति, धन-वैभव और ब्रह्मतेज प्रदान करके ब्रह्मलोक के लिए प्रस्थान करें।

# गायत्री की २४ शक्तियों का पृथक्-पृथक् तात्त्विक विवेचन

# गायत्री की २४ शक्तियों का पृथक्-पृथक् तात्त्विक विवेचन

## १-आद्यशक्ति गायत्री

'तत्' वर्णस्य तु देवीं तामाद्यां शक्तिं वदन्त्यथ।

देवतां च परंब्रह्म बीजमोङ्कारमेव च॥

विश्वामित्रमृषिं यन्त्रं गायत्रीं फलमस्य च॥

प्रज्ञादीक्षे विभूतिद्वे संस्कारित्वाऽऽप्तकामते॥

अर्थात्- 'तत्' अक्षर की देवी-'आद्यशक्ति' देवता-'परब्रह्म' बीज 'ॐ' ऋषि-'विश्वामित्र' यन्त्र-'गायत्रीयन्त्रम्', विभूति- 'प्रज्ञा एवं दीक्षा' तथा प्रतिफल- 'आप्तकाम एवं सुसंस्कारिता है।'

ब्रह्म एक है। उसकी इच्छा क्रीड़ा-कल्लोल की हुई। उसने एक से बहुत बनना चाहा, यह चाहना-इच्छा ही शक्ति बन गई। इच्छा शक्ति ही सर्वोपरि है। उसी की सामर्थ्य से यह समस्त संसार बन कर खड़ा हो गया है। जड़-चेतन सृष्टि के मूल में परब्रह्म की जिस आकांक्षा का उदय हुआ, उसे ब्राह्मी शक्ति कहा गया। यही गायत्री है। संकल्प से प्रयत्न, प्रयत्न से पदार्थ का क्रम सृष्टि के आदि से बना है और अनन्तकाल से चला आया है। प्रत्यक्ष तो पदार्थ ही दीखता है। पदार्थों पर ही हम अनुभव और उपयोग करते हैं। यह स्थूल हुआ। सूक्ष्मदर्शी वैज्ञानिक जानते हैं कि पदार्थ की मूल सत्ता अणु संगठन पर आधारित है। यह अणु और कुछ नहीं, विद्युत् तरंगों से बने हुए गुच्छक मात्र हैं। यह सूक्ष्म हुआ। उससे गहराई में उतरने वाले तत्त्वदर्शी अध्यात्मवेत्ता जानते हैं कि विश्वव्यापी विद्युत् तरंगे भी स्वतन्त्र नहीं हैं, वे ब्रह्मचेतना की प्रतिक्रिया भर हैं। जड़ जगत् की पदार्थ सम्पदा में निरन्तर द्रुतगामी हलचलें होती हैं। इन हलचलों के पीछे उद्देश्य, संतुलन, विवेक, व्यवस्था का परिपूर्ण समन्वय है। 'इकॉलॉजी' के ज्ञाता भली प्रकार जानते हैं कि सृष्टि के अन्तराल में कोई अत्यन्त दूरदर्शी, विवेकयुक्त

सत्ता एवं सुव्यवस्था विद्यमान है। इसी सामर्थ्य की प्रेरणा से सृष्टि की समस्त हलचलें किसी विशिष्ट उद्देश्य के लिए गतिशील रहती हैं। यही सत्ता 'आद्यशक्ति' है-इसी को गायत्री कहा गया है। साक्षी, दृष्टा, निर्विकार, निर्विकल्प, अचिन्त्य, निराकार, व्यापक ब्रह्म की सृष्टि व्यवस्था जिस सामर्थ्य के सहारे चलती है, वही गायत्री है।

गायत्री त्रिपदा है। गंगा-यमुना-सरस्वती के संगम को तीर्थराज कहते हैं। गायत्री मन्त्रराज है। सत्-चित्-आनन्द-'सत्यं शिवं सुन्दरम्', सत-रज-तम, ईश्वर-जीव-प्रकृति,भूलोक, भुवःलोक, स्वःलोक का विस्तार त्रिपदा है। पदार्थों में ठोस, द्रव, वाष्प, प्राणियों में जलचर, थलचर, नभचर-सृष्टिक्रम के उत्पादन, अभिवर्धन, परिवर्तन, गायत्री के ही तीन उपक्रम हैं। सर्दी, गर्मी, वर्षा की ऋतुएँ, दिन-रात्रि-संध्या-तीन काल में महाकाल की हलचलें देखी जा सकती हैं। प्राणाग्नि, कालाग्नि, योगाग्नि के रूप में त्रिपदा की ऊर्जा व्याप्त है।

सृष्टि के आदि में ब्रह्म का प्रकटीकरण हुआ- यह ॐकार है। ॐकार के तीन भाग हैं- अ उ म्। उनके तीन विस्तार भूः-भुवः-स्वः हैं। उनके तीन चरण हैं। इस प्रकार शब्द ब्रह्म ही पल्लवित होकर गायत्री मन्त्र बना।

पौराणिक कथा के अनुसार सृष्टि के आदि में विष्णु की नाभि से उत्पन्न कमल पर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। उन्हें आकाश वाणी द्वारा गायत्री मन्त्र मिला और उसकी उपासना करके सृजन की क्षमता प्राप्त करने का निर्देश हुआ। ब्रह्मा ने सौ वर्ष तक गायत्री का तप करके सृष्टि रचना की शक्ति एवं सामग्री प्राप्त की। यह कथा भी शब्द ब्रह्म की भाँति गायत्री को ही आद्य शक्ति सिद्ध करती है। ज्ञान योग, कर्म योग, भक्ति योग के अन्तर्गत संसार की समस्त विचार सम्पदा और भाव विविधता त्रिपदा गायत्री की परिधि में ही सन्निहित है।

आद्यशक्ति के साथ सम्बन्ध मिलाकर साधक सृष्टि की समीपता तक जा पहुँचता है और उन विशेषताओं से सम्पन्न बनता है जो परब्रह्म में सन्निहित हैं। परब्रह्म का दर्शन एवं विलय ही जीवन लक्ष्य है। यह प्रयोजन आद्यशक्ति की सहायता से संभव होता है।

आद्यशक्ति का साधक पर अवतरण ऋतम्भरा प्रज्ञा के रूप में होता है और साधक ब्रह्मर्षि बन जाता है। नर पशुओं की प्रवृत्तियाँ वासना, तृष्णा, अहंता के कुचक्र में परिभ्रमण करती रहती हैं। नरदेवों की अन्तरात्मा में निष्ठा, प्रज्ञा एवं श्रद्धा की उच्च स्तरीय आस्थाएँ प्रगाढ़ बनती हैं और परिपक्व होती चली जाती हैं। निष्ठा अर्थात् सत्कर्म, प्रज्ञा अर्थात् सद्ज्ञान। श्रद्धा-अर्थात् सद्भाव। इन्हीं की सुखद प्रतिक्रिया-तृप्ति, तुष्टि एवं शान्ति के रूप में साधक के सामने आती है। तृप्ति अर्थात् संतोष, तुष्टि अर्थात् समाधान। शान्ति अर्थात् उल्लास। उच्चस्तरीय भाव-संवरण की उपलब्धि होने पर साधक सदा अपनी आस्थाओं का आनन्द लेते हुए रस विभोर हो जाता है। शोक-संताप से उसे आत्यन्तिक छुटकारा मिल जाता है। शरणागति के लिए बढ़ता हुआ हर कदम साधक को इन्हीं विभूतियों से लाभान्वित करता चलता है।

संक्षेप में आद्यशक्ति गायत्री के स्वरूप, वाहन आयुध आदि का विवेचन इस प्रकार है-

आद्यशक्ति के एक मुख, दो हाथ- अपनी निजी माता का बोध कराने वाली सहज छवि। हाथों में पुस्तक एवं जल कमण्डलु-सद्ज्ञान एवं श्रद्धा-स्नेहयुक्त पात्रता के प्रतीक हैं। वाहन-हंस-नीर-क्षीर विवेक, मुक्ता चयन एवं उज्ज्वलता का प्रतीक है। चित्र संख्या १=अ, ब में देखकर आद्यशक्ति के समग्र स्वरूप को समझा जा सकता हैं।

❑

## २-ब्राह्मी

**'स' वर्णस्य देवी च ब्राह्मी ब्रह्मा तु देवता।**
**ऋषिर्वशिष्ठो यन्त्रं च ब्राह्मी भूतिद्वयं पुनः।**
**श्रद्धायुक्ते च विद्यन्ते फलं सृष्टिः सुसन्ततिः॥**

अर्थात्- 'स' अक्षर की देवी 'ब्राह्मी', देवता-'ब्रह्मा', बीज-'ह्रीं' ऋषि-'वशिष्ठ', यन्त्र 'ब्राह्मीयंत्रम्', विभूति 'श्रद्धा एवं युक्ता' और प्रतिफल-'सृजन शक्ति एवं सुसन्तति है।'

त्रिदेव प्रसिद्ध हैं-ब्रह्मा, विष्णु, महेश, उत्पादन, अभिवृद्धि, परिवर्तन। इन्हें ब्राह्मी कहा जाता है। सृजन - उत्पादन में संलग्नता संसार की सबसे बड़ी विशेषता है। यह क्षमता धरती में हैं और जननी में है। अपने उत्पादनों से दूसरों को निहित करना और स्वयं धन्य बनना, इसी उत्कृष्टता के कारण धरती माता और जननी माता गौरवान्वित होती हैं। यह ब्राह्मी माता के अनुदान हैं, जिन्हें जो जितनी मात्रा में उपलब्ध करता है, वह उसी अनुपात के महामानव बनता चला जाता है। ध्वंस दानवों का और सृजन देवों का सिद्धान्त है । इससे सृजन क्रियाओं में संलग्न मनुष्य ही देव-मानव कहलाते हैं। गायत्री की ब्राह्मी शक्ति की साधना करने से साधक में ब्रह्म तेजस्-ब्राह्मणत्व विकसित होता है। ब्राह्मण पृथ्वी के देवता माने जाते हैं। उन्हें भूदेव कहते हैं।

सत्-रज-तम में-सत्यं शिवं सुन्दरम् में प्रथम वर्ग सत् या सत्य का है। यही ब्राह्मी विशेषता है। उसका अवलम्बन ग्रहण करने से व्यक्तित्व-स्वभाव में सतोगुण बढ़ता है और आचार, व्यवहार में सतोगुण का-पवित्रता एवं सादगी का अनुदान निरन्तर बढ़ता जाता है।

ब्राह्मी हंस वाहिनी है। उसके एक हाथ में पुस्तक दूसरे में कमंडलु है। किशोरी कन्या उसकी वय है। इन अलंकारों से ब्रह्मशक्ति का स्वरूप समझने में सहायता मिलती है और उसका अनुग्रह पाने का द्वार खुलता है। गायत्री का वाहन सामान्य हंस नहीं, मनुष्यों में पाये जाने वाले राजहंस-परमहंस हैं। राजहंस-शालीन, सज्जन, श्रेष्ठ, आदर्श। परमहंस-तत्त्वज्ञानी, तपस्वी, परमार्थी, जीवनमुक्त। गायत्री उपासना के आधार पर साधक सामान्य मानवी स्तर से ऊंचा उठकर राजहंस बनता है। साधना की परिपक्वता से वह परमहंस की स्थिति तक पहुँच जाता है। देवात्मा सिद्ध पुरुष के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

नीर-क्षीर विवेक हंस का प्रधान गुण है। दूसरा है-मोती ही चुगना-कौड़ी को हाथ न लगाना। यही सतोगुण है। उत्कृष्ट चिन्तन-सद्विवेक और औचित्य को ही अपनाना-अनौचित्य से बचे रहना-यही हंस प्रवृत्ति है। ब्राह्मी चेतना का स्वरूप यही है। गायत्री का हंस वाहन है। अर्थात् हंस प्रवृत्ति के व्यक्तित्वों को ही वह महाशक्ति अपने निकटतम रखती है। दूसरा तात्पर्य यह है कि इस उपासना के फलस्वरूप साधक का सतोगुण क्रमशः बढ़ता ही चला जाता है।

पुस्तक से सद्ज्ञान और कमंडलु से सत्कार्य का संकेत है, गायत्री शक्ति के दोनों हाथों में यही वरदान रखे हैं। ब्राह्मी साधना से अन्तःकरण में उत्कृष्ट चिन्तन की तरंगें उठती हैं। क्रिया-कलाप में सत्कर्म करने का उल्लास एवं साहस उभरता है। गायत्री को ब्राह्मण की कामधेनु कहा गया है। उसका तात्पर्य यह है कि ब्राह्मी शक्ति कामधेनु का पयपान करने वाला साधक सच्चे अर्थों में ब्राह्मण बनता है और आत्मसंतोष, लोक सम्मान तथा दैवी अनुग्रह के तीनों वरदान प्राप्त करता है।

ऋद्धियों और सिद्धियों पर अधिकार ब्रह्म-परायण का होता है। जिसका बाह्य और अन्तर जीवन पवित्र है, उसी को मन्त्र सिद्धि उपलब्ध होती है। इसके लिए आवश्यक पात्रता गायत्री की ब्रह्म धारा के सम्पर्क से प्राप्त होती है।

सावित्री-सत्यवान की कथा में सावित्री ने सत्यवान को वरण किया था और उसे मृत्यु के मुख से छुड़ाने तथा लकड़हारे से राजा बना देने का अनुदान प्राप्त किया था। सत्यवान साधक, सावित्री की सच्ची सहायता प्राप्त कर सके, ब्राह्मी शक्ति के माध्यम से यही पृष्ठभूमि बनती है।

संक्षेप में ब्राह्मी शक्ति के वाहन, आयुध का विवेचन निम्न प्रकार है:-

ब्राह्मी के चार मुख-चतुर्मुखी प्रतिभा-समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, बहादुरी आदि वृत्तियों तथा चार हाथ-चार पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) के प्रतीक हैं। हाथों में पुस्तक से वेदज्ञान, माला से सतत ध्यान-जागरूकता, जल-कमण्डलु से आर्द्रता तथा आशीर्वाद मुद्रा से सतत अनुग्रह का बोध। वाहन हंस-शुभ्र आकांक्षाओं का प्रतीक है। चित्र संख्या २-अ, ब में ब्राह्मी व उसके यंत्र शक्ति की स्पष्ट झांकी की जा सकती हैं।

❑

## ३-वैष्णवी

**'वि' अक्षरस्य च देवी सा वैष्णवी देवता च सः।**
**विष्णुः 'णं' बीजमेतस्य वैष्णवी यन्त्रमेव च॥**
**ऋषिः स नारदो भूती निष्ठाक्षेमे च सन्त्यपि।**
**फलं वर्चोऽथ तद्दिव्यं वैभवं द्वयमेव तु॥**

अर्थात् 'वि' अक्षर की देवी-'वैष्णवी', देवता-'विष्णु', बीज-'णं', यन्त्र-'वैष्णवीयंत्रम्', ऋषि-'नारद', विभूति-'निष्ठा एवं क्षेमा' और प्रतिफल-'वर्चस्' एवं दिव्य 'वैभव' है।

विष्णु की शक्ति वैष्णवी है। वैष्णवी अर्थात् पालनकर्त्री। इसे 'व्यवस्था' भी कह सकते हैं। उत्पादन 'आरम्भ' है। अभिवर्धन 'मध्य' है। एक है शैशव—दूसरा है यौवन। यौवन में प्रौढ़ता, परिपक्वता, सुव्यवस्था की समझदारी भरी होती है॥ साहस और पराक्रम का पुट रहता है। यही रजोगुण है। त्रिपदा की दूसरी धारा वैष्णवी है। इसे गंगा की सहायक यमुना कहा जा सकता है। इस साधना से साधक को उन सिद्धियों-विभूतियों एवं सत्प्रवृत्तियों की उपलब्धि होती है जिसके आधार पर वह यथार्थवादी योजनाएँ बनाने में ही नहीं, उन्हें सुव्यवस्था, तन्मयता एवं तत्परता के सहारे आगे बढ़ाने और सफल बनाने में समर्थ होता है।

वैष्णवी को दूसरे अर्थों में लक्ष्मी कह सकते हैं। भौतिक क्षेत्र में इसी को सम्पन्नता और आत्मिक क्षेत्र में इसी को सुसंस्कारिता के नाम से पुकारा जाता है। विभिन्न स्तरों की सफलताएँ इसी आधार पर मिलती हैं। वैष्णवी का वाहन गरुड़ है। गरुड़ की कई विशिंष्टताएँ हैं। एक तो उसकी दृष्टि अन्य सब पक्षियों की तुलना में अधिक तीक्ष्ण होती है। सुदूर आकाश में ऊँची उड़ान उड़ते समय भी जमीन पर रेंगता कोई सर्प मिल जाय तो वह उस पर बिजली की तरह टूटता है और क्षण भर में ही तोड़-मरोड़ कर रख देता है। गरुड़ की चाल अन्य पक्षियों की तुलना में कहीं अधिक तीव्र होती है। आलस्य और प्रमाद उससे कोसों दूर रहते हैं। उसे जागरूकता का प्रतीक माना जाता है।

अव्यवस्था रूपी सर्प से घोर शत्रुता रखने वाली तथा उसे निरस्त करने के लिए टूट पड़ने वाली प्रकृति गरुड़ है। दूरदर्शिता अपनाने वाले लोगों को गरुड़ कहा जा सकता है। जिन्हें आलस्य है न प्रमाद, ये गरुड़ हैं। ऐसे ही प्रबल पराक्रमी लोगों को गरुड़ की तरह वैष्णवी का प्यार प्राप्त होता है।

वैष्णवी की उपासना से समृद्धि का पथ प्रशस्त होता चला जाता है। वैष्णवी की साधना का प्रतिफल सम्पन्नता है। ऐसे साधकों की आन्तरिक दरिद्रता दूर हो जाती है। ये सद्गुण सम्पदाओं के धनी होते हैं, उन्हें सच्चे अर्थों में विभूतिवान् कहा जा सकता है। साथ ही उन्हें मानसिक दरिद्रता का भी दुःख नहीं भोगना पड़ता है।

विष्णु का नारी स्वरूप वैष्णवी है। उसके आयुध भी चार हैं—शंख, चक्र, गदा, पद्म। जहाँ चार हाथ हैं, वहाँ यह चारों हैं। जहाँ दो ही हाथ हैं वहाँ शंख और चक्र दो ही आयुध हैं। शंख का अर्थ है-संकल्प, सुनिश्चिय का प्रकटीकरण- उद्घोष। चक्र का अर्थ है—गति—सक्रियता। गदा का अर्थ है शक्ति। पद्म का अर्थ है—सुषुमा—कोमलता। इन चारों को देव गुण भी कह सकते हैं। देव अनुदान, वरदान भी देते हैं। जो आयुध विष्णु के हैं वे वैष्णवी के हैं। जिसमें यह चतुर्विध आकर्षण होगा- उस पर वैष्णवी की कृपा बरसेगी। उसी तथ्य को इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि जिन पर वैष्णवी का अनुग्रह होगा, उनमें आयुधों के रूप में उपरोक्त चारों सद्गुणों का अनुपात बढ़ता चला जायगा।

वैष्णवी के आयुध, वाहन आदि का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है—

वैष्णवी के एक मुख, चार हाथों में-शंख, चक्र, गदा, पद्म। शंख से दुष्कृत्यों के विनाश और सत्पुरुषों के सहयोग का उद्घोष, चक्र से सृष्टि चक्र के अनुशासन, गदा से व्यवस्था को दृढ़तापूर्वक लागू करने तथा कमल से दिव्य उल्लास फैलाने का बोध सन्निहित है। वाहन गरुड़-जो आतंक फैलाने वाले सर्पों का काल तथा तीव्र गति का प्रतीक है। चित्र संख्या ३-अ, ब में वैष्णवी शक्ति का स्पष्ट दृग्दर्शन किया जा सकता है।

❑

## ४—शाम्भवी

'तुः' अक्षरस्य च देवी शाम्भवी देवता शिवः।
बीजं 'शं' अत्रिरेवर्षिः शाम्भवी यन्त्रमेव च।
भूती मुक्ताशिवे मुक्तिः फलं चानिष्टनाशनम्॥

अर्थात्- 'तुः' अक्षर की देवी-'शाम्भवी', देवता-'शिव', बीज-'शं', ऋषि-'अत्रि', यंत्र-'शाम्भवीयन्त्रम्', विभूति-'मुक्ता एवं शिवा' तथा प्रतिफल-'मुक्तिप्राप्ति तथा अनिष्ट-निवारण' है।

त्रिपदा गायत्री का तीसरा प्रवाह शाम्भवी है। इसे उपयोगी परिवर्तन की शक्ति माना जाता है। दूसरे शब्दों में यह काया कल्प की वह सामर्थ्य है जो जीर्णता को नवीनता में-मूर्छना को चेतना में-शिथिलता को सक्रियता में तथा मरण को जीवन में परिवर्तित करती है। पुनर्जीवन, नव निर्माण इसी को कहते हैं। गायत्री की शाम्भवी शक्ति वह है जो अशक्त को शक्तिवान् और कुरूप को सौन्दर्यवान् बनाने में निरन्तर संलग्न रहती है। प्रकारान्तर से इसे शिव-शक्ति भी कह सकते हैं।

शाम्भवी के दो आयुध हैं—त्रिशूल व डमरू। त्रिशूल अर्थात् तीन धार वाला वह शस्त्र जो मनुष्य की आधिभौतिक, आध्यात्मिक एवं आधि-दैविक विपत्तियों को विदीर्ण करने में पूरी तरह समर्थ है। मनुष्य जीवन में अनेकानेक कष्ट, संकट उत्पन्न करने वाले तीन कारण हैं—(१) अज्ञान (२) अभाव (३) अशक्ति। इन तीनों का निवारण करने वाले (१)ज्ञान (२)पुरुषार्थ (३)संयम के तीन शस्त्र उठाने पड़ते हैं। इन तीनों का समन्वय त्रिशूल है। शांभवी की उपासना करने वाला त्रिशूल धारी बनता है। गायत्री साधना में यदि सच्ची लगन हो तो व्यक्तित्व में ऐसी प्रतिभा का विकास होता है जो पिछड़ी हुई मनःस्थिति एवं परिस्थिति से उलट कर समृद्ध एवं समुन्नत बना सके।

डमरू जागरण का—उत्साह का-अग्रगमन का प्रतीक है। शांभवी के एक हाथ में डमरू होने का अर्थ है कि इस शक्ति-धारा के सम्पर्क में आने पर नव जागरण का-पुरुषार्थ, प्रयासों में उत्साह का, ऊँचा उठने, आगे बढ़ने का साहस उत्पन्न होता है।

शाम्भवी का वाहन वृषभ है। शिव को अपनी प्रकृति के अनुरूप सभी प्राणियों में यही भाया है। वृषभ बलिष्ठ भी होता है और परिश्रमी भी। सौम्य भी होता है और सहिष्णु भी। उसकी शक्ति सृजनात्मक प्रयोजनों में लगी रहती है।

समर्थ होते हुए भी वह अपनी क्षमता को पूरी तरह सृजन प्रयोजनों में लगाये रहता है। ध्वंस में उसकी शक्ति प्राय: नहीं ही प्रयुक्त होती। वृषभ श्रम, साहस, धैर्य, एवं सौजन्य का प्रतीक है। इस गुण की जहाँ जितनी मात्रा होगी वहाँ उतना ही अधिक स्नेह, सहयोग शांभवी का बरसेगा। इन सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्धन के लिए शांभवी की उपासना की जाती है।

शांभवी के मस्तिष्क के मध्य में तीसरा नेत्र है। तीसरा नेत्र अर्थात् शक्तियों के सन्दर्भ में उसे दूरदर्शन, परोक्ष दर्शन, भविष्य दर्शन आदि का केन्द्र संस्थान माना जाता है। यही तत्त्वदर्शियों की बिन्दु-साधना का लक्ष्य आज्ञाचक्र है। इसी के खुलने से अशुभों और अनिष्टों को परास्त किया जा सकता है। भगवान शंकर ने इसी तृतीय नेत्र को खोलकर कामदेव को भस्म किया था। दमयन्ती ने इसी को खोल कर व्याध को भस्म किया था। यह आज्ञाचक्र में सन्निहित शाप क्षमता का परिचय है। दूसरी व्याख्या यह है कि तृतीय नेत्र-आज्ञा चक्र के जागरण से उस विवेक शीलता का विकास होता है जो कषाय-कल्मषों की हानियों को स्पष्ट रूप से दिखा सके। सामान्य मनुष्य प्रत्यक्ष लाभ के लिए ही भविष्य को नष्ट करते रहते हैं, पर जागृत विवेक सदा दूरगामी परिणामों को ही देखता है और तदनुरूप वर्तमान की गतिविधियों का निर्धारण-करता है। इसी रीति-नीति के सहारे सामान्य मनुष्यों को असामान्य एवं महामानव बनने का अवसर मिलता है। शांभवी की उपासना में तीसरा ज्ञान-चक्षु खुलता है और उसी से अर्जुन की तरह आत्म दर्शन-ब्रह्मदर्शन का लाभ मिलता है। वह सूझ पड़ता है, जो सामान्य लोगों की कल्पना एवं प्रकृति से सर्वथा बाहर होता है।

संक्षेप में शाम्भवी के स्वरूप, वाहन, आयुध आदि का तात्त्विक विवेचन इस तरह है—

शांभवी के एक मुख, सिर पर गंगा एवं द्वितीया का चन्द्रमा जो सद्ज्ञान की धारा और विकासमान शान्त मस्तिष्क का प्रतीक है। चार हाथों में- त्रिशूल-तीन शत्रुओं (वासना, तृष्णा, अहंकार) को नष्ट करने का प्रतीक, डमरू-शिवत्व का उद्घोष, कमण्डलु-पात्रता विकास तथा आशीर्वाद मुद्रा-श्रेष्ठ पुरुषों-देवताओं से लेकर पिछड़े लोगों-प्रेत-पिशाचों तक के लिए मार्गदर्शन का आश्वासन है। चित्र संख्या ४-अ, ब में शांभवी शक्ति की झांकी की जा सकती है।

❑

## ५-वेदमाता

वस्य वर्णस्य देवी तु वेदमाताऽथ देवता।
आदित्यो बीजं 'ओं' एवं ऋषिर्व्यासोऽथयन्त्रकम् ॥
विद्या सन्ति च भूती द्वे स्मृतिविद्ये क्रमात्तथा।
अस्य प्रतिफलं दिव्यस्फुरणं ज्ञानमुत्तमम्॥

अर्थात-'व' अक्षर की देवी-'वेदमाता', देवता-'आदित्य', बीज-'ओं', ऋषि-'वेदव्यास', यन्त्र- 'विद्यायन्त्रम्', विभूति-'स्मृति एवं विद्या' तथा प्रतिफल- 'दिव्य स्फुरणा व सद्ज्ञान' है।

गायत्री को वेदमाता इसलिए कहा गया कि उसके २४ अक्षरों की व्याख्या के लिए चारों वेद बने। ब्रह्माजी को आकाशवाणी द्वारा गायत्री मन्त्र की ब्रह्म दीक्षा मिली। उन्हें अपना उद्देश्य पूरा करने के लिए सामर्थ्य, ज्ञान और विज्ञान की शक्ति और साधनों की आवश्यकता पड़ी। इसके लिए अभीष्ट क्षमता प्राप्त करने के लिए उन्होंने गायत्री का तप किया। तप-बल से सृष्टि बनाई। सृष्टि के सम्पर्क, उपयोग एवं रहस्य से लाभान्वित होने की एक सुनियोजित विधि-व्यवस्था बनाई। उसका नाम वेद रखा। वेद की संरचना की मन:स्थिति और परिस्थिति उत्पन्न करना गायत्री महाशक्ति के सहारे ही उपलब्ध हो सका। इसलिए उस आद्यशक्ति का नाम 'वेदमाता' रखा गया।

वेद सुविस्तृत हैं। उसे जन साधारण के लिए समझने योग्य बनाने के लिए और भी अधिक विस्तार की आवश्यकता पड़ी। पुराण-कथा के अनुसार ब्रह्मा जी ने चार मुखों से गायत्री के चार चरणों की व्याख्या करके चार वेद बनाये।

''ॐ भूर्भुव:'' के शीर्ष भाग की व्याख्या से 'ऋग्वेद' बना। ''तत्सवितुर्व रेण्यं'' का रहस्योद्घाटन यजुर्वेद में है। 'भर्गो देवस्य धीमहि' का तत्त्वज्ञान विमर्श 'सामवेद में है।''धियो यो न: प्रचोदयात्' की प्रेरणाओं और शक्तियों का रहस्य 'अथर्ववेद' में भरा पड़ा है।

विशालकाय वृक्ष की सारी सत्ता छोटे से बीज में सन्निहित रहती है। परिपूर्ण मनुष्य की समग्र सत्ता छोटे से शुक्राणु में समाविष्ट देखी जा सकती है। विशालकाय सौरमण्डल के समस्त तत्त्व और क्रिया कलाप परमाणु के नगण्य से घटक में भरे पड़े हैं। ठीक इसी प्रकार संसार में फैले पड़े सुविस्तृत ज्ञान-विज्ञान का समस्त परिकर वेदों में विद्यमान है, और उन वेदों का सारतत्त्व

गायत्री मन्त्र में सार रूप में भरा हुआ है। इसलिए गायत्री को ज्ञान-विज्ञान के अधिष्ठात्र वेद वाङ्मय की जन्मदात्री कहा जाता है। शास्त्रों में असंख्य स्थानों पर उसे 'वेदमाता' कहा गया है।

गायत्री मन्त्र का अवगाहन करने से वह ब्रह्मज्ञान साधक को सरलता पूर्वक उपलब्ध होता है, जिसको हृदयंगम कराने के लिए वेद की संरचना हुई है। गायत्री का माहात्म्य वर्णन करते हुए महर्षि याज्ञवल्क्य ने लिखा है-'गायत्री विद्या का आश्रय लेने वाला वेदज्ञान का फल प्राप्त करता है। गायत्री के अन्तः करण में वे स्फुरणायें अनायास ही उठती हैं, जिनके लिए वेद विद्या का परायण किया जाता है।'

वेद ज्ञान और विज्ञान दोनों के भण्डार हैं। ऋचाओं के प्रेरणाप्रद अर्थ भी हैं और उनके शब्द गुच्छकों में रहस्यमय शक्ति के अदृश्य भंडार भी। वेद में विज्ञान भी भरा पड़ा है। स्वर-शास्त्र के अनुसार इन ऋचाओं का निर्धारित स्वर-विज्ञान के अनुसार पाठ, उच्चारण करने से साधक के अन्तराल का स्तर इतना ऊँचा उठ जाता है कि उस पर दिव्य प्रेरणा उतर सके। उसके व्यक्तित्व में ऐसा ओजस् ,तेजस् एवं वर्चस् प्रकट होता है, जिसके सहारे महान् कार्य कर सकने योग्य शौर्य - साहस का परिचय दे सके। वातावरण में उपयुक्त प्रवाह, परिवर्तन संभव कर सकने के रहस्य वेद मन्त्रों में विद्यमान हैं। मन्त्रों के प्रचण्ड प्रवाह का वर्णन शास्त्रों में मिलता है। इस रहस्यमय प्रक्रिया को वेदमाता की परिधि में सम्मिलित समझा जाना चाहिए।

वेद ज्ञान, दूरदर्शी दिव्य दृष्टि को कहते हैं । इसे अपनाने वाले का मस्तिष्क निश्चित रूप से उज्ज्वल होता है। चार वेद, चार मंडल मात्र नहीं हैं। उस ज्ञान का विस्तार करने के कारण ब्रह्मा जी के चार मुख हुए। उनकी वैखरी,मध्यमा,परा,पश्यन्ति- चारों वाणी समस्त विश्व को दिशा देने में समर्थ हुई। गायत्री का अवगाहन करने वाले चारों ऋषि-सनक,सनन्दन,सनातन,सनत् कुमार वेद भगवान् के प्रत्यक्ष अवतार कहलाये। चार वर्ण, चार आश्रम की परम्परा वेदों की आचार पद्धति है। मन,बुद्धि,चित्त,अहंकार का अन्तःकरण चतुष्टय जिसे पाकर मनुष्य कृतकृत्य बनता है, वह वेद ज्ञान है-कामधेनु के चार

थन-धर्म,अर्थ,काम,मोक्ष की चारों विभूतियों का पयपान करते हैं। साधन चतुष्टय में प्रवृत्ति वेदमाता की चतुर्विध दिव्य प्रेरणा ही समझी जा सकती है। वेदमाता की साधना साधक को चार वेदों का आलंबन प्रदान करती और उसे सच्चे अर्थों में वेदवेत्ता, ब्रह्म ज्ञानी बनाती है, तत्त्वज्ञान, सद्ज्ञान, आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान से सम्पन्न करती है।

संक्षेप में वेदमाता के स्वरूप, वाहन आदि का विवेचन इस तरह से है:-

वेदमाता के एक मुख, चार हाथों में चार वेद हैं। यह एक ब्राह्मी चेतना से निस्सृत ज्ञान की चार धाराओं का बोध कराता है। कमल आसन-सहस्त्रार कमल में भरी हुई अनन्त पंखुड़ियों-पर्तों का प्रतीक है। इसे चित्र संख्या ५-अ, ब में देख कर स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है।

❑

## ६-देव माता

'रे' वर्णस्य च देवी तु देवमाताऽथ देवता।

इन्द्रो बीजं च 'लृं' अस्य भृगुः स ऋषिरुत्तमः ॥

यन्त्रं देवेशयन्त्रं च देवयानी तथैव च ।

दिव्या भूती फलं सन्ति देवत्वं सच्चरित्रता ॥

अर्थात्-'रे' अक्षर की देवी-'देवमाता', देवता-'इन्द्र', बीज-'लृं', ऋषि-'भृगु',यन्त्र-'देवेशयन्त्रम्', विभूति-'दिव्या एवं देवयानी' तथा प्रतिफल-'देवत्व व सच्चरित्रता' है।

गायत्री का एक नाम 'देवमाता ' भी है। देव माता इसलिए कि उसकी ..द में बैठने वाला-पयपान करने वाला-आँचल पकड़ने वाला अपने में देवत्व बढ़ाता है और आत्मोत्सर्ग के क्षेत्र में क्रमिक विकास करते हुए इसी धरती पर विचरण करने वाले देव-मानवों की पंक्ति में जा खड़ा होता है।

गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों में जो शिक्षायें भरी पड़ी हैं, वे सभी ऐसी हैं कि उनका चिन्तन-मनन करने वाले की चेतना में अभिनव जागृति उत्पन्न होती है और अन्तःकरण यह स्वीकार करता है कि मानव जीवन की सार्थकता एवं सफलता देवत्व की सद्वृत्तियाँ अपनाने में है। अज्ञानान्धकार में भटकने वाले मोह-ममता की सड़ी कीचड़ में फंसे रहते हैं और रोते-कलपते जिन्दगी के दिन पूरा करते हैं। किन्तु गायत्री का आलोक अन्तराल में पहुँचते ही व्यक्ति सुषुप्ति से विरत होकर जागृति में प्रवेश करता है। स्वार्थ को संयत करके परमार्थ प्रयोजनों में रस लेना और उस दिशा में बढ़ चलने के लिए साहस जुटाना, यही है मनुष्य शरीर में देवत्व का अवतरण। जो इस दैवी सम्पदा से जितनी मात्रा में सुसम्पन्न बनता है, वह उसी अनुपात से इसी जीवन में स्वर्गीय सुख-शान्ति का अनुभव करता है। उसके व्यक्तित्व का स्तर समुन्नत भी रहता है और सुसंस्कृत भी। देवात्मा शब्द से ऐसे ही लोगों को सम्मानित किया जाता है। वे स्वयं ऊँचे उठते, आगे बढ़ते हैं और अपने साथ-साथ अनेकों को उठाते-आगे बढ़ाते हैं। चन्दन वृक्ष की तरह उनके अस्तित्व से सारा वातावरण महकता है और सम्पर्क में आने वाले अन्य झाड़-झंखाड़ों को भी सुगन्धित होने का सौभाग्य मिलता है।

गायत्री उपासना का प्रधान प्रतिफल देवत्व का सम्वर्धन है। इससे साधक का अन्तरंग और बहिरंग देवोपम बनता चला जाता है। एक-एक करके दुष्प्रवृत्तियाँ छूटती हैं और प्रगति के हर कदम पर सत्प्रवृत्तियों की उपलब्धि होती है। गुण-कर्म -स्वभाव में गहराई तक घुसे हुए कषाय-कल्मष एक-एक करके स्वयं पतझड़ के पत्तों की तरह गिरते-झड़ते चले जाते हैं। उनके स्थान पर बसन्त के अभिनव पत्र-पल्लवों की तरह मानवोचित श्रेष्ठता बढ़ती चली जाती है।

देवता देने वाले को कहते हैं। गायत्री उपासना सच्चे अर्थो में की जा सके तो देवत्व की मात्रा बढ़ेगी ही। देवता के दो गुण हैं-व्यक्तित्व की दृष्टि से उत्कृष्ट और आचरण की दृष्टि से आदर्श। ऐसे लोग हर घड़ी अपने प्रत्यक्ष और परोक्ष अनुदानों से सतयुगी वातावरण उत्पन्न करते चले जाते हैं।

देवता सदा युवा रहते हैं। मानसिक बुढ़ापा उन्हें कभी नहीं आता। प्रसन्नता उनके चेहरे पर छाई रहती है। सन्तोष की नींद सोते हैं, आशा भरी उमंग में तैरते हैं। किन्हीं भी परिस्थितियों में उन्हें खिन्न, उद्विग्न, निराश एवं असंतुलित नहीं देखा जाता । यह विशेषताएँ जिनमें हों, उन्हें देव-मानव कहा जा सकता है। देवता स्वर्ग में रहते हैं। चिन्तन की उत्कृष्टता, विधेयात्मक चिन्तन में उत्साह,आनन्द और सन्तोष के तीनों ही तत्त्व घुले हुए हैं। देवता आप्त काम होते हैं। कल्प वृक्ष उनकी सभी कामनाओं को पूरा करता है। यह स्थिति उन सभी को प्राप्त हो सकती है जो निर्वाह के लिए जीवन-यापन की न्यूनतम आवश्यकता पूरी हो जाना भर पर्याप्त मानते हैं और अपनी महत्वाकांक्षाएँ सदुद्देश्यों में नियोजित रखते हैं। वासना, तृष्णा और अहंता ही अतृप्त रहते हैं। सद्भावनाओं को चरितार्थ करने में तो हर क्षण अवसर ही अवसर है। देवत्व मनःस्थिति में उतरता है। फलतः परिस्थितियों को स्वर्गीय, सन्तोषजनक बनने में देर नहीं लगती । देव माता गायत्री साधक को इसी उच्च भूमिका में घसीट ले जाती है।

देवमाता के स्वरूप का संक्षिप्त तात्त्विक विवेचन इस प्रकार से है-

देवमाता के एक मुख, दो हाथ-सहज मातृभाव युक्त छवि । गोद में बालक से देवत्व के विकास का, आशीर्वाद मुद्रा से सभी को अनुदान देने की उदारता का बोध है। आसन व्यवस्था पीठ-सुव्यवस्था की क्षमता की प्रतीक है। चित्र संख्या ६-अ, ब में देखकर देवमाता के स्वरूप को समझा जा सकता है।

## ७-विश्वमाता

विश्वमाता 'णि' देवी सा विश्वकर्मा च देवता।
बीजं 'स्त्रीं' यन्त्रमस्यैवं मातृयन्त्रमृषिश्च सः ॥
अङ्गिरा भूतिके ध्येया विराजा सन्ति वै क्रमात् ।
सहयोगस्य संसिद्धिर्विराटानुभवः फलम् ॥

अर्थात्-'णि' अक्षर की देवी-'विश्वमाता', देवता-'विश्वकर्मा', बीज 'स्त्रीं', यन्त्र-मातृयन्त्रम्, ऋषि-'अंगिरा', विभूति-'विराटा एवं ध्येया'और प्रतिफल-'विराटानुभूति एवं सहयोग सिद्धि' हैं।

गायत्री का एक नाम विश्वमाता है। माता को अपनी सन्तानें प्राणप्रिय होती हैं। सभी को एकता के सूत्र में बँधे और समग्र रूप से सुखी समुन्नत देखना चाहती है। विश्वमाता गायत्री की प्रसन्नता भी इसी में है कि मनुष्य मिलजुल कर रहें। समता बरतें और आत्मीयता भरा सद्व्यवहार अपनाकर समग्र सुख-शान्ति का वातावरण बनायें। मनुष्यों और अन्य प्राणियों के बीच भी सहृदयता भरा व्यवहार रहे।

विश्व भर में सतयुगी वातावरण बनाये रहने में अतीत की सांस्कृतिक गरिमा एवं भावभरी सद्भावना ही निमित्त कारण थी। अगले दिनों विश्वमाता का वात्सल्य फिर सक्रिय होगा। वे अपनी विश्व वाटिका के सभी घटकों को फिर से सुसंस्कृत, सुव्यवस्थित, एवं समुन्नत बनाने में प्रखरता भरी अवतार-भूमिका सम्पन्न करेंगी। प्रज्ञावतार के रूप में विश्व के नव निर्माण का प्रस्तुत प्रयास उस महाशक्ति के वात्सल्य का सामयिक उभार समझा जा सकता है। अगले दिनों ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' का आदर्श सर्वमान्य होगा। एकता, ममता, समता और शुचिता के चार आदर्शों के अनुरूप व्यक्ति एवं समाज की रीति-नीति नये सिरे से गढ़ी जायेगी। एकभाषा, एक धर्म, एक राष्ट्र एक संस्कृति का निर्माण, जाति, लिंग और धर्म के आधार पर बरती जाने वाली असमानता का उन्मूलन, एवं एकता और समता के सिद्धान्त प्राचीन काल की तरह अगले दिनों भी सर्वमान्य होंगें। शुचिता अर्थात् जीवन क्रम में सर्वतोमुखी शालीनता का समावेश-ममता अर्थात् आत्मीयता एवं सहकारिता भरा सामाजिक प्रचलन। प्राचीन काल की तरह अगले दिनों भी ऐसी ही मनःस्थिति एवं परिस्थिति बनाने के लिए विश्वमाता की सनातन भूमिका इन दिनों विशेष रूप से सक्रिय हो रही है।

मस्तिष्क पर शिखा के रूप में विवेक की ध्वजा फहराई जाती है। शरीर को कर्तव्य-बन्धनों में बाँधने के लिए कन्धे पर यज्ञोपवीत धारण कराया जाता है। यह दोनों ही गायत्री की प्रतीक प्रतिमा हैं।

भगवान् का विराट् रूप दर्शन अनेक भक्तों को अनेक बार अनेक रूपों में होता है। विराट् ब्रह्म के तत्व दर्शन का व्यवहारिक रूप है-विश्व मानव-विश्वबन्धुत्व, विश्व-परिवार, विश्व-भावना, विश्व-संवेदना। इसमें व्यक्तिवाद मिटता है और समूहवाद उभरता है। यही प्रभु समर्पण है। संकीर्ण स्वार्थपरता के बन्धनों से मुक्त होकर विराट् के साथ एकात्मता स्थापित कर लेना ही परम लक्ष्य माना गया है। आत्म चिन्तन, ब्रह्म चिन्तन, योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान आदि के साधनात्मक उपचार इसी निमित्त किये जाते हैं। जन-जीवन में इन आस्थाओं और परम्पराओं का समावेश ही व्यक्ति में देवत्व के उदय की मन:स्थिति और धरती पर सुख-शान्ति की स्वर्गीय परिस्थिति का कारण बनता है। विश्वमाता गायत्री की प्रवृत्ति प्रेरणा यही है।

गायत्री महाशक्ति को विश्वमाता कहते हैं। उसके अंचल में बैठने वाले में पारिवारिक उदात्त भावना का विकास होता है। क्षुद्रता के भव बन्धनों से मुक्ति-संकीर्णता के नरक से निवृत्ति-यह-दोनों ही अनुदान विश्वमाता की समीपता एवं अनुकम्पा के हैं, जिन्हें हर सच्चा साधक अपने में उमँगता बढ़ता देखता है।

विश्वमाता के स्वरूप व आसन आदि का संक्षिप्त विवेचन इस तरह है-

विश्वमाता के एक मुख, चारों हाथों में-शंख से हर प्राणी को ममता भरे अनुदान देने का उद्‌घोष, कमण्डलु से स्नेह भरी समता का, उठी हुई उंगली से एकता का निर्देश तथा आशीर्वाद मुद्रा से अनुदान की उदारता का बोध। आसन भूमंडल अर्थात् समस्त विश्व कार्य क्षेत्र है। विश्वमाता के स्वरूप की स्पष्ट झांकी चित्र संख्या ७-अ, ब में की जा सकती है।

❑

## ८-ऋतम्भरा

ऋतम्भरा च 'यं' देवी विद्यते देवता पुनः ।
हिरण्यगर्भो बीजं 'ऋं' भरद्वाजो महानृषिः ॥
ऋतं यन्त्रं विभूती च सत्या सा सुमुखी तथा ।
न्यायःच स्थिरप्रज्ञत्वं फलं सन्ति यथाक्रमम् ॥

अर्थात्-'यं' अक्षर की देवी-'ऋतम्भरा', देवता-'हिरण्यगर्भ',बीज-'ऋं',ऋषि-'भरद्वाज',यन्त्र-'ऋतयन्त्रम्',विभूति-'सत्या एवं सुमुखी' तथा प्रतिफल-'स्थिरप्रज्ञता व न्याय' हैं।

गायत्री की एक धारा है ऋतम्भरा। इसी को प्रज्ञा कहते हैं। जिस 'धी 'तत्त्व की प्रेरणा के लिए सविता देवता से प्रार्थना की गई है, वह यह ऋतम्भरा प्रज्ञा है। इसका स्वरूप समझने और उपलब्ध करने का उपाय बताने के लिए सुविस्तृत ब्रह्म -विज्ञान की संरचना हुई है। ब्रह्मविद्या का तत्त्व-दर्शन इसी ऋतम्भरा प्रज्ञा को विकसित करने के लिए है। जिससे अधिक पवित्र इस संसार में और कुछ नहीं है, वह भगवान् कृष्ण के शब्दों में 'सद्ज्ञान' ही है। इसकी उपलब्धि को 'ज्ञानचक्षु उन्मीलन' भी कहा गया है। उन्हीं दिव्य नेत्रों से आत्म दर्शन, ब्रह्म दर्शन एवं तत्त्वदर्शन का लाभ मिलता है। जिस आत्म साक्षात्कार, ब्रह्म साक्षात्कार के लिए तत्त्वदर्शी प्रयत्नशील रहते हैं, उसकी उपलब्धि ऋतम्भरा प्रज्ञा के अनुग्रह से ही संभव होती है।

बुद्धि चातुर्य से सम्पति संग्रह एवं लोक आकर्षण की उपलब्धियाँ सम्भव हो सकती हैं, किन्तु आत्मिक उपलब्धियों के लिए सद्भावना, सहृदयता, सज्जनता की भाव संवेदना चाहिए। इन्हीं का विवेकसंगत दूरदर्शितापूर्ण समन्वय जिस केन्द्र पर होता है, उसे ऋतम्भरा प्रज्ञा कहते हैं। यह जिसे जितनी मात्रा में उपलब्ध होती है, वह उसी अनुपात में सन्त, सज्जन, ऋषि, महर्षि, राजर्षि, देवर्षि बनता चला जाता है। लौकिक बुद्धि से सांसारिक सम्पदाएँ मिलती हैं। आत्मिक विभूतियों का उत्पादन-अभिवर्धन तत्त्व दृष्टि से होता है। इसी तत्त्व दृष्टि को ऋतम्भरा प्रज्ञा कहते हैं। जीवन को गौरवान्वित करने तथा पूर्णता के लक्ष्य तक पहुंचाने में सारी भूमिका ऋतम्भरा को ही सम्पादित करनी पड़ती है।

ईश्वर का सबसे बड़ा वरदान ऋतम्भरा प्रज्ञा है। उसका उदय होते ही माया के समस्त बन्धन कट जाते हैं। अज्ञानान्धकार को मिटाने में जिस अरुणोदय की कामना की जाती है, वह सविता का आलोक ऋतम्भरा प्रज्ञा के रूप में प्रभात कालीन उषा बन कर ही अपने अस्तित्व का परिचय देता है। प्रज्ञा का अवतरण होने पर मनुष्य की आकांक्षाएँ, विचारधाराएँ एवं गतिविधियाँ माया बद्ध जीवधारियों से सर्वथा भिन्न हो जाती हैं, वे वासना तृष्णा की कीचड़ में सड़ते नहीं रहते, वरन् अपनी जीवन नीति को उत्कृष्ट चिन्तन एवं आदर्श कर्तृत्व के साथ जोड़ते हैं।

लोग क्या कहते हैं, क्या करते हैं, इससे वे तनिक भी प्रभावित नहीं होते। लोभ-मोह की मदिरा पीकर उन्मत्त हुए पथभ्रष्टों के प्रति उन्हें करुणा बनी रहती है और उनके उद्धार की बात भी सोचते हैं, पर यह स्वीकार नहीं करते कि परामर्श को अंगीकार करें। ऋतम्भरा प्रज्ञा के सहारे ही वे ऐसे साहसिक निर्णय ले पाते हैं, जो मोहग्रस्त भव-बन्धनों से जकड़े हुए जन समाज की अपेक्षा सर्वथा भिन्न होते हैं। ईमान और सच्चाई के अतिरिक्त और किसी का परामर्श उन्हें प्रभावित नहीं करता। प्रज्ञा का इतना सुदृढ़ कवच पहिनने वाले ही जीवन संग्राम में विजय प्राप्त करते हैं और इस धरती के देवता कहलाते हैं।

दृष्टिकोण में उत्कृष्टता भर जाने पर पदार्थों की उपयोगिता और प्राणियों की सदाशयता का दर्शन होने लगता है। तदनुरूप अपना व्यवहार बदलना और निष्कर्ष निकलना आरम्भ हो जाता है। चिन्तन की इसी प्रक्रिया का नाम स्वर्ग है। वासना, तृष्णा और अहंता के बन्धन ही मनुष्य को विक्षुब्ध बनाये रहते हैं। जब इन्हें हटा कर निष्ठा, प्रज्ञा और श्रद्धा की मनोभूमि बनती है तो तुष्टि, तृप्ति और शान्ति की कमी नहीं रहती। प्रलोभनों से छुटकारा और आदर्शों का परिपालन- यही जीवन मुक्ति है। आत्म-साक्षात्कार, ब्रह्म साक्षात्कार की सच्चिदानन्द स्थिति इसी स्तर पर पहुँचने वाले को मिलती हैं।

गायत्री उपासना से ऋतम्भरा प्रज्ञा प्राप्त होती है, अथवा ऋतम्भरा प्रज्ञा का अनुशीलन करने वाले गायत्री का साक्षात्कार करते हैं ? इस विवाद में न पड़कर हमें इतना ही समझना चाहिए कि दोनों अन्योन्याश्रित हैं। जहाँ एक होगी वहाँ दूसरी का रहना भी आवश्यक है। गायत्री का सच्चा अनुग्रह जिस पर उतरता है, उसमें ऋतम्भरा प्रज्ञा का-ब्रह्म तेजस् का आलोक प्रत्यक्ष जगमगाने लगता है। सामान्य लोगों की तुलना में वह उत्कृष्टता की दृष्टि से ऊँचा उठा हुआ और आगे बढ़ा हुआ दृष्टिगोचर होता है।

संक्षेप में ऋतम्भरा के स्वरूप, आसन आदि का तात्त्विक विवेचन इस प्रकार है-

ऋतम्भरा के एक मुख , चार हाथ हैं। उनमें दीपक-ऋतम्भरा प्रज्ञा-विवेक ज्योति का, श्रीफल-श्रेष्ठ प्रतिफल-सत्परिणाम का, माला-सतत स्मरण की, आशीर्वाद मुद्रा-उदार अनुदान की प्रतीक हैं। आसन सहस्त्रदल कमल-सहस्रार चक्र में समाहित ऋत शाक्ति का द्योतक है। ऋतम्भरा की स्पष्ट झांकी चित्र संख्या ८-अ, ब में की जा सकती है।

❑

## ९-मन्दाकिनी

'भ' वर्णस्य देवीं तु मता मन्दाकिनी वसुः।
देवता बीजं 'उं' चैव गौतमोऽसावृषिस्तथा॥
निर्मला यन्त्रमेवं च निर्मला विरजे पुनः ।
भूती सन्ति फलं चैव निर्माल्यं पापनाशनम्॥

अर्थात्-'भ' अक्षर की देवी-'मन्दाकिनी', देवता-'वसु', बीज-'उं', ऋषि-'गौतम', यन्त्र-'निर्मलायन्त्रम्', विभूति-'निर्मला एवं विरजा' और प्रतिफल-'निर्मलता व पापनाश' हैं।

दृश्यमान गंगा और अदृश्य गायत्री की समता मानी जाती है। गायत्री की एक शक्ति का नाम मन्दाकिनी भी है। गंगा पवित्रता प्रदान करती है, पापकर्मों से छुटकारा दिलाती है। गायत्री से अन्तःकरण पवित्र होता है, कषाय-कल्मषों के संस्कारों से त्राण मिलता है। गंगा और गायत्री दोनों की ही जन्म-जयन्ती एक है-ज्येष्ठ शुक्ल दशमी। दोनों को एक ही तथ्य का स्थूल एवं सूक्ष्म प्रतीक माना जाता है।

गंगा का अवतरण भगीरथ के तप से संभव हुआ। गायत्री के अवतरण में यही प्रयत्न ब्रह्मा जी को करना पड़ा। मनुष्य जीवन में गायत्री की दिव्य धारा का अनुग्रह उतारने के लिए तपस्वी-जीवन बिताने की -तपश्चर्या सहित साधना करने की आवश्यकता पड़ती है। गायत्री के द्रष्टा ऋषि-विश्वामित्र हैं। उन्होंने भी तपश्चर्या के माध्यम से इस गौरवास्पद पद को पाया था। विश्वामित्र ने गायत्री महाशक्ति का अपना उपार्जन राम-लक्ष्मण को हस्तान्तारित किया था-बला और अतिबला विद्याओं को सिखाया था। इसी से वे इतने महान् पुरुषार्थ करने में समर्थ हुए। बला और अतिबला गायत्री-सावित्री के ही नाम हैं।

गंगा शरीर को पवित्र करती है, गायत्री आत्मा को। गंगा मृतकों को तारती है, गायत्री जीवितों को, गंगा-स्नान से पाप धुलते हैं, गायत्री से पाप प्रवृत्ति ही निर्मूल होती है। गायत्री उपासना के लिए गंगातट की अधिक महत्ता बतलाई गई है। दोनों का समन्वय गंगा-यमुना के संगम की तरह अधिक प्रभावोत्पादक होता है। सप्त ऋषियों ने गायत्री साधना द्वारा परम सिद्धि पाने के लिए उपयुक्त स्थान गंगा तट ही चुना था और वहीं दीर्घकालीन तपश्चर्या की थी। गायत्री के

एक हाथ में जल भरा कमांडलु है। यह अमृत जल-गंगा जल ही है। उच्चस्तरीय गायत्री साधना करने वाले प्राय: गंगा स्नान- गंगा जल पान-गंगातट का सानिध्य, जैसे सुयोग तलाश करते हैं।

भक्त-गाथा में रैदास की कठौती में गंगा के उमगने की कथा आती है। अनुसुइया ने चित्रकूट के निकट तप करके मन्दाकिनी को धरती पर उतारा था। गायत्री उपासना से साधक का अन्त:करण गंगोत्री-गोमुख जैसा बन जाता है और उसमें से प्रज्ञा की निर्झरिणी प्रवाहित होने लगती है।

गायत्री की अनेक धाराओं में एक मन्दाकिनी है। उसका अवगाहन पापों के प्रायश्चित एवं पवित्रता संवर्धन के लिए किया जाता है।

मन्दाकिनी के स्वरूप, वाहन आदि का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है-

मन्दाकिनी के एक मुख, चार हाथ हैं, उनमें कमल से सौम्यता,जल पात्र से दिव्य रस, पुस्तक से ज्ञान प्रवाह तथा माला से सात्त्विक-पवित्रता का बोध होता है। वाहन-मगर-धाराओं को चीरकर चलने की असाधारण क्षमता का प्रतीक है। चित्र संख्या ९-अ, ब में देखकर मन्दाकिनी के स्वरूप को समझा जा सकता है।

❑

## १०-अजपा

'र्गो' देवीमजपामेवं देवतां मरुतं तथा ।
बीजं 'यं' तमृषिं चास्य कथयन्ति पतञ्जलिम् ॥
यन्त्रं निरञ्जनां भूती सहजां च निरञ्जनाम् ।
शान्तिं प्रतिफलं चास्य भयनाशं च सर्वतः॥

अर्थात्-'र्गो' अक्षर की देवी- 'अजपा', देवता-'मरुत्',बीज- 'यं', ऋषि- 'पतञ्जलि', यन्त्र-'निरंजनायन्त्रम्', विभूति-'निरंजना एवं सहजा', प्रतिफल- 'शांति एवं भयनाश' हैं।

गायत्री साधना की एक ऐसी स्थिति है, जिसमें आत्मा का परमात्मा के साथ आदान-प्रदान का सिलसिला स्वयमेव चल पड़ता है और इस दिव्य मिलन के फलस्वरूप मिलने वाली उपलब्धियों का लाभ मिलने लगता है। उस स्थिति को अजपा कहते हैं।

'अजपा' गायत्री का साधनात्मक स्वरूप 'सोहम् साधना' है, इसे 'हंस-योग' भी कहते हैं। गायत्री का वाहन हंस है। यह हंस 'सोहम्' साधना के माध्यम से साधा जाने वाला हंस योग ही है। गायत्री शब्द का अंर्थ है-प्राण का त्राण करने वाली। 'गय' प्राण को और 'त्री' त्राण करने वाले को कहते हैं। प्राण तत्त्व का विशिष्ठ अवतरण प्राणायाम के माध्यम से होता है। गायत्री-साधना में २४ प्राणायामों का विधान है। इन सबमें 'सोऽहम्' साधना को प्रधानता मिली है। यह अत्यन्त उच्चस्तरीय स्वसंचालित प्राणायाम ही है। सामान्य प्राणायामों में इच्छा शक्ति, विचार शक्ति एवं शारीरिक गतिविधियों का उपयोग होता है। सोऽहम् साधना में यह सारा काम आत्मा स्वयं कर लेती है। शरीर और मन के सहयोग की उसे आवश्यकता नहीं पड़ती।

श्वांस जब शरीर में प्रवेश करता है तब 'सो' की सूक्ष्म ध्वनि होती है। जब श्वांस बाहर निकलता है तो 'हम्' की शब्दानुभूति होती है। ये ध्वनियाँ बहुत ही सूक्ष्म हैं। स्थूल कर्णेन्द्रियाँ उन्हें नहीं सुन सकती । शब्द की तन्मात्रा

तक पहुँचने वाली ध्यान-धारणा में ही उसकी अनुभूति होती है। शान्त चित्त से एकाग्रता पूर्वक श्वांस के भीतर जाते समय 'सो' को और बाहर निकलते 'हम्' के शब्द प्रवाह को धारण करने पर कुछ समय बाद यह दिव्य ध्वनि अनायास ही अनुभव में आने लगती है। कृष्ण के वेणुनाद सुनने से जैसा आनन्द गोपियों को मिलता था, वैसी ही दिव्य अनुभूति इन्द्रियों को, उपत्यिकाओं को, इस 'सोऽहम्' ध्वनि प्रवाह को सुनने से होती है।

शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म का उल्लेख शास्त्रों में होता है। मोटी विवेचना में सत्संग-प्रवचन को 'शब्द' और भक्ति भरे भाव संगीत को 'नाद' ब्रह्म कहते हैं। पर दिव्य भूमिका में ये दोनों ही शब्द 'सोऽहम्' साधना के लिए प्रयुक्त होते हैं। तपस्वी इसी को 'अनाहत ध्वनि' कहते हैं।

गायत्री का मूल उद्‌गम 'ॐकार' है। उसी का विस्तार गायत्री के २४ अक्षरों में हुआ है। इसी प्रकार नाद ब्रह्म का बीज 'सोऽहम्' है, उसी का विस्तार नादयोग' के साधनों में सूक्ष्म कर्णेन्द्रिय द्वारा घन्टा-घड़ियाल, मेघगर्जन, वंशी, मृदंग, कलरव आदि की अनेकानेक ध्वनियों में अनुभव होता है। यह दिव्य ध्वनियाँ प्रकृति के सूक्ष्म अन्तराल से उठती हैं और उनके सुनने की क्षमता उत्पन्न हो जाने पर उनके पीछे छिपे वे रहस्य प्रकट होने लगते हैं, जो विश्व की अविज्ञात गतिविधियों की जानकारी देकर साधक को सूक्ष्मदर्शी बना देती हैं।

सामान्य साधनायें शरीर और मन की सहायता से प्रयत्न पूर्वक करनी पड़ती हैं। पर 'अजपा-गायत्री' का आत्मा के साथ सीधा सम्बन्ध जुड़ जाने से साधना क्रम स्वसंचालित हो जाता है और अपनी धुरी पर स्वयमेव घूमने लगता है। अजपा साधना भी है और शक्ति भी। सोऽहम् के ध्यान, अभ्यास को साधना कहते हैं। उसका आत्मा के साथ सीधा सम्बन्ध जुड़ जाने और गति चक्र के स्वयमेव घूमने लगने की स्थिति में वही एक शक्ति बन जाती है। इस शक्ति के सहारे साधक आत्मज्ञान और ब्रह्मज्ञान प्राप्त करता है। उसका उपयोग आत्म कल्याण और विश्व कल्याण के लिए महत्वपूर्ण क्षमताएँ सम्पादित करने में भी होता है।

अजपा में सन्निहित हंसयोग को ध्यान में रखते हुये गायत्री का वाहन हंस बताया गया है। जो इसे साधता है, उसका अन्तरंग नीर-क्षीर विवेक की क्षमता सम्पन्न दिव्यदर्शी बनता है। उसका बहिरंग मोती चुगने तथा कीड़े न खाने जैसा आदर्शवादी हो जाता है। ऐसे ही चिन्तन में उत्कृष्टता और कर्तृत्व में आदर्शवादिता अपनाने वाले को राजहंस कहते हैं। ऊँचा उठने पर वे ही परमहंस बन जाते हैं। इस उच्चस्तरीय भूमिका तक पहुँचने में गायत्री की अजपा शक्ति का अनुग्रह असाधारण रहता है।

अजपा के स्वरूप, वाहन आदि का संक्षिप्त विवरण निम्न हैं-

अजपा के एक मुख है। अर्धनिमीलित नेत्र-अन्तर्दृष्टि के प्रतीक हैं। चार हाथों में दो ध्यान मुद्रा में- अन्तःकरण की गहराइयों में जाने का, माला -सतत ईश स्मरण का तथा कमल निरभिमान-निर्मल भाव का प्रतीक है। इस महाशक्ति के स्वरूप एवं यंत्रादि को चित्र संख्या १०-अ, ब में देखा जा सकता है।

❑

## ११ ऋद्धि-१२ सिद्धि

ऋद्धिं 'दे' वर्णदेवीं तु गणेशं देवतां तथा।
बीजं 'गं' च कणाद तं ऋषिमृद्धिं च यन्त्रकम् ॥
तुष्टिं भद्रां विभूती च कथयन्ति द्वयं पुनः।
प्रतिफलं गुणवत्तां तां तुष्टिं च सुखदायिनीम्॥

अर्थात्- 'दे' अक्षर की देवी-'ऋद्धि',देवता- 'गणेश', बीज- 'गं' ऋषि-'कणाद', यन्त्र 'ऋद्धियन्त्रम्,' विभूति-'तुष्टा एवं भद्रा' तथा प्रतिफल - 'तुष्टि एवं गुणवत्ता 'है।

सिद्धिं 'व' वर्ण देवीं च क्षेत्रपालं च देवताम्।
बीजं क्षं' कथयन्त्येवं अगस्त्यमृषिमस्य तु ॥
सिद्धिं यन्त्रं विभूती च सूक्ष्मां तां योगिनीं तथा।
फलं तन्मयतामाद्यं द्वितीयं कार्यकौशलम्॥

अर्थात्-'व' अक्षर की देवी- 'सिद्धि', देवता-'क्षेत्रपाल', बीज 'क्षं', ऋषि-'अगस्त्य', यन्त्र-'सिद्धियन्त्रम्', विभूति-'सूक्ष्मा एवं योगिनी' और प्रतिफल-'तन्मयता एवं कार्यकुशलता हैं।

गायत्री महाशक्ति की गरिमा, महत्ता, एवं प्रतिक्रिया क्या हो सकती है, इसका उत्तर विभिन्न देवताओं के स्वरूप, वाहन, आयुध, स्वभाव आदि पर दृष्टि डालने से मिल जाता है। देवता और देवियों को गायत्री महाशक्ति के विशिष्ट प्रवाह ही समझा जा सकता है।

गायत्री के २४ देवताओं में एक गणेश भी हैं। गणेश अर्थात् विवेक बुद्धि के देवता। जहाँ दूरदर्शी विवेक का बाहुल्य दिखाई पड़े, समझना चाहिए कि वहाँ गणेश की उपस्थिति और अनुकम्पा प्रत्यक्ष है। सद्ज्ञान ही गणेश है। गायत्री मन्त्र की मूल धारणा सद्ज्ञान ही है। अस्तु, प्रकारान्तर से गणेश को गायत्री की प्रमुख शक्ति धारा कहा जा सकता है।

गणेश के साथ दो दिव्य सहेली-सहचरी रहती हैं। एक का नाम ऋद्धि और दूसरी का सिद्धि है। ऋद्धि अर्थात् आत्मिक विभूतियाँ । सिद्धि अर्थात् सांसारिक सफलताएँ । विवेक की ये दो उपलब्धियाँ सहज स्वाभाविक हैं। ब्रह्म के साथ जिस प्रकार गायत्री, सावित्री को दो सहचरी माना गया है, उसी प्रकार गणेश के साथ भी ऋद्धि और सिद्धि हैं। ऋद्धि आत्म बल और सिद्धि समृद्धि बल है। परब्रह्म की दो सहेलियाँ परा और अपरा प्रकृति हैं, उन्हीं के

सहारे जड़-चेतन विश्व का गति चक्र घूमता है। विवेक रूपी गणेश का स्वरूप निर्माण करते समय तत्त्वदर्शियों ने उसकी दो सहेलियों का भी चित्रण किया है। आत्म बल और भौतिक सफलताओं का सारा क्षेत्र विवेक पर आधारित है। इसी तथ्य को गणेश और उनकी सहचरी ऋद्धि-सिद्धि के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

ऋद्धि अर्थात् आत्मज्ञान-आत्मबल आत्म संतोष, अन्तरंग उल्लास, आत्म-विस्तार, सुसंस्कारिता एवं ऐश्वर्य । सिद्धि अर्थात् प्रतिभा, स्फूर्ति, साहसिकता, समृद्धि, विद्या, समर्थता, सहयोग सम्पादन एवं वैभव। लगभग यही विशेषताएँ गायत्री और सावित्री की हैं। दोनों एक साथ जुड़ी हुई हैं। जहाँ ऋद्धि है वहाँ सिद्धि भी रहेगी। गणेश पर दोनों को चँवर ढुलाना पड़ता है। विवेकवान् आत्मिक और भौतिक दोनों दृष्टियों से सुसम्पन्न होते हैं। संक्षेप में गणेश के साथ अविच्छिन्न रूप में जुड़ी हुई ऋद्धि-सिद्धियों के चित्रण का यही तात्पर्य है।

गणेश के एक हाथ में अंकुश, दूसरे में मोदक हैं। अंकुश अर्थात् अनुशासन-मोदक अर्थात् सुख साधन। जो अनुशासन साधते हैं वे अभीष्ट साधन भी जुटा लेते हैं। गणेश से संबद्ध इन-दो उपकरणों का यही संकेत है। ऋद्धि अर्थात् आत्मिक उत्कृष्टता। सिद्धि अर्थात् भौतिक समर्थता। मर्यादाओं का अंकुश मानने वाले और संयम साधने वाले हर दृष्टि से समर्थ बनते हैं। उन्हें सुख-साधनों की-सुविधा-सम्पन्नता की कमी नहीं रहती। उत्कृष्ट व्यक्तित्व सम्पन्न व्यक्ति सदा मुदित रहते हैं- प्रसन्नता बाँटते, बखेरते देखे जाते हैं। यही मोदक हैं जिससे हर घड़ी संतोष, आनन्द का रसास्वादन मिलता है। विवेकवान का चुम्बकीय व्यक्तित्व दृश्य और अदृश्य जगत् से वे सब उपलब्धियाँ खींच लेता है, जो उसकी प्रगति एवं प्रसन्नता के लिए आवश्यक हैं।

ऋद्धि-सिद्धियों के सम्बन्ध में एक भ्रान्ति यह है कि यह कोई जादुई चमत्कार दिखाने में काम आने वाली विशेषताएँ हैं। आकाश में उड़ना, पानी पर चलना, अदृश्य हो जाना, रूप बदल लेना, कहीं से कुछ वस्तुएँ मँगा देना या उड़ा देना, भविष्य-कथन जैसी आश्चर्यजनक बातों को सिद्धि कहा जाता है। यह जादुई खेल-मेल है, जो हाथ की सफाई, चालाकी या हिप्नोटिज्म जैसे उथले भावात्मक प्रयोगों से भी सम्पन्न किये जा सकते हैं। इन्हें दिखाने का उद्देश्य प्रायः लोगों को चमत्कृत करके अपने चँगुल में फँसा लेना एवं अनुचित लाभ उठाना ही होता है। इसलिए ऐसे प्रदर्शनों की साधना का शास्त्रों में पग-पग पर

मनाही की गई है। उनमें विशेषताएँ हों भी तो भी उन्हें प्रदर्शन से रोका गया है। फिर जो हाथ की सफाई के चमत्कार दिखाते और उसकी संगति अध्यात्म सामर्थ्य से जोड़ते हैं, उन्हें तो हर दृष्टि से निन्दनीय कहा जा सकता है।

वास्तविक ऋद्धि यही है कि साधक अपने उत्कृष्ट व्यक्तित्त्व के सहारे आत्म संतोष, लोक-श्रद्धा एवं दैवी अनुकम्पा के विविध लाभ पाकर मनुष्यों के बीच देवताओं जैसी महानता प्रस्तुत करे और अपनी आदर्शवादी साहसिकता से जन-जन को प्रभावित करे । वास्तविक सिद्धि यह है कि उपार्जन तो पर्वत जितना करे, पर अपने लिए औसत नागरिक जितना निर्वाहार्थ लेकर शेष को सत्प्रयोजनों के लिए उदारता पूर्वक समर्पित कर दे। ऐसे अनुकरणीय आदर्श उपस्थित कर सकना उच्च स्तर का चमत्कार ही है। जो इस मार्ग पर जितना आगे बढ़ सके, उसे उतना ही बड़ा सिद्ध पुरुष माना जा सकता है।

गायत्री का एक नाम ऋद्धि है दूसरा सिद्धि। प्रयत्न पूर्वक सत्प्रवृत्तियों को अपनाने वाले इन दोनों को उपलब्ध करते और हर दृष्टि से धन्य बनते हैं। सच्ची गायत्री उपासना का प्रतिफल भी ऋद्धियों और सिद्धियों के रूप में सामने आता है। गायत्री प्रत्यक्ष सिद्धि है। जिसके अन्तराल पर वह उतरती है उसे ऋद्धि-सिद्धियों से -विभूतियों और समृद्धियों से भरा-पूरा सफल जीवन बनाने का अवसर देती है।

संक्षेप में ऋद्धि एवं सिद्धि का तात्त्विक स्वरूप इस प्रकार है-

ऋद्धि के एक मुख, दो हाथ हैं। दायें में चँवर-विकारों का निवारण-प्रमुख। बायें में मोदक-भौतिक लाभ-गौण। खड़ी मुद्रा-स्वावलम्बी तत्परता की प्रतीक है।

सिद्धि-के एक मुख, दो हाथ। दायें में मोदक-भौतिक साधन प्रधान, बायें में चँवर-विकारों का निवारण-सहयोगार्थ। खड़ी मुद्रा-स्वावलम्बी,तत्परता का प्रतीक है।

ऋद्धि एवं सिद्धि के स्वरूप एवं यंत्र आदि के दर्शन क्रमशः चित्र संख्या ११-अ, ब एवं १२-अ, ब में कर सकते हैं।

❑

# गायत्री की २४ शक्तियाँ तथा सम्बन्धित २४ यंत्र- तांत्रिकी

# गायत्री की २४ शक्तियाँ
# तथा
# सम्बन्धित २४ यंत्र- तांत्रिकी

सावित्री सरस्वती ज्ञेया, लक्ष्मी दुर्गा तथैव च।
कुण्डलिनी प्राणाग्निश्च भवानी भुवनेश्वरी॥
अन्नपूर्णेति नामानि महामाया पयस्विनी।
त्रिपुरा चैवेति विज्ञेया तान्त्रिकानि च द्वादश॥

अर्थात्-
(१) सावित्री (२) सरस्वती (३) लक्ष्मी (४) दुर्गा (५) कुण्डलिनी (६) प्राणाग्नि (७) भवानी (८) भुवनेश्वरी (९) अन्नपूर्णा (१०) महामाया (११) पयस्विनी (१२) त्रिपुरा

इन बारह को तान्त्रिकी कहा गया है। शक्तियों एवं उनके यंत्रों का वर्णन अगले पृष्ठों पर किया गया है।

## १३. सावित्री

आदिशक्ति की दो मुख्य धाराएँ हैं, आत्मिकी और भौतिकी । गायत्री से आत्मिकी का तथा सावित्री से भौतिकी का विकास होता है। पंचतत्त्व, पंचकोष, पंचप्राण, पंचाग्नियाँ इन सबका विकास एवं सुनियोजन सावित्री शक्ति के अधीन है। इसीलिए इसे पंचमुखी स्वरूप दिया गया है। भौतिक विज्ञान इसी की धारा है।

सावित्री यंत्रम्
शक्ति
सावित्री
सविता
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
स्य
ज्ञं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
कल्याणी
इष्टा
फलश्रुति
ब्रह्म विद्या ज्ञान
सफलता प्राप्ति

( अ )
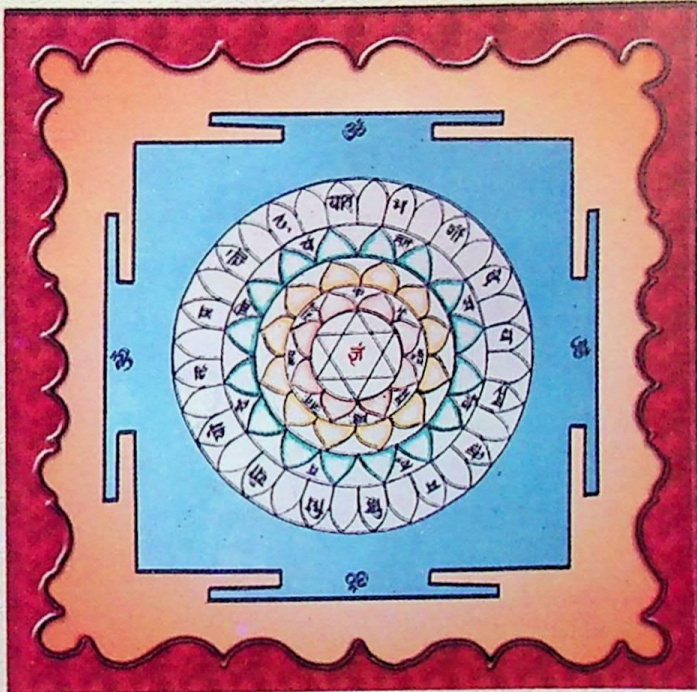
( ब )

## १४. सरस्वती

इन्हें साहित्य, संगीत, कला की देवी कहा गया है। ज्ञान की प्रतीक पुस्तक है । ज्ञान शुष्क भी होता है, किन्तु माता सरस्वती की वीणा उसके साथ सरस भाव संवेदना भी झंकृत करती है। माता सरस्वती की कृपा से मूढ़ व्यक्तियों में विद्वत्ता के विकास के प्रमाण सर्वविदित हैं।

सरस्वती यंत्रम्
शक्ति
सरस्वती
प्रजापति
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
धी
ऐं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
हर्षा
प्रभवा
फलश्रुति
उल्लास
कला प्रवीणता

( अ )

ॐ
भूः भुवः स्वः
तत्
सवितुः
वरेण्यं
भर्गो
देवस्य
धीमहि
धियो
योनः
प्रचोदयात्
ॐ
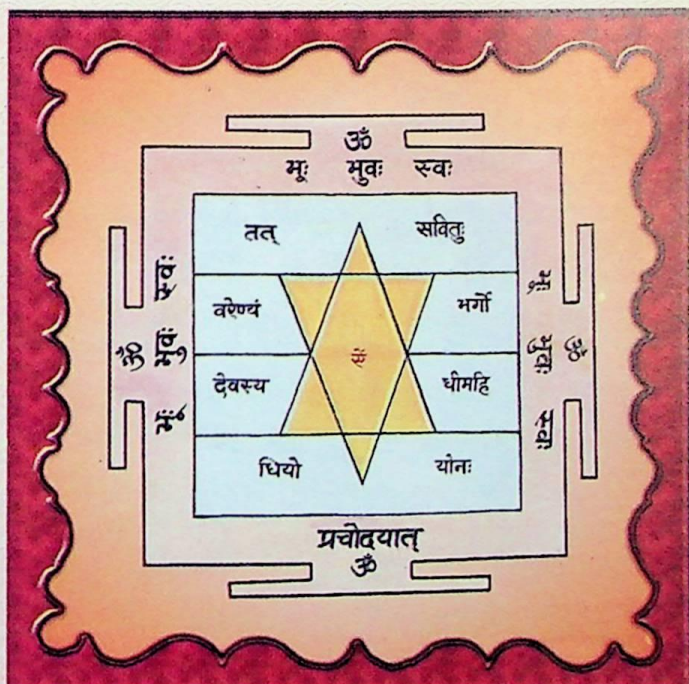
( ब )

## १५. लक्ष्मी

गायत्री की यह धारा श्री - समृद्धिदायिनी है। स्थूल रूप में यह सम्पत्ति दायिनी मानी जाती है। इसका सूक्ष्म रूप अनुपयोगी को उपयोगी बनाने में सक्षम है। सुगढ़ता इसका लक्षण है। यह अभावों को दूर कर सम्पन्न बनाती है। इसे कमला भी कहते हैं। यह निर्विकार सौन्दर्य का प्रतीक है। यह नीरसता हटाकर उल्लास का संचार करती है।

श्री यंत्रम्
शक्ति
महालक्ष्मी
कुबेर
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
म
श्रीं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
तारिणी
श्री मुखी
फलश्रुति
सत्प्रयोजन शीलता
सम्पन्नता

( अ )
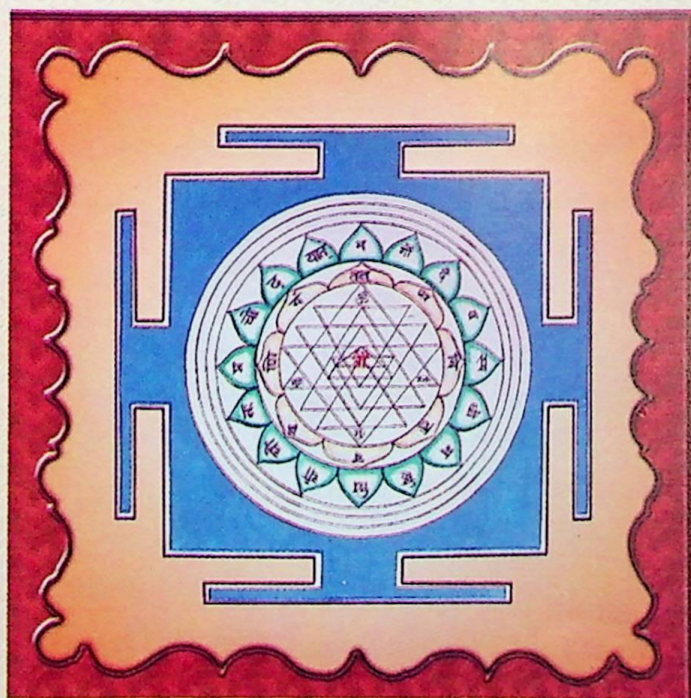
( ब )

## १६. महाकाली

यह महाकाल की सहधर्मिणी कही जाती है। जब महाकाल अशिव के उन्मूलन के लिए संकल्पित होते हैं, तो महाकाली आसुरी वृत्तियों को निर्मूल कर देती है। इसके तेज से आलस्य-प्रमाद, पापकर्मों को आधार देने वाली पापवृत्तियाँ जल जाती हैं। इनकी कृपा से साहसिकता और सामर्थ्य का विकास होता है।

कालिका यंत्रम्
शक्ति
महाकाली
महाकाल
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
हि
क्लीं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
भर्गा
वज्रिणी
फलश्रुति
कल्मष नाश
शत्रु नाश

(अ)
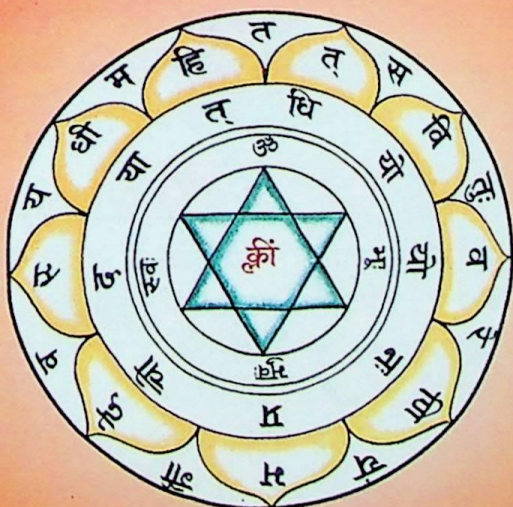
(ब)

## १७. कुण्डलिनी

गायत्री प्राणविद्या है, कुण्डलिनी उसकी एक विशिष्ट धारा है। इसे प्राणविद्युत्, जीवनीशक्ति, जैव ऊर्जा, योगाग्नि आदि नामों से भी जाना जाता है। प्रजनन क्रम इसी शक्ति से चलता है। जब यह उच्च उद्देश्यों के लिए जागकर ऊर्ध्वमुखी होती है, तो मनुष्य की शक्ति असामान्य हो जाती है। गायत्री साधना से यह शक्ति सहज स्वाभाविक ढंग से विकसित होने लगती है।

भैरव यंत्रम्
शक्ति
कुण्डलिनी
भैरव
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
धि
लं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
धृति
प्रतिभा
फलश्रुति
ओजस वृद्धि
उन्नति

( अ )

भुवः
लं
भर्गो देवस्य
धीमहि
भुवः
धियो योनः
प्रचोदयात्
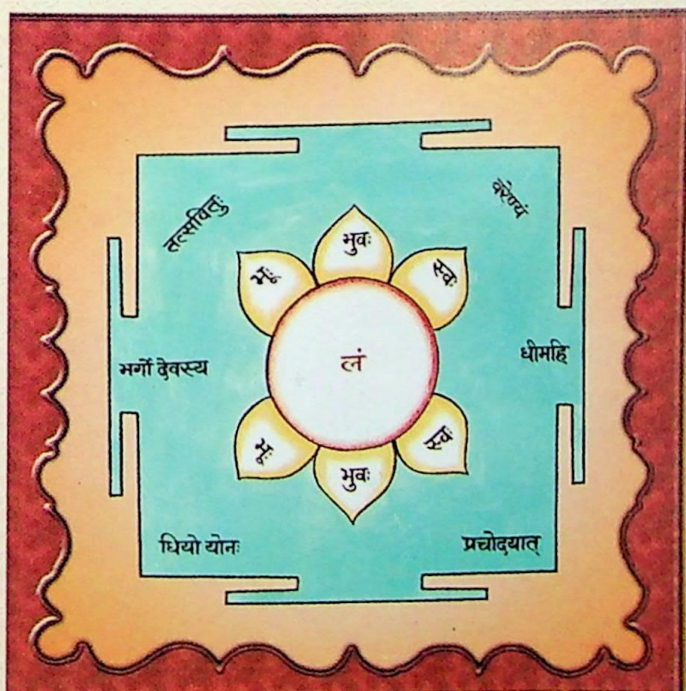
( ब )

## १८. प्राणाग्नि

जीवन रसों को प्राणाग्नि ही पकाती है। इसका संचार भू लोक से लेकर जीव - कोषों तक में है। इसी अग्नि के विज्ञान को पंचाग्नि विद्या के रूप में जाना जाता है । प्राणाग्नि की कमी से ही शरीर एवं संकल्पों में दुर्बलता आती है तथा इसकी सबलता से ओजस्विता बढ़ती है। वही जीवन की बाधाओं को चीरती हुई साधक को उच्च लक्ष्यों तक पहुँचाती है।

ऊर्जा यंत्रम्
शक्ति
प्राणाग्नि
जातवेद
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
यो
रं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
स्वाहा
अजरा
फलश्रुति
पुष्टि
आरोग्य


( अ )

ॐ
तत्
रं
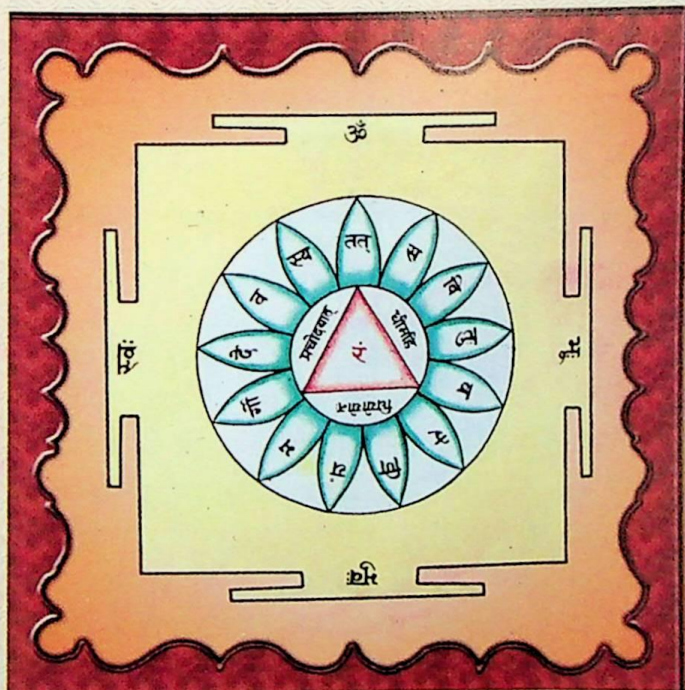

( ब )

## १९. भुवनेश्वरी

ऐश्वर्य-वैभव सभी को चाहिए। भुवनेश्वरी सारे विश्व के ऐश्वर्य की स्वामिनी के रूप में साधक के जीवन को ऐश्ववर्यवान् बनाती है। प्रकृति ने मनुष्य काया को विभूतियों का भण्डार बनाया है, किन्तु उन्हें संयमित, नियंत्रित, सुनियोजित रखना कठिन होता है। भुवनेश्वरी की कृपा से ऐश्वर्य जागता - बढ़ता भी है तथा उसे अनुशासन-नियंत्रण में करके फलित भी किया जाता है।

विभु यंत्रम्
शक्ति
भुवनेश्वरी
जगदीश्वर
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
यो
खं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
गौरी
विश्वोत्तमा
फलश्रुति
सुयश, कीर्ति
सत्ता, ऐश्वर्य

( अ )

तत
खं
भू
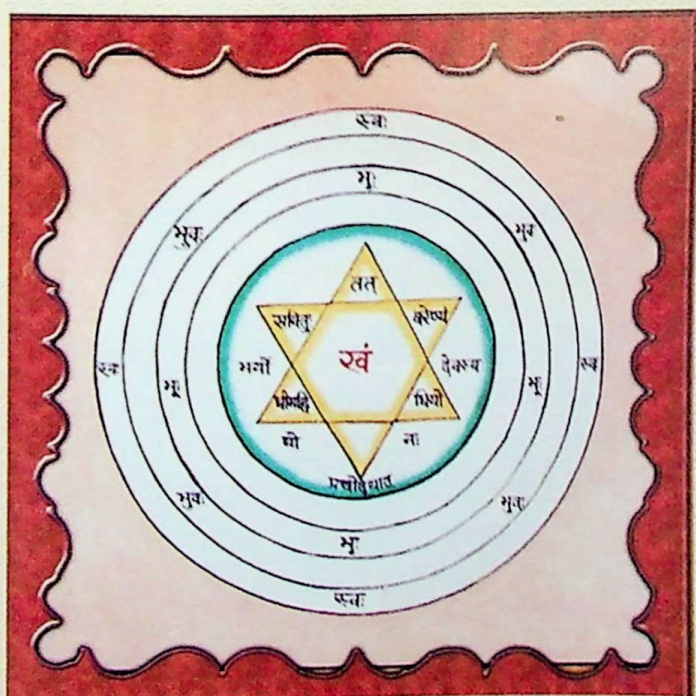
( ब )

## २०. भवानी

असुर निकन्दनि भवानी दुर्गा आदिशक्ति की विशेष अवतरण प्रकिया का रूप है। काया में स्थित देवशक्तियों की विशेषताएँ एक होकर दुर्गाशक्ति बन जाती है। पराक्रम का प्रतीक सिंह इसका वाहन है। इसकी आराधना-अनुकम्पा से व्यक्तियों, वृत्तियों तथा समाज में उभरते विकारों को दमित - शमित किया जा सकता है। यह सत्साहस एवं सत्पराक्रम उभारती है।

दुर्गा यंत्रम्
शक्ति
भवानी
रुद्र
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
नः
हुं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
ध्रुवा
अमोघा
फलश्रुति
संकल्प सिद्धि
अजेयता

( अ )

ॐ
स्वः
स्वः
भूः
भूः
ॐ
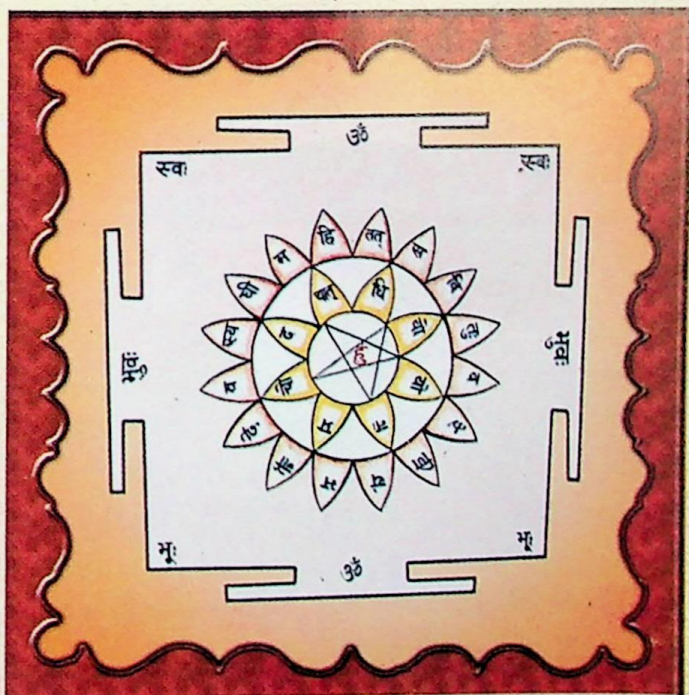
( ब )

## २१. अन्नपूर्णा

प्रकृतिमें सभी प्राणियों का जीवन उनके आहार - अन्न पर निर्भर रहता है । आद्यशक्ति की एक धारा उर्वर प्रवाहों को प्रेरित करके चर - अचर प्राणियों के लिए विविध प्रकार के अन्नों की आपूर्ति करती है । इस शक्तिधारा की आराधना से व्यक्तित्व के सभी अंग-अवयवों को पोषक अन्न प्राप्त होने तथा अन्न से प्राण का चक्र चलने का सुयोग बनता है।

अन्नपूर्णेश्वरी यंत्रम्
शक्ति
अन्नपूर्णा
पूसा
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
प्र
अं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
तृसा
पूर्णोदरी
फलश्रुति
तृप्ति
अभाव मुक्ति

(अ)

अं

(ब)
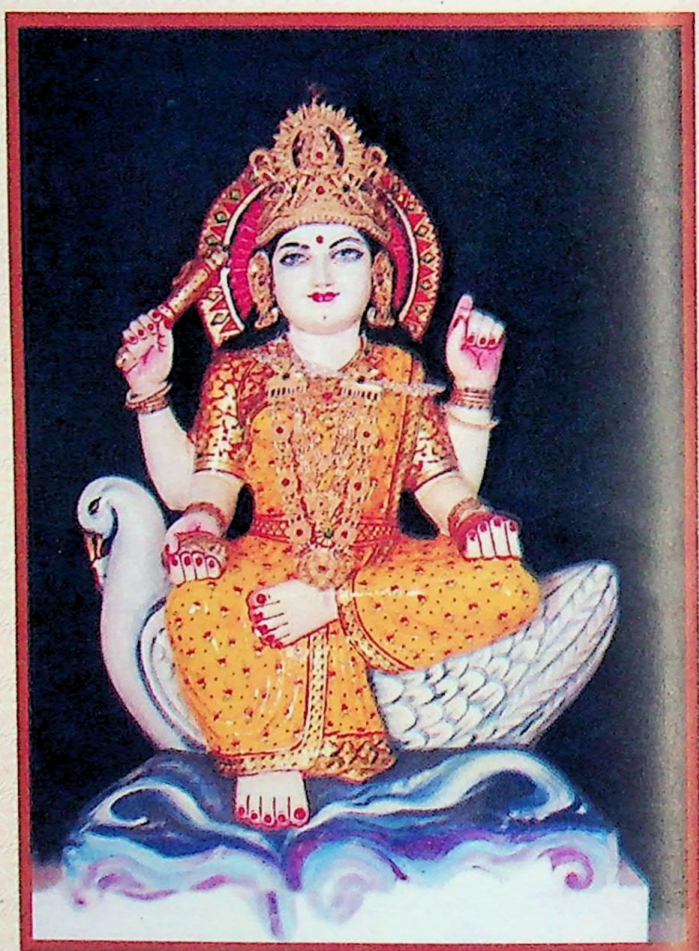
## २२. महामाया

माया में उलझ कर मनुष्य तरह - तरह के कष्ट-क्लेश पाते हैं। माया के चक्र से छुड़ाने की क्षमता महामाया में होती है। इनकी कृपा से व्यक्ति यथार्थ समझने लगता है, इसी को दिव्य दृष्टि की प्राप्ति कहा जाता है। जीवन, जगत् और ब्रह्म के बीच का तारतम्य समझ में आने से व्यक्ति सहज ही उस अनुशासन का अनुगमन करके मुक्ति लाभ प्राप्त करता है।

योगिनी यंत्रम्
शक्ति
महामाया
महादेव
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
चो
हं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
मेधा
पाशिनी
फलश्रुति
तत्त्वदृष्टि
भ्रममुक्ति

(अ)

हं
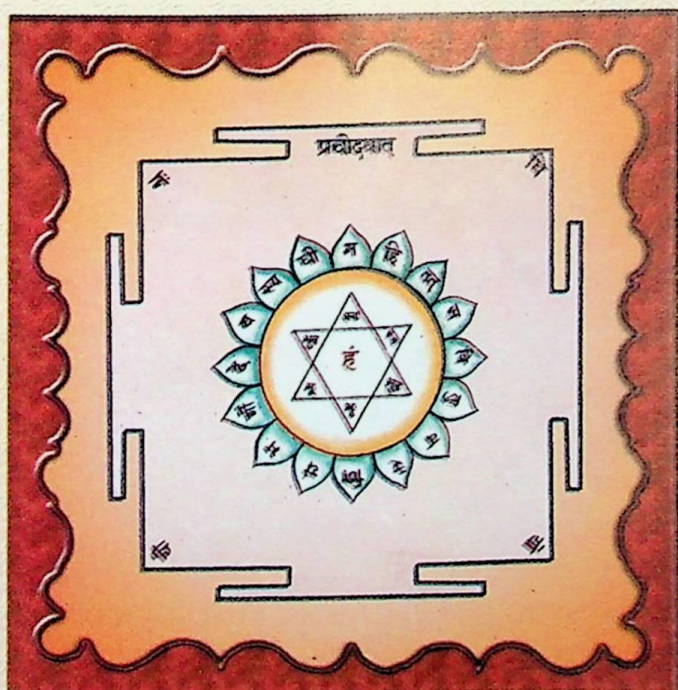
(ब)

## २३. पयस्विनी

माँ का पय:पान करके बालकों के शरीर में पुष्टि तथा अन्त: करण में संस्कारों का विकास होता है। माँ गायत्री पयस्विनी-कामधेनु बनकर दिव्य पयपान कराकर साधक को देवताओं जैसा समर्थ एवं पूर्णकाम बना देती है। इसके पयपान से विकृत कामनाएँ शुद्ध हो जाती हैं तथा श्रेष्ठ कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

# वरुण यंत्रम्

**शक्ति**

| | |
|---|---|
| पयस्विनी | वरुण |
| **मंत्राक्षर** | **बीजाक्षर** |
| द | वं |
| **आध्यात्मिक शक्ति** | **लौकिक शक्ति** |
| स्वधा | आर्द्रा |

**फलश्रुति**

| | |
|---|---|
| स्नेह | सरसता |

( अ )
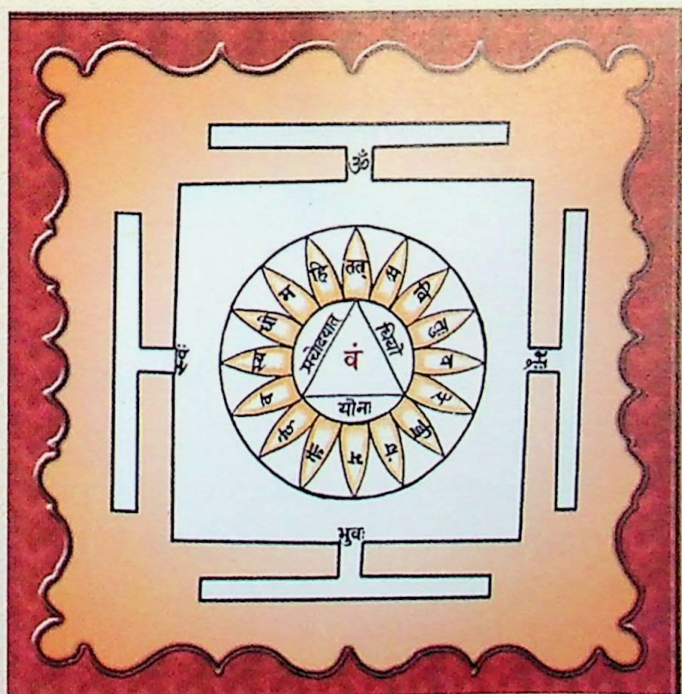
( ब )

## २४. त्रिपुरा

गायत्री को त्रिपुरा भी कहते हैं। यह तीनों लोकों, काया के तीनों (स्थूल, सूक्ष्म, कारण) कलेवरों को संतुलित एवं समर्थ बनाती है। तंत्र मार्गी त्रिपुर सुन्दरी, त्रिपुर भैरवी आदि नामों से इसकी उपासना करते हैं। इसकी साधना से त्रिविध तापों-त्रिविध पापों का उच्छेदन होता है।

त्रिधा यंत्रम्
शक्ति
त्रिपुरा
त्र्यंबक
मंत्राक्षर
बीजाक्षर
यात्
त्रीं
आध्यात्मिक शक्ति
लौकिक शक्ति
त्रिधा
त्रिशूला
फलश्रुति
त्रिगुणाधिकारी
त्रिताप मुक्ति

( अ )

ॐ
भूः
तत् सवितुर्वरेण्यं
भर्गो देवस्य धीमहि
त्रीं
धियो योनः प्रचोदयात्
स्वः
भुवः
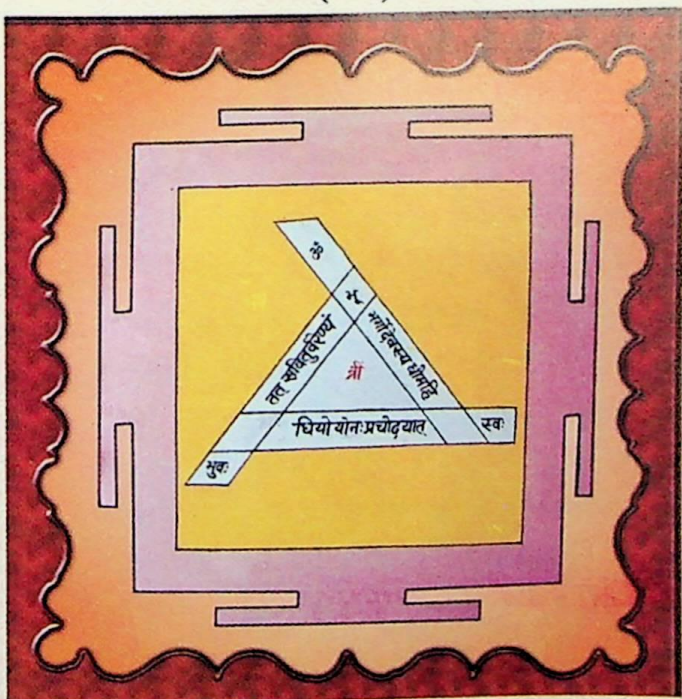
( ब )
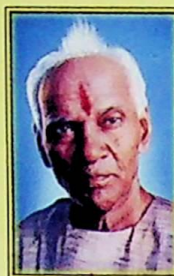
गायत्री की साधना सर्वसुलभ भी है और सर्वोत्तम फलदायिनी भी। हमने स्वयं इस छोटे से जीवन काल में २४-२४ लक्ष के चौबीस पुरश्चरण किए हैं। इस साधना में हमें जो अनुभव हुए हैं,उनका वर्णन करना उचित न समझ कर केवल इतना कहना चाहते हैं कि गायत्री ही भू-लोक की कामधेनु है। यह मंत्र इस भूतल का कल्पवृक्ष है। लोहे को स्वर्ण बनाने वाली, तुच्छ को महान् बनाने वाली, पारसमणि गायत्री ही है। यह वह अमृत निर्झरिणी है, जिसका आचमन करने वाले को परम तृप्ति और अगाध शान्ति प्राप्त होती है। गायत्री की आध्यात्मिक ज्ञान-गंगा में स्नान करके मनुष्य सब प्रकार के पाप-ताप से छुटकारा पा सकता है। हमारी सलाह और पथ-प्रदर्शन में अब तक जिन अनेक स्त्री-पुरुषों ने गायत्री की उपासना की है, उनने भी अपने अनुभव परम संतोष-जनक बताये हैं। इन सब अनुभवों के आधार पर हमारा सुनिश्चित विश्वास है कि कभी किसी की गायत्री साधना निष्फल नहीं जाती।

**- पं०श्रीराम शर्मा आचार्य**

# गायत्री की २४ शक्तियों का पृथक्-पृथक् तात्त्विक विवेचन

## १३-सावित्री

**'स्य' देवीं कथयन्त्येवं सावित्रीं देवतामथ।**
**सवितारं च बीजं तु 'ज्ञं' पुलस्त्यमृषिं पुनः॥**
**सावित्रीं यन्त्रमेतस्य कल्याणीष्टे विभूतिके ।**
**साफल्यं ब्रह्मविद्यां च द्वयं प्रतिफलं तथा॥**

अर्थात्-'स्य'अक्षर की देवी-'सावित्री',देवता-'सविता',बीज - 'ज्ञं', ऋषि-'पुलस्त्य',यन्त्र- 'सावित्रीयन्त्रम्', विभूति-,'कल्याणी एवं इष्टा' और प्रतिफल-'ब्रह्मविद्या एवं साफल्य', हैं।

आदि शक्ति की दो धाराएँ हैं-(१)आत्मिकी (२)भौतिकी। आत्मिकी को गायत्री और भौतिकी को सावित्री कहते हैं। गायत्री एक मुखी है, उसे एकात्मवाद, अद्वैतवाद,आत्मवाद कह सकते हैं। सावित्री पंचमुखी है। शरीर पाँच तत्त्वों से बना है। उनकी इन्द्रीयानुभूति पाँच तन्मात्राओं के सहारे शब्द,रूप,रस,गन्ध,स्पर्श के रूप में होती है। चेतना का स्पन्दन पाँच प्राणों के सहारे चलता है। पाँच तत्त्व और पाँच प्राण मिलकर जिस जीव-सत्ता को चलाते हैं, उसकी अधिष्ठात्री सावित्री हैं। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ इसी जीवन चर्या का चक्र आगे घसीटती हैं।

सावित्री का स्वरूप वर्णन करते हुए बताया गया है-

**सावित्री त्रिपदा ज्ञेया षटकुक्षिः पञ्चशीर्षका।**
**अग्निवर्णमुखा शुक्ला पुण्डरीकदलेक्षणा॥**

(सूत संहिता-गायत्री विवरण)

अर्थात् ''साबित्री तीन पाद, षटकुक्षि और पाँच मस्तक वाली है। वह अग्नि वर्ण की मुख वाली, शुभ्र और कमल नेत्रों वाली है।''

दैविक, दैहिक और भौतिक इन तीनों क्षेत्रों में सावित्री का अधिपत्य होने के कारण उसे तीन पाद वाली कहा गया है। कहते हैं कि वामन भगवान् ने तीन चरणों में राजा बलि के तीनों लोक वाले राज्य को नाप लिया था। सावित्री के तीन पाद भी तीनों लोकों तक लम्बे हैं। अर्थात् उनके प्रभाव से तीनों लोकों में अपनी स्थिति सुख-शान्तिमय बनती है। तीन लोक आकाश, पाताल और पृथ्वी को भी कहते हैं। पर यहाँ दैविक, दैहिक, भौतिक अर्थात् आध्यात्मिक, शारीरिक और सम्पत्ति-परक तीनों ही क्षेत्रों में सावित्री का प्रकाश पहुँचता है और उस महाशक्ति की उपासना से इन तीनों क्षेत्रों में आनन्द-उल्लास की परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं।

षटकुक्षि का तात्पर्य षटचक्र जागरण से है। शरीर में छिपे हुए छहों शक्ति संस्थान सावित्री उपासना से जागृत हो जाते हैं। किसी मिल में छह इन्जन हों और वे ठण्डे पड़े रहें, तब तो सारी मिल बन्द पड़ी रहेगी, पर यदि वे एक-एक करके सभी चालू हो जायँ तो मिल अपनी पूरी रफ्तार से चलने लगेगी और देखते-देखते उत्पादन का ढेर जमा हो जायगा। षट-चक्र मानव शक्ति में छिपे हुए अत्यन्त शक्तिशाली बायलर, इन्जन, जनरेटर हैं । उनके सक्रिय होने पर मनुष्य साधारण जीव नहीं रह जाता, वरन् उसकी गणना सिद्ध पुरुषों में होने लगती है। इस षट-चक्र जागरण के विधि-विधान में भी सावित्री सान्निध्य को ही प्रधान आधार माना गया है, इसलिए उसे छह कुक्षि वाली- छह साधानाओं वाली- बताया गया है।

सावित्री के पाँच मस्तक, पाँच कोषों के नाम से प्रख्यात हैं। अन्नमय कोष, मनोमय कोष, प्राणमय कोष, विज्ञानमय कोष, आनन्दमय कोष- यह पाँच आवरण जीव के ऊपर हैं। इनमें से प्रत्येक को एक रत्न भाण्डागार कहना चाहिये।

सूक्ष्म शरीर का सारा ढाँचा इन्हीं पाँच कोशों की सामग्री से बना है। विज्ञान की भाषा में इन्हें फिजिकल बॉडी, एस्ट्रल बॉडी, मेण्टल बॉडी, कॉजल बॉडी और कास्मिक बॉडी कहते हैं। अध्यात्म की भाषा में इन्हें ही अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष और आनन्दमय कोष कहा जाता है। ये पाँच बहुमूल्य खजाने काय-सत्ता के अन्तराल में विद्यमान हैं। उनमें सिद्धियों के और विभूतियों के भंडार भरे पड़े हैं। काय कलेवर में विद्यमान इन्हीं को पाँच देवता कहा गया है। ये जब तक प्रसुप्त स्थिति में रहते हैं, तभी तक मनुष्य दीन-दुर्बल रहता है। जब ये जागृत होते हैं तो पाँचों देवता मनुष्य की विविध सहायता करते देखे जाते हैं। दक्षिणमार्गी साधना में गायत्री को और वाममार्गी साधना में सावित्री को प्रमुख माना जाता है। सकाम साधनाएँ सावित्री परक होती हैं, उनमें प्रयोजनों के अनुरूप बीजमंत्र लगाये जाते हैं। गायत्री का प्रयोग आत्मोत्कर्ष के लिए होता है। उसमें स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों को समुन्नत बनाने वाले भूः,भुवः, स्वः के तीन बीजमंत्र पहले से ही लगे हुए हैं। ब्रह्म वर्चस् साधना में इन तीनों का सन्तुलित समन्वय है।

सावित्री के पाँच मुख वास्तव में उसके पाँच भाग हैं। १-ॐ, २-भूर्भवः स्वः, ३-तत्सवितुर्वरेण्यम् , ४-भर्गो देवस्य धीमहि, ५-धियो यो नः प्रचोदयात्। यज्ञोपवीत के भी पाँच भाग हैं- तीन लड़े, चौथी मध्य ग्रन्थियाँ, पाँचवे ब्रह्मग्रन्थि। पाँच देवता प्रसिद्ध हैं- ॐ अर्थात् गणेश, व्याहृति अर्थात् भवानी, गायत्री का प्रथम चरण-ब्रह्मा, द्वितीय चरण-विष्णु, तृतीय चरण-महेश, इस प्रकार यह पाँच देवता सावित्री के प्रमुख शक्ति पुञ्ज कहे जा सकते हैं।

सावित्री के पाँच मुख असंख्यों सूक्ष्म रहस्य और तत्त्व अपने भीतर छिपाये हुए हैं। उन्हें जानने के बाद मनुष्य को इतनी तृप्ति हो जाती है कि कुछ जानने लायक बात उसे सूझ नहीं पड़ती। महर्षि उददालक ने उस विद्या की प्रतिष्ठा की थी, जिसे जानकर और कुछ जानना शेष नहीं रह जाता, वह विद्या सावित्री विद्या ही है। चार वेद और पाँचवाँ यज्ञ, यह पाँचों ही सावित्री के पाँच मुख हैं जिनमें समस्त ज्ञान, विज्ञान और धर्म-कर्म बीज रूप से केन्दीभूत हो रहा है।

पाँच तत्व, पाँच कोष, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच प्राण, पाँच उपप्राण, पाँच तन्मात्राएँ, पाँच यज्ञ, पाँच देव, पाँच योग, पाँच अग्नि, पाँच अंग, पाँच वर्ण, पाँच स्थिति, पाँच अवस्था, पाँच शूल, पाँच क्लेश आदि अनेक पंचक सावित्री के पाँच मुखों से संबंधित हैं। इसको सिद्ध करने वाले पुरुषार्थी व्यक्ति ऋषि, राजर्षि, ब्रह्मर्षि, और देवर्षि कहलाते हैं। आत्मोन्नति की पाँच कक्षायें हैं, पाँच भूमिकायें हैं, उनमें से जो जिस कक्षा की भूमिका को उत्तीर्ण कर लेता है, वह उसी श्रेणी का ऋषि बन जाता है।

पंचमुखी सावित्री के ज्ञान पक्ष में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होने वाले पंचशीलों के परिपालन का संकेत है। सामान्य जीवन में श्रमशीलता, मितव्ययता, सहकारिता और सज्जनता की गतिविधियाँ पंचशील कहलाती हैं। विभिन्न वर्गों के लिए-विभिन्न प्रयोजनों के लिए पंचशील पृथक-पृथक हैं, जिनके परिपालन से अभीष्ट क्षेत्र की स्थूलताओं के द्वार सहज ही खुलते चले जाते हैं। पंचशील भी पंचदेव हैं।

गायत्री की असंख्य दिव्य धाराओं में सबसे निकटवर्ती और अधिक समर्थ सावित्री है। दोनों इतनी सघन हैं कि दोनों को प्रायः एक ही माना जाता है। वस्तुतः दोनों को शरीर और आत्मा की तरह भौतिकी और आत्मिकी माना जाना

चाहिए और आवश्यकतानुसार अभीष्ट उद्देश्यों के लिए उनका अंचल पकड़ना चाहिए।

सावित्री महाशक्ति के स्वरूप, वाहन एंव आसन आदि का संक्षिप्त तात्विक विवेचन इस प्रकार है-

सावित्री के पाँच मुख-पंचकोषों, पंचतत्त्वों, पंचप्राणों के प्रतीक हैं। दस हाथ-दसों दिशाओं, दस इन्द्रिय शक्तियों के प्रतीक हैं। आयुध-शंख से जागरूकता, अंकुश से आत्मानुशासन, चाबुक से निरालस्यता, चक्र से प्रगतिशीलता, गदा से शक्ति,पात्र से धारण क्षमता का बोध होता है। दो हाथों में कमल-सभ्यता और सुसंस्कारिता के प्रतीक हैं। दान मुद्रा से देवत्व का तथा आशीर्वाद मुद्रा से सद्भाव का बोध होता है। कमल आसन प्रफुल्लित विकासमान मनोभूमि का संकेत है। सावित्री महाशक्ति के स्वरूप एवं सम्बन्धित यंत्रादि की स्पष्ट झाँकी चित्र संख्या १३-अ, ब में की जा सकती है।

❑

सावित्री के पाँच मुख वास्तव में उसके पाँच भाग हैं। १-ॐ, २-भूर्भवः स्वः, ३-तत्सवितुर्वरेण्यम् , ४-भर्गो देवस्य धीमहि, ५-धियो यो नः प्रचोदयात्। यज्ञोपवीत के भी पाँच भाग हैं- तीन लड़े, चौथी मध्य ग्रन्थियाँ, पाँचवे ब्रह्मग्रन्थि। पाँच देवता प्रसिद्ध हैं- ॐ अर्थात् गणेश, व्याहृति अर्थात् भवानी, गायत्री का प्रथम चरण-ब्रह्मा, द्वितीय चरण-विष्णु, तृतीय चरण-महेश, इस प्रकार यह पाँच देवता सावित्री के प्रमुख शक्ति पुञ्ज कहे जा सकते हैं।

सावित्री के पाँच मुख असंख्यों सूक्ष्म रहस्य और तत्त्व अपने भीतर छिपाये हुए हैं। उन्हें जानने के बाद मनुष्य को इतनी तृप्ति हो जाती है कि कुछ जानने लायक बात उसे सूझ नहीं पड़ती। महर्षि उददालक ने उस विद्या की प्रतिष्ठा की थी, जिसे जानकर और कुछ जानना शेष नहीं रह जाता, वह विद्या सावित्री विद्या ही है। चार वेद और पाँचवाँ यज्ञ, यह पाँचों ही सावित्री के पाँच मुख हैं जिनमें समस्त ज्ञान, विज्ञान और धर्म-कर्म बीज रूप से केन्दीभूत हो रहा है।

पाँच तत्व, पाँच कोष, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच प्राण, पाँच उपप्राण, पाँच तन्मात्राएँ, पाँच यज्ञ, पाँच देव, पाँच योग, पाँच अग्नि, पाँच अंग, पाँच वर्ण, पाँच स्थिति, पाँच अवस्था, पाँच शूल, पाँच क्लेश आदि अनेक पंचक सावित्री के पाँच मुखों से संबंधित हैं। इसको सिद्ध करने वाले पुरुषार्थी व्यक्ति ऋषि, राजर्षि, ब्रह्मर्षि, और देवर्षि कहलाते हैं। आत्मोन्नति की पाँच कक्षायें हैं, पाँच भूमिकायें हैं, उनमें से जो जिस कक्षा की भूमिका को उत्तीर्ण कर लेता है, वह उसी श्रेणी का ऋषि बन जाता है।

पंचमुखी सावित्री के ज्ञान पक्ष में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होने वाले पंचशीलों के परिपालन का संकेत है। सामान्य जीवन में श्रमशीलता, मितव्ययता, सहकारिता और सज्जनता की गतिविधियाँ पंचशील कहलाती हैं। विभिन्न वर्गों के लिए-विभिन्न प्रयोजनों के लिए पंचशील पृथक-पृथक हैं, जिनके परिपालन से अभीष्ट क्षेत्र की स्थूलताओं के द्वार सहज ही खुलते चले जाते हैं। पंचशील भी पंचदेव हैं।

गायत्री की असंख्य दिव्य धाराओं में सबसे निकटवर्ती और अधिक समर्थ सावित्री है। दोनों इतनी सघन हैं कि दोनों को प्रायः एक ही माना जाता है। वस्तुतः दोनों को शरीर और आत्मा की तरह भौतिकी और आत्मिकी माना जाना

चाहिए और आवश्यकतानुसार अभीष्ट उद्देश्यों के लिए उनका अंचल पकड़ना चाहिए।

सावित्री महाशक्ति के स्वरूप, वाहन एंव आसन आदि का संक्षिप्त तात्विक विवेचन इस प्रकार है-

सावित्री के पाँच मुख-पंचकोषों, पंचतत्त्वों, पंचप्राणों के प्रतीक हैं। दस हाथ-दसों दिशाओं, दस इन्द्रिय शक्तियों के प्रतीक हैं। आयुध-शंख से जागरूकता, अंकुश से आत्मानुशासन, चाबुक से निरालस्यता, चक्र से प्रगतिशीलता, गदा से शक्ति, पात्र से धारण क्षमता का बोध होता है। दो हाथों में कमल-सभ्यता और सुसंस्कारिता के प्रतीक हैं। दान मुद्रा से देवत्व का तथा आशीर्वाद मुद्रा से सद्भाव का बोध होता है। कमल आसन प्रफुल्लित विकासमान मनोभूमि का संकेत है। सावित्री महाशक्ति के स्वरूप एवं सम्बन्धित यंत्रादि की स्पष्ट झाँकी चित्र संख्या १३-अ, ब में की जा सकती है।

❑

## १४- सरस्वती

सरस्वती तु 'धी' देवी देवता च प्रजापतिः।
'ऐं' बीजं कश्यपश्चर्षिर्यन्त्रं चाऽपि सरस्वती॥
कथितान्यस्य भूती तु हर्षा च प्रभवा पुनः।
कलात्मता स उल्लासो द्वयं प्रतिफलं मतम्॥

अर्थात् - 'धी' अक्षर की देवी - 'सरस्वती', देवता- 'प्रजापति', बीज-'ऐं', ऋषि- 'कश्यप', यन्त्र - 'सरस्वती यंत्रम्', विभूति- 'हर्षा एवं प्रभवा', तथा प्रतिफल- 'उल्लास एवं कलात्मकता' हैं।

ज्ञान चेतना के दो पक्ष हैं। एक प्रज्ञा और दूसरा बुद्धि। प्रज्ञा आत्मिक समाधान एवं उत्कर्ष का पथ प्रशस्त करती है। बुद्धि को लोक व्यवहार एवं निर्वाह की गुत्थियाँ सुलझाने एवं उपलब्धियाँ पाने के लिए प्रयोग किया जाता है। बुद्धि का स्वरूप मस्तिष्क है और प्रज्ञा का अन्तःकरण है। प्रज्ञा की अधिष्ठात्री गायत्री है और बुद्धि की संचारिणी सरस्वती। आवश्यकतानुसार दोनों में से जिसका आश्रय लिया जाता है, उसी का प्रतिफल प्राप्त होता है।

सरस्वती को साहित्य, संगीत, कला की देवी माना जाता है। उसमें विचारणा, भावना एवं संवेदना का त्रिविध समन्वय है। वीणा संगीत की, पुस्तक विचारणा की और मयूर वाहन कला की अभिव्यक्ति है।

लोक चर्चा में सरस्वती को शिक्षा की देवी माना गया है। शिक्षा संस्थाओं में वसंत पंचमी को सरस्वती का जन्म दिन समारोह पूर्वक मनाया जाता है। पशु को मनुष्य बनाने का - अंधे को नेत्र मिलने का श्रेय शिक्षा को दिया जाता है। मनन से मनुष्य बनता है। मनन बुद्धि का विषय है। भौतिक प्रगति का श्रेय बुद्धि-वर्चस् को दिया जाना और उसे सरस्वती का अनुग्रह माना जाना उचित भी है। इस उपलब्धि के बिना मनुष्य को नर-वानरों की तरह वनमानुष जैसा जीवन बिताना पड़ता है। शिक्षा की गरिमा-बौद्धिक विकास की आवश्यकता जन-जन को समझाने के लिए सरस्वती पूजा की परम्परा है। इसे प्रकारान्तर से गायत्री महाशक्ति के अंतर्गत बुद्धि पक्ष की आराधना कहना चाहिए।

कहते हैं कि महाकवि कालिदास, वरदराजाचार्य, वोपदेव आदि मंद बुद्धि के लोग सरस्वती उपासना के सहारे उच्च कोटि के विद्वान् बने थे। इसका सामान्य तात्पर्य तो इतना ही है कि ये लोग अधिक मनोयोग एवं उत्साह के साथ

अध्ययन में रुचिपूर्वक संलग्न हो गए और अनुत्साह की मन:स्थिति में प्रसुप्त पड़े रहने वाली मस्तिष्कीय क्षमता को सुविकसित कर सकने में सफल हुए होंगे। इसका एक रहस्य यह भी हो सकता है कि कारणवश दुर्बलता की स्थिति में रह रहे बुद्धि-संस्थान को सजग-सक्षम बनाने के लिए वे उपाय-उपचार किए गए जिन्हें 'सरस्वती आराधना' कहा जाता है। उपासना की प्रक्रिया भाव-विज्ञान का महत्त्वपूर्ण अंग है। श्रद्धा और तन्मयता के समन्वय से की जाने वाली साधना-प्रक्रिया एक विशिष्ट शक्ति है। मन:शास्त्र के रहस्यों को जानने वाले स्वीकार करते हैं कि व्यायाम, अध्ययन, कला, अभ्यास की तरह साधना भी एक समर्थ प्रक्रिया है, जो चेतना क्षेत्र की अनेकानेक रहस्यमयी क्षमताओं को उभारने तथा बढ़ाने में पूर्णतया समर्थ है। सरस्वती उपासना के संबंध में भी यही बात है। उसे शास्त्रीय विधि से किया जाय तो वह अन्य मानसिक उपचारों की तुलना में बौद्धिक क्षमता विकसित करने में कम नहीं, अधिक ही सफल होती है।

मन्दबुद्धि लोगों के लिए गायत्री महाशक्ति का सरस्वती तत्त्व अधिक हितकर सिद्ध होता है। बौद्धिक क्षमता विकसित करने, चित्त की चंचलता एवं अस्वस्थता दूर करने के लिए सरस्वती साधना की विशेष उपयोगिता है। मस्तिष्क-तंत्र से संबंधित अनिद्रा, सिर दर्द, तनाव, जुकाम जैसे रोगों में गायत्री के इस अंश-सरस्वती साधना का लाभ मिलता है। कल्पना शक्ति की कमी, समय पर उचित निर्णय न कर सकना, विस्मृति, प्रमाद, दीर्घसूत्रता, अरुचि जैसे कारणों से भी मनुष्य मानसिक दृष्टि से अपंग, असमर्थ जैसा बना रहता है और मूर्ख कहलाता है। उस अभाव को दूर करने के लिए सरस्वती साधना एक उपयोगी आध्यात्मिक उपचार है।

शिक्षा के प्रति जन-जन के मन-मन में अधिक उत्साह भरने-लौकिक अध्ययन और आत्मिक स्वाध्याय की उपयोगिता अधिक गम्भीरता पूर्वक समझने के लिए भी सरस्वती पूजन की परम्परा है। बुद्धिमत्ता को बहुमूल्य सम्पदा समझा जाय और उसके लिए धन कमाने, बल बढ़ाने, साधन जुटाने, मोद मनाने से भी अधिक ध्यान दिया जाय। इस लोकोपयोगी प्रेरणा को गायत्री महाशक्ति के अंतर्गत एक महत्त्वपूर्ण धारा सरस्वती की मानी गयी है और

उससे लाभान्वित होने के लिए प्रोत्साहित किया गया है।

सरस्वती के स्वरूप एवं आसन आदि का संक्षिप्त तात्त्विक विवेचन इस तरह है-

सरस्वती के एक मुख, चार हाथ हैं। मुस्कान से उल्लास, दो हाथों में वीणा-भाव संचार एवं कलात्मकता की प्रतीक है। पुस्तक से ज्ञान और माला से ईशनिष्ठा-सात्त्विकता का बोध होता है। वाहन मयूर-सौन्दर्य एवं मधुर स्वर का प्रतीक है। चित्र संख्या १४-अ, ब में इस महाशक्ति के स्वरूप एवं यंत्रादि को देखा व समझा जा सकता है।

❑

## १५- लक्ष्मी

**'म' वर्णस्य च देवी तु महालक्ष्मीस्तथैव च।**
**कुबेरो देवता बीजं 'श्रीं' ऋषिश्चाश्वलायनः॥**
**यन्त्रं श्रीः श्रीमुखी भूती तारिणी कथितान्यपि।**
**सम्पन्नत्वं सदिच्छा च द्वयं प्रतिफलं मतम्॥**

अर्थात्- 'म' अक्षर की देवी - 'महालक्ष्मी', देवता- 'कुबेर', बीज - 'श्रीं', ऋषि- 'आश्वलायन', यन्त्र - 'श्रीयन्त्रम्', विभूति- 'तारिणी एवं श्रीमुखी' और फलश्रुति- 'सदिच्छा एवं सम्पन्नता' है।

गायत्री की एक धारा 'श्री' है। 'श्री' अर्थात् लक्ष्मी-लक्ष्मी अर्थात् समृद्धि। गायत्री की कृपा से मिलने वाले वरदानों में एक लक्ष्मी भी है। जिस पर यह अनुग्रह उतरता है, वह दरिद्र, दुर्बल, कृपण, असंतुष्ट एवं पिछड़ेपन से ग्रसित नहीं रहता। स्वच्छता एवं सुव्यवस्था के स्वभाव को भी 'श्री' कहा गया है। यह सद्गुण जहाँ होंगे, वहाँ दरिद्रता, कुरुपता टिक नहीं सकेगी।

पदार्थ को मनुष्य के लिए उपयोगी बनाने और उसकी अभीष्ट मात्रा उपलब्ध करने की क्षमता को लक्ष्मी कहते हैं। यों प्रचलन में तो 'लक्ष्मी' शब्द सम्पत्ति के लिए प्रयुक्त होता है, पर वस्तुतः वह चेतना का एक गुण है, जिसके आधार पर निरुपयोगी वस्तुओं को भी उपयोगी बनाया जा सकता है। मात्रा में स्वल्प होते हुए भी उनका भरपूर लाभ सत्प्रयोजनों के लिए उठा लेना एक विशिष्ट कला है। वह जिसे आती है उसे लक्ष्मीवान्, श्रीमान् कहते हैं। शेष अमीर लोगों को धनवान् भर कहा जाता है। गायत्री की एक किरण लक्ष्मी भी है। जो इसे प्राप्त करता है, उसे स्वल्प साधनों में भी अर्थ उपयोग की कला आने के कारण सदा सुसम्पन्नों जैसी प्रसन्नता बनी रहती है।

धन का अधिक मात्रा में संग्रह होने मात्र से किसी को सौभाग्यशाली नहीं कहा जा सकता। सद्बुद्धि के अभाव में वह नशे का काम करती है, जो मनुष्य को अहंकारी, उद्धत, विलासी और दुर्व्यसनी बना देता है। सामान्यतया धन पाकर लोग कृपण, विलासी, अपव्ययी और अहंकारी हो जाते हैं। लक्ष्मी का एक वाहन उलूक माना गया है। उलूक अर्थात् मूर्खता। कुसंस्कारी व्यक्तियों को अनावश्यक सम्पत्ति मूर्ख ही बनाती है। उनसे दुरुपयोग ही बन पड़ता है और उसके फल स्वरूप वह आहत ही होती है।

लक्ष्मी का अभिषेक दो हाथी करते हैं। वह कमल के आसन पर विराजमान है। कमल कोमलता का प्रतीक है। कोमलता और सुंदरता सुव्यवस्था में ही सन्निहित रहती है। कला भी इसी सत्प्रवृत्ति को कहते हैं। लक्ष्मी का एक नाम कमल भी है। इसी को संक्षेप में कला कहते हैं। वस्तुओं को, सम्पदाओं को सुनियोजित रीति से सदुद्देश्य के लिए सदुपयोग करना, उसे परिश्रम एवं मनोयोग के साथ नीति और न्याय की मर्यादा में रहकर उपार्जित करना भी अर्थकला के अंतर्गत आता है। उपार्जन-अभिवर्धन में कुशल होना श्री तत्त्व के अनुग्रह का पूर्वार्द्ध है। उत्तरार्द्ध वह है जिसमें एक पाई का भी अपव्यय नहीं किया जाता। एक-एक पैसे को सदुद्देश्य के लिए ही खर्च किया जाता है।

लक्ष्मी का जल-अभिषेक करने वाले दो गजराजों को परिश्रम और मनोयोग कहते हैं। उनका लक्ष्मी के साथ अविच्छिन्न संबंध है। यह युग्म जहाँ भी रहेगा, वहाँ वैभव की, श्रेय-सहयोग की कमी रहेगी ही नहीं। प्रतिभा के धनी पर सम्पन्नता और सफलता की वर्षा होती है और उन्हें उत्कर्ष के अवसर पग-पग पर उपलब्ध होते हैं।

गायत्री के तत्त्वदर्शन एवं साधन क्रम की एक धारा लक्ष्मी है। इसका शिक्षण यह है कि अपने में उस कुशलता की, क्षमता की अभिवृद्धि की जाय, तो कहीं भी रहो, लक्ष्मी के अनुग्रह और अनुदान की कमी नहीं रहेगी। उसके अतिरिक्त गायत्री उपासना की एक धारा 'श्री' साधना है। उसके विधान अपनाने पर चेतना-केन्द्र में प्रसुप्त पड़ी हुई वे क्षमताएँ जागृत होती हैं, जिनके चुम्बकत्व से खिंचता हुआ धन-वैभव उपयुक्त मात्रा में सहज ही एकत्रित होता रहता है। एकत्रित होने पर बुद्धि की देवी सरस्वती उसे संचित नहीं रहने देती, वरन् परमार्थ प्रयोजनों में उसके सदुपयोग की प्रेरणा देती है।

लक्ष्मी प्रसन्नता की, उल्लास की, विनोद की देवी है। वह जहाँ रहेगी हँसने-हँसाने का वातावरण बना रहेगा। अस्वच्छता भी दरिद्रता है। सौन्दर्य, स्वच्छता एवं कलात्मक सज्जा का ही दूसरा नाम है। लक्ष्मी सौन्दर्य की देवी है। वह जहाँ रहेगी वहाँ स्वच्छता, प्रसन्नता, सुव्यवस्था, श्रमनिष्ठा एवं मितव्ययिता का वातावरण बना रहेगा।

गायत्री की लक्ष्मी धारा का आवगाहन करने वाले श्रीवान बनते हैं और उसका आनन्द एकाकी न लेकर असंख्यों को लाभान्वित करते हैं।

लक्ष्मी के स्वरूप, वाहन आदि का संक्षेप में विवेचन इस प्रकार है-

लक्ष्मी के एक मुख, चार हाथ हैं। वे एक लक्ष्य और चार प्रकृतियों (दूरदर्शिता, दृढ़ संकल्प, श्रमशीलता एवं व्यवस्था शक्ति) के प्रतीक हैं। दो हाथों में कमल-सौन्दर्य और प्रामाणिकता के प्रतीक हैं। दान मुद्रा से उदारता तथा आशीर्वाद मुद्रा से अभय अनुग्रह का बोध होता है। वाहन-उलूक, निर्भीकता एवं रात्रि में-अँधेरे में भी देखने की क्षमता का प्रतीक है। लक्ष्मी की एवं उनके श्री यंत्र आदि को चित्र संख्या १५-अ, ब में देखा-समझा जा सकता हैं।

❑

## १६ महाकाली

**'हि' देवी तु महाकाली महाकालश्च देवता।**
**बीजं 'क्लीं' कथितान्येवं दुर्वासाश्चैव स ऋषिः॥**
**कालिका यन्त्रमेवं च भूती भर्गा च वज्रिणी।**
**अस्य प्रतिफलं शत्रुनाशः कल्मषनाशनम्॥**

अर्थात् - 'हि' अक्षर की देवी - 'महाकाली', देवता- 'महाकाल', बीज - 'क्लीं', ऋषि- 'दुर्वासा', यन्त्र - 'कालिकायंत्रम्', विभूति - 'भर्गा एवं वज्रिणी' तथा प्रतिफल- 'कल्मषनाश एवं शत्रुनाश' है।

गायत्री की एक धारा दुर्गा है। दुर्गा को ही काली कहते हैं। काली को महाकाल की सहधर्मिणी माना गया है। महाकाल अर्थात् सुविस्तृत समय-सौरभ। काल की महत्ता स्वीकार करने वाले, उसकी उपयोगिता समझने वाले, उसका सदुपयोग करने वाले काली के उपासक कहे जाते हैं।

आलस्य में शरीर और प्रमाद में मन की क्षमता को नष्ट होने से बचा लिया जाय तो सामान्य स्तर का मनुष्य भी अभीष्ट उद्देश्यों में चरम सफलता प्राप्त कर सकता है। समय ही ईश्वर प्रदत्त वह सम्पदा है जिसका उपयोग करके नुष्य जिस प्रकार की भी सफलता प्राप्त करना चाहे उसे प्राप्त कर सकता है। श्वर सूक्ष्म है, उसका पुत्र जीव भी सूक्ष्म है। पिता से पुत्र को मनुष्य जन्म का महान् अनुदान तो मिला ही है, साथ ही समय रूपी ऐसा अदृश्य धन भी मिला है जिसे यदि आलस्य-प्रमाद में बर्बाद न किया जाय, किसी प्रयोजन विशेष के लिए नियोजित रखा जाय तो उसके बदले में सांसारिक एवं आध्यात्मिक सम्पदायें प्रचुर परिमाण में उपलब्ध की जा सकती हैं। इस तथ्य को गायत्री की काली विग्रह में स्पष्ट किया गया है।

हर दिन व्यस्त योजना बनाकर चलना और उस प्रयास में प्राणपण से एकाग्र भाव से जुटे रहना इष्ट प्राप्ति का सुनियोजित आधार है। इसी रीति-नीति में गहन श्रद्धा उत्पन्न कर लेना महाकाल की उपासना है। इसी अवलम्बन को अपनाने से महामानवों की भूमिका को सम्पादित कर सकना संभव हो सकता है।

काली के अन्यान्य नाम भी हैं। दुर्गा, चण्डी, अम्बा, शिवा, पार्वती, आदि उसी को कहते हैं। इसका एक रूप संघ शक्ति भी है। एकाकीपन सदा अपूर्ण ही रहता है, भले ही वह कितना ही समर्थ, सुयोग्य एवं सम्पन्न क्यों न हो।

जिसे जितना सहयोग मिल जाता है वह उसी क्रम से आगे बढ़ता है। संगठन की महिमा अपार है। व्यक्ति और समाज की सारी प्रगति, समृद्धि और शान्ति का आधार सामूहिकता एवं सहकारिता है। अब तक की मानवी उपलब्धियाँ सहकारी प्रकृति के कारण ही सम्भव हुई हैं। भविष्य में भी कुछ महत्त्वपूर्ण पाना हो तो उसे सम्मिलित उपायों से ही प्राप्त किया जा सकेगा।

दुर्गा अवतार की कथा है कि असुरों द्वारा संत्रस्त देवताओं का उद्धार करने के लिए प्रजापति ने उनका तेज एकत्रित किया था और उसे काली का रूप देकर प्रचण्ड शक्ति उत्पन्न की थी। उस चण्डी ने अपने पराक्रम से असुरों को निरस्त किया था और देवताओं को उनका उचित स्थान दिलाया था। इस कथा में यही प्रतिपादन है कि सामूहिकता की शक्ति असीम है। इसका जिस भी प्रयोजन में उपयोग किया जाएगा, उसी में असाधारण सफलता मिलती चली जाएगी।

दुर्गा का वाहन सिंह है। वह पराक्रम का प्रतीक है। दुर्गा की गतिविधियों में संघर्ष की प्रधानता है। जीवन संग्राम में विजय प्राप्त करने के लिए हर किसी को आंतरिक दुर्बलताओं और स्वभावगत दुष्प्रवृत्तियों से निरंतर जूझना पड़ता है। बाह्य जीवन में अवांछनीयताओं एवं अनीतियों के आक्रमण होते रहते हैं और अवरोध सामने खड़े रहते हैं। उनसे संघर्ष करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं है। शांति से रहना तो सभी चाहते हैं, पर आक्रमण और अवरोधों से बच निकलना कठिन है। उससे संघर्ष करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं। ऐसे साहस का, शौर्य-पराक्रम का उद्भव गायत्री महाशक्ति के अंतर्गत दुर्गा तत्त्व के उभरने पर संभव होता है। गायत्री उपासना से साधक के अंतराल में उसी स्तर की प्रखरता उभरती है। इसे दुर्गा का अनुग्रह साधक को उपलब्ध हुआ माना जाता है।

महाकाली के स्वरूप एवं आयुध आदि का संक्षिप्त विवेचन निम्न प्रकार है -

काली का विकराल मुख-असुरता को भयभीत करने वाला है। चार हाथों में खड्ग और राक्षस का सिर-असुरता के विनाश हेतु, खप्पर (पात्र) धारण शक्ति का तथा अभयमुद्रा देव पक्ष के लिए आश्वासन है। शिव के मार्ग में आने पर रोष में भी पैर उठा रह जाना-शिवत्व की मर्यादा रखने का प्रतीक है। काली महाशक्ति की दर्शन झांकी एवं कालिका यंत्र आदि को चित्र संख्या १६-अ, ब में स्पष्ट रूप से देखा व समझा जा सकता है।

## १७. कुण्डलिनी

'धि' वर्णस्य च देवी तु प्रोक्ता कुण्डलिनी तथा।
देवता भैरवो बीजं 'लं' ऋषिः कण्व एव च॥
भैरवं यन्त्रमेतस्य धृतिः सा प्रतिभा तथा।
विभूती फलमोजस्वितोन्नतिः कथितानि च॥

अर्थात् - 'धि' अक्षर की देवी - 'कुण्डलिनी', देवता- 'भैरव', बीज- 'लं', ऋषि- 'कण्व', यन्त्र - 'भैरवयन्त्रम्', विभूति- 'धृति एवं प्रतिभा' और प्रतिफल - 'ओजस्विता एवं उन्नति' है।

गायत्री की एक शक्ति कुण्डलिनी है। कुण्डलिनी वह भौतिक ऊर्जा है जो जीवात्मा के साथ लिपटकर अत्यंत घनिष्ठ हो गई है। इसे प्राण-विद्युत्, वॉयटल फोर्स-जीवनी शक्ति, प्राण ऊर्जा, योगाग्नि, सर्पेन्टाइन पावर आदि नामों से जाना जाता है। नस-नाड़ियों में एक चैतन्य विद्युत् गतिशील रहती है। इसके दो सिरे हैं, जिन्हें ध्रुव केन्द्र माना जाता है। यह केन्द्र पृथ्वी के उत्तरी-दक्षिणी ध्रुवों की तरह हैं। उत्तरी ध्रुव है-मस्तिष्क का मध्य बिन्दु- ब्रह्मरंध्र। इसी स्थान पर सहस्रार चक्र है। इसका सीधा संबंध ब्रह्म चेतना से है। जिस प्रकार उत्तरी [illegible]व केन्द्र का चुम्बकत्व अपने लिए आवश्यक शक्तियों तथा पदार्थों को ब्रह्माण्ड [illegible] अंतर्ग्रही भाण्डागार से उपलब्ध करता रहता है, उसी प्रकार सहस्रार चक्र में वह सामर्थ्य है कि व्यापक ब्रह्म चेतना के भाण्डागार में संव्याप्त दिव्य शक्तियों में से अपने लिए आवश्यक क्षमताएँ अभीष्ट मात्रा में उपलब्ध कर सके। ब्रह्म-रंध्र में कुण्डलिनी का एक सिरा है जिसे 'महासर्प' कहते हैं। इसकी आकृति कुण्डलाकार है। शेषनाग, शिव, सर्प आदि इसी के नाम हैं। गायत्री उपासना से इस महासर्प की मूर्छना जागृत की जाती है और उसकी प्रचण्ड क्षमता के सहारे अध्यात्म क्षेत्र में असंख्य विभूतियों का लाभ उठाया जाता है।

कुण्डलिनी का दूसरा सिरा मूलाधार चक्र है। यह मल-मूत्र छिद्रों के मध्य एक छोटा शक्ति भँवर है, इसे दक्षिणी ध्रुव के समतुल्य कहा गया है। मानवी काया में पदार्थ ऊर्जा का उत्पादन और वितरण यहीं से होता है। प्रजनन की सामर्थ्य यहीं है। स्फूर्ति, उल्लास, और साहस जैसी विशिष्टताएँ यहीं से उद्‌भूत होती हैं। मानवी-काया में काम करने वाली अनेकों शक्तियों का उद्‌गम केन्द्र यही है। स्थूल शरीर में मस्तिष्क और हृदय को प्रधान अवयव माना गया है। सूक्ष्म शरीर का मस्तिष्क सहस्रार चक्र 'महासर्प' है और हृदय 'मूलाधार

चक्र'। मूलाधार को कुण्डलिनी का दक्षिणी ध्रुव माना गया है। दोनों ध्रुवों का मध्यवर्ती प्रवाह प्रसुप्त स्थिति में पड़ा रहता है। फलतः मनुष्य अन्य प्राणियों की तरह पेट-प्रजनन जैसे शरीर निर्वाह के तुच्छ काम ही कर पाता है। कुण्डलिनी जागरण से दिव्य ऊर्जा जागृत होती है और मनुष्य की सामर्थ्य असामान्य बन जाती है। मूलाधार स्थित सर्पिणी अर्थात् प्राण ऊर्जा और सहस्रार स्थित महासर्प-ब्रह्म चेतना के मध्य आदान-प्रदान का द्वार खुल जाना ही कुण्डलिनी जागरण है। भौतिक और आत्मिक क्षमताओं का मिलन-सम्पर्क वैसा ही चमत्कारी परिणाम उत्पन्न करता है, जैसा बिजली के दोनों तार परस्पर मिलते ही शक्तिशाली प्रवाह उत्पन्न करते हैं।

मस्तिष्कीय सामर्थ्य को परिष्कृत बनाने का काम योग साधनाओं द्वारा किया जाता है। प्राण ऊर्जा में प्रचण्डता उत्पन्न करना और उसकी सामर्थ्य से भौतिक एवं आत्मिक शक्तियों को बलवती बनाना तंत्र-विज्ञान है। कुण्डलिनी तंत्र विद्या की अधिष्ठात्री है। भूलोक का प्रतिनिधि मूलाधार है और ब्रह्मलोक का सहस्रार। दोनों का मध्यवर्ती आवागमन देवयान मार्ग से होता है। मेरुदण्ड ही देवयान-मार्ग है। इस लम्बे मार्ग में षटचक्र अवस्थित हैं। सातवां लक्ष्य बिन्दु सहस्रार है। इन्हीं का सप्त लोक, सप्तसिंधु, सप्तगिरि, सप्तऋषि, सप्तपुरी, सप्ततीर्थ, सप्तस्वर, सप्तद्वीप, सप्ताह, सप्त धातु आदि के रूप में विस्तार हुआ है। कुण्डलिनी के जागरण से देवयान मार्ग के यह सभी सप्त सोपान जागृत होते हैं और साधक की सत्ता दिव्य क्षमताओं से सुसम्पन्न हो भर जाती है।

मनुष्य में प्राण-ऊर्जा की प्रचण्ड शक्ति मूलाधार चक्र के केन्द्रबिन्दु में अवलम्बित है और वहीं से समस्त शरीर में परिभ्रमण करती हुई सामान्य जीवन के अनेकानेक प्रयोजन पूरे करती रहती है। इसकी असाधारण क्षमता का पता इससे लगता है कि यह केन्द्र जननेन्द्रिय के माध्यम से सक्रिय होकर एक नया मनुष्य उत्पन्न करने में समर्थ होता है। मनुष्य में शौर्य, साहस, पराक्रम, उत्साह, उल्लास, स्फूर्ति, उमंग जैसी अनेक विशेषताएँ-क्षमताएँ यहीं से स्फुरित होती रहती हैं। कामोत्तेजना में इसी क्षमता की हलचलों का आभास मिलता है। प्रजनन प्रयोजनों में प्रायः उसका बड़ा भाग नष्ट होता रहता है।

सामान्य प्राण को महाप्राण में परिणित करके ब्रह्मरंध्र तक पहुँचा देना और वहाँ के प्रसुप्त शक्ति-भण्डार को जगाकर मनुष्य को देवोपम बना देना कुण्डलिनी जागरण का उद्देश्य है। समुद्र-मंथन से १४ रत्न निकले थे, कुण्डलिनी के शक्ति-सागर का मंथन भी दिव्य शक्ति की रत्न राशि का द्वार साधक के लिए खोलता है। यही अधोगति को ऊर्ध्व गति में परिणित करने की प्रक्रिया कुण्डलिनी जागरण है। इस साधना में काम बीज को शक्ति बीज में परिवर्तित किया जाता है। काली का महाकाल से, शिव का शक्ति से, प्राण का महाप्राण से मिलन होने पर उनकी संयुक्त शक्ति से चमत्कारी परिणाम उत्पन्न होते हैं। इसी को कुण्डलिनी जागरण कहते हैं। गायत्री के ही एक प्रवाह कुण्डलिनी जागरण को गायत्री की तंत्र पक्षीय उपलब्धि कहा गया है।

कुण्डलिनी-जागरण की प्रक्रिया गायत्री साधना के अंतर्गत ही सरल पड़ती है। हठयोग, प्राणयोग, तंत्रयोग आदि के माध्यम से भी उसे एक सीमा तक जागृत किया जाता है, किन्तु परिपूर्ण उपयोग शक्ति और जागरण गायत्री के माध्यम से ही हो सकता है। गायत्री की २४ शक्तियों में से एक कुण्डलिनी भी हैं। गायत्री साधना की सौम्य प्रक्रिया अपना कर साधकों को कुण्डलिनी जागरण का लाभ अधिक निश्चिन्तता पूर्वक, बिना किसी प्रकार का जोखिम उठाए सरल रूप से मिल सकता है।

कुण्डलिनी के स्वरूप, आयुध एवं वाहन आदि का संक्षिप्त विवेचन इस तरह है -

कुण्डलिनी के एक मुख है। चार हाथों में क्रमशः बाँसुरी-सुप्त को जाग्रत् करने वाली क्षमता का, सर्प-कुण्डलिनी में सामान्य दिखते हुए भी असामान्य शक्ति का, कमण्डलु-धारण करने की क्षमता का तथा आशीर्वाद मुद्रा-से लोकहित के लिए प्रतिबद्धता का बोध होता है। वाहन कूर्म-संयम और दीर्घ आयु का प्रतीक है। चित्र संख्या १७-अ, ब में कुण्डलिनी महाशक्ति की स्पष्ट झाँकी की जा सकती है।

❑

## १८. ज्वालामुखी ( प्राणाग्नि )

ज्वालामुखी तु 'यो' देवी जातवेदश्च देवता।
बीजं 'रं' स ऋषिश्चास्य याज्ञवल्क्योऽथ यन्त्रकम्॥
ऊर्जो भूती च स्वाहाऽथाजरा पुष्टिस्तथैव च।
आरोग्यं च फलं पूर्णं कथितानि क्रमादिह॥

अर्थात् - 'यो' अक्षर की देवी- 'ज्वालामुखी', (प्राणाग्नि), देवता- 'जातवेदा' बीज- 'रं', ऋषि - 'याज्ञवल्क्य', यंत्र- 'ऊर्जायन्त्रम्', विभूति- 'स्वाहा एवं अजरा' तथा प्रतिफल- 'पुष्टि एवं आरोग्य' है।

गायत्री के २४ प्रधान नामों एवं रूपों में 'प्राणाग्नि' भी है। प्राण एक सर्वव्यापी चेतना प्रवाह है। जब वह प्रचण्ड हो उठता है तो उसकी ऊर्जा अग्नि बनकर प्रकट होती है। प्राण-तत्त्व की प्रखरता और प्रचण्डता की स्थिति को प्राणाग्नि कहते हैं। अग्नि की दाहक, ज्योतिर्मय एवं आत्मसात् कर लेने की विशेषता से सभी परिचित हैं। प्राणाग्नि की दिव्य क्षमता जहाँ भी प्रकट होती है, वहाँ से कषाय-कल्मषों का नाश होकर ही रहता है। जहाँ यह क्षमता उत्पन्न होती है वहाँ अंधकार दिखेगा नहीं, सब कुछ प्रकाशवान् ही दिखाई देगा। प्राणाग्नि की सामर्थ्य आपके सम्पर्क क्षेत्र को आत्मसात् कर लेती है। पदार्थ और प्राणी अनुकूल बनते हैं, अनुरूप ढलते चले जाते हैं। प्राणाग्नि सम्पन्न व्यक्तियों का वर्गीकरण ओजस्वी, तेजस्वी, मनस्वी के रूप में किया जाता है।

प्राणाग्नि विद्या को पंचाग्नि विद्या कहा गया है। कठोपनिषद् में यम ने नचिकेता को पंचाग्नि विद्या सिखाकर उसे कृतकृत्य किया था। यह पाँच प्राणों का विज्ञान और विनियोग ही है, जिसे जानने, अपनाने वाला सच्चे अर्थों में महाप्राण बन जाता है।

गायत्री को प्राणाग्नि कहा गया है। गायत्री शब्द का अर्थ ही 'प्राण-रक्षक' होता है। प्राणशक्ति प्रखर-प्रचण्ड बनाने की क्षमता से सुसम्पन्न बनना गायत्री साधना का प्रमुख प्रतिफल है। प्राणवान् होने का प्रमाण सत्प्रयोजनों के लिए साहसिकता एवं उदारता प्रदर्शित करने के रूप में सामने आता है। सामान्य लोग स्वार्थ पूर्ति के लिए दुष्कर्म तक कर गुजरने में दुस्साहस करते पाए जाते हैं। सदुद्देश्यों की पूर्ति के लिए कुछ करने की तो मात्र कल्पना ही कभी-कभी उठती है। उसके लिए कुछ कर गुजरना बन ही नहीं पड़ता। आदर्शों को

अपनाने वालों को जीवनक्रम में कठोर संयम और अनुशासन का समावेश करना पड़ता है और हेय मार्ग पर चलने-चलाने वालों से विरोध-असहयोग करना होता है। इस प्रबल पुरुषार्थ को कर सकने में महाप्राण ही सफल होते हैं।

प्राण की बहुलता सत्प्रयोजनों के लिए साहसिक कदम उठाने, त्याग - बलिदान के अनुकरणीय आदर्श उपस्थित करने एवं सत्संकल्पों के निर्वाह में सुदृढ़ बने रहने के रूप में दृष्टिगोचर होती है। अनीति से लड़ने एवं परिस्थितिवश कठिनाई आने पर धैर्य बनाए रखने तथा निराशाजनक परिस्थिति में भी उज्ज्वल प्रभाव की आशा करने में भी प्राणवान् होने का प्रमाण मिलता है। गायत्री उपासना से इस प्रखरता की अभिवृद्धि होती है।

प्राणाग्नि के स्वरूप, आसन आदि का वर्णन संक्षेप में इस तरह है -

प्राणाग्नि के एक मुख, चार हाथ है। स्रुवा-यज्ञीय कर्म का, अंकुश-शक्ति के नियंत्रण की क्षमता और श्रीफल-पूर्णाहुति कार्य को पूर्णता प्रदान करने के संकल्प का प्रतीक है। आशीर्वाद मुद्रा - 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' का संकेत है। आसन-यज्ञकुण्ड-शक्ति के यज्ञार्थ-लोकहितार्थ उपयोग की प्रतिबद्धता का प्रतीक है। प्राणाग्नि एवं उसके यंत्र आदि चित्र संख्या १८-अ, ब में देखे जा सकते हैं।

❑

## १९. भुवनेश्वरी -

'यो' देवी भुवनेशी तु देवता च पुरन्दरः।
बीजं 'खं' जमदग्निश्च स ऋषिर्यन्त्रकं विभुः॥
गौरी विश्वोत्तमे भूती यश ऐश्वर्यमेव च।
फलं च क्रमशः सर्वाण्येतान्युक्तानि ते मया॥

अर्थात् - 'यो' अक्षर की देवी- 'भुवनेश्वरी', देवता- 'पुरन्दर', बीज- 'खं', ऋषि- 'जमदग्नि', यन्त्र- 'विभूति यन्त्रम्' विभूति- 'गौरी एवं विश्वोत्तमा' और प्रतिफल - 'सुयश एवं ऐश्वर्य' है।

भुवनेश्वरी अर्थात् संसार भर के ऐश्वर्य की स्वामिनी। वैभव-पदार्थों के माध्यम से मिलने वाले सुख-साधनों को कहते हैं। ऐश्वर्य-ईश्वरीय गुण है- वह आंतरिक आनंद के रूप में उपलब्ध होता है। ऐश्वर्य की परिधि छोटी भी है और बड़ी भी। छोटा ऐश्वर्य छोटी-छोटी सत्प्रवृत्तियाँ अपनाने पर उनके चरितार्थ होते समय सामयिक रूप से मिलता रहता है। यह स्वउपार्जित, सीमित आनंद देने वाला और सीमित समय तक रहने वाला ऐश्वर्य है। इसमें भी स्वल्प कालीन अनुभूति होती है और उसका रस कितना मधुर है, यह अनुभव करने पर अधिक उपार्जन का उत्साह बढ़ता है।

भुवनेश्वरी इससे ऊँची स्थिति है। उसमें सृष्टि भर का ऐश्वर्य अपने अधिकार में आया प्रतीत होता है। स्वामी रामतीर्थ अपने को 'राम बादशाह' कहते थे। उनको विश्व का अधिपति होने की अनुभूति होती थी, फलतः उस स्तर का आनंद लेते थे, जो समस्त विश्व के अधिपति होने वाले को मिल सकता है। छोटे-छोटे पद पाने वाले-सीमित पदार्थों के स्वामी बनने वाले, जब अहंता को तृप्त करते और गौरवान्वित होते हैं, तो समस्त विश्व का अधिपति होने की अनुभूति कितनी उत्साहवर्धक होती होगी, इसकी कल्पना भर से मन आनंद विभोर हो जाता है। राजा छोटे से राज्य के मालिक होते हैं, वे अपने को कितना श्रेयाधिकारी, सम्मानास्पद एवं सौभाग्यवान् अनुभव करते हैं, इसे सभी जानते हैं। छोटे-बड़े राजपद पाने की प्रतिस्पर्धा इसीलिए रहती है कि आधिपत्य का अपना गौरव और आनन्द है।

यह वैभव का प्रसंग चल रहा है। यह मानवी एवं भौतिक है। ऐश्वर्य दैवी,आध्यात्मिक,भावनात्मक है। इसलिए उसके आनन्द की अनुभूति उसी अनुपात से अधिक होती है। भुवन भर की चेतनात्मक आनन्दानुभूति का आनन्द जिसमें भरा हो उसे भुवनेश्वरी कहते हैं। गायत्री की यह दिव्यधारा जिस पर अवतरित होती है, उसे निरन्तर यही लगता है कि उसे विश्व भर के ऐश्वर्य

का अधिपति बनने का सौभाग्य मिल गया है। वैभव की तुलना में ऐश्वर्य का आनन्द असंख्य गुणा बड़ा है। ऐसी दशा में सांसारिक दृष्टि से सुसम्पन्न समझे जाने की तुलना में भुवनेश्वरी की भूमिका में पहुँचा हुआ साधक भी लगभग उसी स्तर की भाव संवेदनाओं से भरा रहता है, जैसा कि भुवनेश्वर भगवान् को स्वयं अनुभव होता होगा।

भावना की दृष्टि से यह स्थिति परिपूर्ण आत्मगौरव की अनुभूति है। वस्तु स्थिति की दृष्टि से इस स्तर का साधक ब्रह्मभूत होता है, ब्राह्मी स्थिति में रहता है। इसलिए उसकी व्यापकता और समर्थता भी प्राय: परब्रह्म के स्तर की बन जाती है। वह भुवन भर में बिखरे पड़े विभिन्न प्रकार के पदार्थों का नियन्त्रण कर सकता है। पदार्थों और परिस्थितियों के माध्यम से जो आनन्द मिलता है,उसे अपने संकल्प बल से अभीष्ट परिमाण में आकर्षित-उपलब्ध कर सकता है।

भुवनेश्वरी मन: स्थिति में विश्वभर की अन्त: चेतना अपने दायित्व के अन्तर्गत मानती है। उसकी सुव्यवस्था का प्रयास करती है। शरीर और परिवार का स्वामित्व अनुभव करने वाले इन्हीं के लिए कुछ करते रहते हैं। विश्वभर को अपना ही परिकर मानने वाले का निरन्तर विश्वहित में ध्यान रहता है। परिवार सुख के लिए शरीर सुख की परवाह न करके प्रबल पुरुषार्थ किया जाता है। जिसे विश्व परिवार की अनुभूति होती है, वह जीव-जगत् से आत्मीयता साधता है। उनकी पीड़ा और पतन का निवारण करने के लिए पूरा-पूरा प्रयास करता है। अपनी सभी सामर्थ्य को निजी सुविधा के लिए उपयोग न करके व्यापक विश्व की सुख शान्ति के लिए नियोजित रखता है।

वैभव उपार्जन के लिए भौतिक पुरुषार्थ की आवश्यकता होती है। ऐश्वर्य की उपलब्धि भी आत्मिक पुरुषार्थ से ही संभव है। व्यापक ऐश्वर्य की अनुभूति तथा सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए साधनात्मक पुरुषार्थ करने पड़ते हैं। गायत्री उपासना में इस स्तर की साधना जिस विधि-विधान के अन्तर्गत की जाती है उसे 'भुवनेश्वरी' कहते हैं।

भुवनेश्वरी के स्वरूप, आयुध, आसन आदि का संक्षेप में विवेचन इस तरह है--

भुवनेश्वरी के एक मुख, चार हाथ हैं। चार हाथों में गदा-शक्ति का एवं राजदंड-व्यवस्था का प्रतीक है। माला-नियमितता एवं आशीर्वाद मुद्रा-प्रजापालन की भावना का प्रतीक है। आसन-शासनपीठ-सर्वोच्च सत्ता की प्रतीक है। चित्र संख्या १९-अ, ब में भुवनेश्वरी एवं उसके यंत्र आदि देखे जा सकते हैं।

❑

## २०. भवानी ( दुर्गा )-

'नः' वर्णस्य भवानी च देवी रुद्रश्च देवता।
बीजं 'हुं' चैवमस्यर्षिः स वैशम्पायनस्तथा॥
यन्त्रं दुर्गा ध्रुवामोघे भूती द्वे फलमस्य च।
अजेयताऽथ संकल्पसिद्धिः प्रोक्तानि च क्रमात् ॥

अर्थात्- 'नः' अक्षर की देवी -'भवानी' ,देवता-'रुद्र',बीज-'हुं' ,ऋषि-'वैशम्पायन',यन्त्र-'दुर्गायन्त्रम्, 'विभूति-'ध्रुवा एवं अमोघा' और प्रतिफल-'संकल्पसिद्धि एवं अजेयता' है।

गायत्री का एक नाम भवानी है। इस रूप में आद्य शक्ति की उपासना करने से उस भर्ग-तेज की अभिवृद्धि होती है, जो अवांछनीयताओं से लड़ने और परास्त करने के लिए आवश्यक है, इसे एक शक्ति-धारा भी कह सकते हैं। भवानी के पर्याय वाचक दुर्गा, चण्डी,भैरवी, काली आदि नाम हैं। इनकी मुख मुद्रा एवं भाव चेष्टा में विकरालता है। संघर्ष में उनकी गति-विधियाँ नियोजित हैं। उनका वाहन सिंह है। सिंह पराक्रम का-आक्रमण का प्रतीक है। हाथों में ऐसे आयुध हैं जो शत्रु को विदीर्ण करने के ही काम आते हैं। लोक व्यवहार में भवानी तलवार को भी कहते हैं। उसका प्रयोजन भी अवांछनीयता का प्रतिरोध करना है। असुरों के शस्त्र उत्पीड़न के लिए प्रयुक्त होते हैं। उनके लिए भवानी शब्द का प्रयोग तभी होगा जब उनका उपयोग अनीति के विरोध और नीति के समर्थन में किया जा रहा हो।

धर्म का एक पक्ष सेवा, साधना, करुणा,सहायता, उदारता के रूप में प्रयुक्त होता है। यह विधायक-सृजनात्मक पक्ष है। दूसरा पक्ष अनीति का प्रतिरोध है, इसके बिना धर्म न तो पूर्ण होता है, न सुरक्षित रहता है। सज्जनता की रक्षा के लिए दुष्टता का प्रतिरोध भी अभीष्ट है। इस प्रतिरोधक शक्ति को ही भवानी कहते हैं। दुर्गा एवं चण्डी के रूप में उसी की लीलाओं का वर्णन किया जाता है। 'देवी भागवत' में विशिष्ट रूप से और अन्यान्य पुराणों, उपपुराणों में सामान्य रूप से इसी महाशक्ति की चर्चा हुई है और उसे असुर विदारिणी, संकट निवारिणी के रूप में चित्रित किया गया है। अवतारों के दो उद्देश्य हैं- एक धर्म की स्थापना, दूसरा अधर्म का विनाश। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।

सृजन और ध्वंस की द्विविध प्रक्रियाओं का अवलम्बन लेने से ही सुव्यवस्था बन पाती है। भोजन जितना आवश्यक है, उतना ही मलविसर्जन भी। उत्पादन एवं संवर्धन के लिए किए जाने वाले प्रयत्नों के साथ आक्रमणकारी तत्त्वों से बचाव का भी प्रबन्ध करना पड़ता है। राजसत्ता को प्रजापालन के अतिरिक्त उपद्रवों को रोकने के लिए सेना, पुलिस आदि के सुरक्षात्मक प्रयत्न भी करने पड़ते हैं। किसान को खेत और माली को बगीचे को उगाने, बढ़ाने के साथ-साथ रखाने का भी प्रबन्ध करना होता है। अन्यथा उनका किया हुआ सारा परिश्रम अवांछनीय तत्त्वों के हाथ में चला जायगा और वे उस अपहरण से अधिक प्रोत्साहित, परिपुष्ट होकर हानि पहुँचाने का दुस्साहस करेंगे। अस्तु, सज्जनता का परिपोषण जितना आवश्यक है, उतना ही दुष्टता का उन्मूलन भी अभीष्ट है। इनमें से किसी एक को लेकर चलने से सुव्यवस्था रह नहीं सकती।

संघर्ष का प्रथम चरण अपनी दुर्बुद्धि से जूझना है। निकृष्ट स्तर की दुर्भावनाएँ और कुविचारणाएँ अन्तराल में जड़ें जमा कर व्यक्ति को पतन, पराभव के गर्त में धकेलती हैं। बुरी आदतों के वशीभूत होकर मनुष्य दुर्व्यसनों और दुष्कर्मों में प्रवृत्त होता है। फलतः नाना प्रकार के क्लेश सहता और कष्ट उठाता है। व्यक्तित्व में घुसे हुए कषाय-कल्मषों, कुसंस्कारों का उन्मूलन करने के लिए विभिन्न प्रकार की तप-तितिक्षाएँ अपनानी पड़ती हैं।

लोक व्यवहार में यही दुष्प्रवृत्तियाँ आलस्य,प्रमाद,अस्वच्छता, अशिष्टता, अव्यवस्था, संकीर्ण स्वार्थपरता आदि रूपों में मनुष्य को उपेक्षित, तिरस्कृत बनाती हैं। इनकी मात्रा अधिक बढ़ जाने से व्यक्ति भ्रष्ट , दुष्ट आचरण करता है और पशु-पिशाच कहलाता हैं। वासना, तृष्णा और अहन्ता की बढ़ोत्तरी से भी मनुष्य असामाजिक , अवांछनीय , उच्छृंखल एवं आक्रामक बन जाता है। फलतः उसे घृणा एवं प्रताड़ना का दण्ड सहना पड़ता है। उस स्थिति से उबरने पर ही व्यक्ति को सुसंस्कृत एवं सुविकसित होने का अवसर मिलता है। आत्म शोधन की साहसिकता भी भवानी है। आत्मविजय को सबसे बड़ी विजय कहा गया है।

समाज में जहाँ सहकारिता, सज्जनता एवं रचनात्मक प्रयत्नों का क्रम चलता है, वहाँ दुष्टता, दुरभिसन्धियाँ भी कम नहीं हैं। अवांछनीयता, अनौतिकता, मूढ़ मान्यताओं का जाल बुरी तरह बिछा रहता है। उन्हीं के कारण अनेकानेक

वैयक्तिक एवं सामाजिक समस्याएँ उठती एवं विकृतियाँ बढ़ती रहती हैं। इनसे लड़ने के लिए वैयक्तिक एवं सामूहिक स्तर पर प्रचण्ड प्रयास होने ही चाहिए। इसी प्रयत्नशीलता को चण्डी कहते हैं। भवानी यही है। सृजन और संघर्ष के अन्योन्याश्रय तत्त्वों में से संघर्ष की आवश्यकता को सुझाने वाला और उसे अपनाने का प्रोत्साहन देने वाला स्वरूप भवानी है। सद्बुद्धि की अधिष्ठात्री गायत्री का एक पक्ष संघर्षशील, शौर्य, साहस के लिए भी मार्गदर्शन करता है। इस शक्ति का गायत्री साधना से सहज संवर्धन होता है।

भवानी के स्वरूप,आयुध एवं वाहन आदि का-संक्षिप्त तात्त्विक विवेचन इस प्रकार है-

भवानी के एक मुख, आठ हाथ हैं। शंख से-देव पक्ष की सहायता का उद्घोष, गदा से शक्ति, पद्म से निर्विकारिता, बंधी मुट्ठी से संगठन, चक्र से गतिशीलता, तलवार से दोषनाश, पाश से आसुरी शक्ति को बाँधकर बाधित करने तथा आशीर्वाद मुद्रा से सज्जनों को आश्वस्त करने का भाव सन्निहित है। वाहन-सिंह-शौर्य का प्रतीक है। भवानी व उसके यंत्र आदि चित्र संख्या २०-अ, ब में देखे जा सकते हैं।

❑

## २१. अन्नपूर्णा-

'प्र' वर्णस्य देवी तु साऽन्नपूर्णास्ति देवता।
पूषा बीजमहो 'अं' च पिप्पलादश्च स ऋषिः॥
अन्नपूर्णेश्वरी यन्त्रं तृप्ता पूर्णोदरी तथा।
सन्ति भूती फलं तृप्तिरभावान्मुक्तिरेव च॥

अर्थात्- 'प्र' अक्षर की देवी-'अन्नपूर्णा,' देवता-'पूषा,' बीज-'अं' ऋषि-पिप्पलाद, यन्त्र-'अन्नपूर्णेश्वरीयन्त्रम्',विभूति-'तृप्ता' एवं 'पुर्णोदरी' तथा प्रतिफल-'तृप्ति व अभावमुक्ति' है।

जीवन की प्रत्यक्ष आवश्यकताओं में प्रथम नाम 'अन्न ' का आता है। भोजन के काम आने वाले धान्यों तथा अन्य पदार्थों को भी अन्न ही कहा जाता है। गायत्री की एक शक्ति अन्नपूर्णा है। इसका प्रभाव अन्नादि की आवश्यकताओं की सहज पूर्ति होते रहने के रूप में होता है। प्रायः गृह-लक्ष्मियों को अन्नपूर्णा कहते हैं। वे अपनी दूरदर्शिता, सुव्यवस्था के द्वारा घर में ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं होने देती, जिससे अभाव ग्रस्तता का कष्ट-असंतोष एवं उपहास सहन करना पड़े। गृहलक्ष्मी जैसी सुसंस्कारी, समझदार को भी अन्नपूर्णा कहते हैं। यह जहाँ भी रहेगी , वहाँ दरिद्रता के दर्शन नहीं होते। परिस्थितियाँ संतोष-जनक बनी रहती हैं।

अन्नपूर्णा गायत्री की वह चेतना शक्ति है जिसका साधक पर अवतरण होने से उसे अभाव ग्रस्तता की व्यथा नहीं सहनी पड़ती। आवश्यकताओं की पूर्ति का असमंजस खिन्न-उद्विग्न नहीं करता। तृप्ति, तृष्टि,और शान्ति की मन:स्थिति साधन-सामग्री के बाहुल्य से नहीं मिल सकती। ईंधन मिलने से तो आग और भड़कती जाती है। शान्ति तो जल से होती है। जल है संतोष-जिसमें औसत नागरिक के स्तर का निर्वाह पर्याप्त माना जाता है और अहंता की तृप्ति के लिए वैभव का प्रदर्शन नहीं, महानता का आदर्श अपनाना आवश्यक समझा जाता है। इस स्तर की सद्‌बुद्धि का उदय होते ही लगता है कि जीवन सम्पदा अपने आप में परिपूर्ण है। उसमें विभूतियों के अजस्र भंडार भरे पड़े हैं। वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जिन साधनों की आवश्यकता है, वे प्रचुर परिमाण में सहज ही उपलब्ध हैं।

इस अनुभूति के फलस्वरूप मनुष्य सम्पदा कमाने और वैभव दिखाने की मूखर्ता से विरत होता है। अपनी क्षमताओं को आदर्शों के परिपालन में लगाता है। व्यक्तित्व को महान् बनाने की महत्वाकांक्षा जगाता है और अपने पौरुष को उन प्रयोजनों में निरत करता है जिनसे लोक मंगल के साधन सधते हैं। सृष्टा की विश्ववाटिका को अधिकाधिक सुन्दर,समुन्नत बनाने के लिये किया गया हर प्रयत्न बिना सफलता-असफलता की प्रतीक्षा किये हर घड़ी उच्च स्तरीय संतोष प्रदान करता रहता है। इसी आस्था को अन्नपूर्णा कहते हैं। गायत्री की यह अन्नपूर्णा धारा साधक को सहज संतोष के स्वर्गीय आनन्द का रसास्वादन निरन्तर कराती है।

गायत्री उपासना से साधकों की आर्थिक स्थिति संतोष जनक रहती है और धन-धान्य का घाटा नहीं पड़ता। उन्हें ऋणी नहीं रहना पड़ता। असंतोष की आग में जलते रहने-लिप्सा-लालसाओं से उद्विग्न रहने की विपत्ति भी उन्हें संत्रस्त नहीं करती। इसका कारण यह नहीं कि उनके कोठों पर आसमान से अनाज की वर्षा होती है, या खेतों में चौगुनी फसल उत्पन्न होती है, वरन् कारण यह है कि साधनों को उपार्जित करने के लिए वे योग्यता बढ़ाने और कठोर परिश्रम करने में दत्तचित्त रहते हैं। दरिद्र तो आलसी-प्रमादी रहते हैं। जिन्हें पुरुषार्थ परायणता में रुचि है, जो श्रम एवं मनोयोग के सृजनात्मक प्रयोजनों में नियोजित रहते हैं, उन्हें निर्वाह के आवश्यक साधन जुटाने में कमी-कभी नहीं पड़ती। यह अन्नपूर्णा प्रवृत्ति है जो गायत्री उपासकों के स्वभाव का अंग बनकर रहती है।

अन्नपूर्णा प्रवृत्ति का दूसरा पक्ष है-मितव्ययिता। उपलब्ध साधनों का इस प्रकार उपयोग करना जिससे शारीरिक, पारिवारिक एवं पारमार्थिक उद्देश्य संतुलित रूप से पूरे होते रहें। यह ऐसी सुसंस्कारिता है, जिसे अपनाये बिना कुबेर को भी दरिद्र बनकर ही रहना पड़ता है। व्यसन,फैशन, चटोरापन, विलासिता, उद्धत प्रदर्शन, शेखी खोरी , यारबाशी, आवारागर्दी जैसे दुर्गुणों में कोई व्यक्ति कितना ही धन अपव्यय कर सकता है। ऐसी दशा में आजीविका कितनी ही बढ़ी-चढ़ी क्यों न हो, वहाँ सदा तंगी ही बनी रहेगी और उस कमी को पूरा करने के लिए रिश्वत-बेईमानी की ललक भड़कती रहेगी। यह सब

करते रहने पर भी वह स्थिति नहीं आती , जिसमें संतोष अनुभव किया जा सके तथा आय-व्यय का संतुलन बन सके। सम्पन्नता इस अर्थ सन्तुलन को ही कहते हैं और वह धन के परिमाण पर नहीं, उस सत्प्रवृत्ति पर निर्भर है, जो उपार्जन की योग्यता बढ़ाने में तथा अथक श्रम करने के लिए प्रोत्साहित करती है। साथ ही एक-एक पाई के सदुपयोग की मितव्ययता का महत्त्व भी सिखाती है। ऐसे व्यक्ति सीमित आजीविका का भी ऐसा क्रमबद्ध उपयोग करते हैं जिससे उतने में ही ऐसी व्यवस्था बन जाती है, जिसे देखकर सुसम्पन्नों को भी ईर्ष्या होने लगे। इसी परिस्थिति का नाम अन्नपूर्णा है।

साधनों का उपार्जन एक पक्ष है-उपयोग दूसरा है। दोनों को मिलाकर चलने से ही सुसम्पन्नता बनती है। आमतौर से सम्पत्ति की बहुलता को ही सम्पन्नता माना जाता है। यह भारी भ्रम है। दुर्बुद्धि के रहते सम्पत्ति का उपयोग दुष्ट प्रयोजनों में ही होगा और उससे व्यक्ति, परिवार और समाज को प्रकारान्तर से अनेकानेक हानियाँ सहन करनी पड़ेगी। महत्व साधनों की मात्रा का नहीं, वरन् उस दूर-दर्शिता का है जो सत्प्रयोजनों में अभीष्ट साधन जुटा लेने में पूर्णतया सफल होती है और कुशल उपयोग के आधार पर सीमित साधनों से ही सामयिक आवश्यकताओं को सुसंतुलित रीति से पूरा कर लेती हैं। यह सद्बुद्धि जहाँ भी होगी वहाँ अन्नपूर्णा कही जाने वाली संतुष्ट मनःस्थिति एवं प्रसन्न परिस्थितियों का दर्शन सदा ही होता रहेगा।

अन्नपूर्णा के स्वरूप एवं आसन आदि का संक्षेप में तात्त्विक विवेचन इस प्रकार है-

अन्नपूर्णा के एक मुख,चार हाथ हैं। हाथों में अन्नपात्र और चम्मच-अन्नदान के प्रतीक हैं। दो हाथों में कमल, अन्न में सुसंस्कारिता-पौष्टिकता के प्रतीक हैं। आसन-देवपीठ-दिव्य अनुशासन की प्रतीक है। चित्र संख्या २१-अ, ब में अन्नपूर्णा एवं उसके यंत्र आदि देखे जा सकते हैं।

❑

## २२ महामाया-

**'चो' देवी तु महामाया महादेवोऽथ देवता।**
**बीजं 'हं' प्रोक्तमेतत्स ऋषिः कात्यायनस्तथा॥**
**योगिनी यन्त्रमेतच्च भूती मेधाऽथ पाशिनी।**
**विद्यन्ते तत्त्वदृष्टिश्च भ्रममुक्तिः फलं द्वयम्॥**

अर्थात्- 'चो' अक्षर की देवी-'महामाया',देवता-'महादेव', बीज-'हं', ऋषि-'कात्यायन', यन्त्र-'योगिनीयन्त्रम्', विभूति-'मेधा एवं पाशिनी' और प्रतिफल-'तत्त्वदृष्टि व भ्रममुक्ति' है।

माया कहते हैं भ्रान्ति को-महामाया कहते हैं निर्भ्रान्ति को। माया पदार्थ परक है और महामाया ज्ञान परक। मानवी सत्ता सीमित रहने से वह समग्र का दर्शन नहीं कर पाती और जितनी उसकी परिधि है उसी को सब कुछ मान लेती है। मेढक कुए को ही समग्र विश्व मानता है, उसकी सीमित परिस्थिति में यही संभव भी है। किन्तु यदि उसे कुँए से बाहर निकलने का, आकाश में उड़ाने का-ब्रह्माण्डीय आकाश में विचरण करने का अवसर मिले, तो पता चलेगा कि कुँए में सीमित विश्व की पूर्व मान्यता गलत थी, यों उस समय वही सत्य एवं तथ्य प्रतीत होती थी।

जीव माया-बन्धनों मे बँधा है अर्थात् संकीर्णता की परिधि में आबद्ध है। इच्छाएँ, विचारणाएँ, क्रियाएँ इसी भ्रम- जाल में फँसी होने के कारण अवांछनीय स्तर की रहती हैं और उस जंजाल में कस्तूरी के हिरन की तरह मृगमरीचिका में भटकने की तरह जीव सम्पदा का अपव्यय ही होता रहता है। माया से छूटने के प्रयत्नों में जिज्ञासु-मुमुक्ष संलग्न रहते हैं। जिस आत्म ज्ञान को जीवन को सफल बनाने वाली महान् उपलब्धि बताया जाता है, उसी का नाम महामाया है मायाबद्ध दुख पाते हैं और महामाया की शरण में पहुँचने वाले परम शान्ति का रसास्वादन करते हैं। उन्हें श्रेय पथ प्रत्यक्ष दीखता है। उभरे हुए आत्मबल के सहारे उस पर चल पड़ना भी सरल रहता है।

आत्मा को अपना अस्तित्व शरीर मात्र मान लेना पहले सिरे की भ्रान्ति है। इसी की खुमारी में मनुष्य वासना, तृष्णा, अहंता की बालक्रीड़ा में उलझा हुआ मानव-जन्म के सुयोग को पशु-प्रयोजनों में गँवा देता है। अन्ततः खाली हाथ बिदा होता है और पाप की गठरी सिर पर लाद ले जाना-चौरासी लाख

योनियों में परिभ्रमण के बाद मिले हुए सुअवसर को गँवा बैठने पर रुदन करना-जीवन भर पाप-ताप के दुसह दु:ख सहना,यह समस्त दुर्गति माया रूपी भ्रान्ति में जकड़े रहने का दुष्परिणाम है। इस महासंकट से महामाया ही छुड़ाती है।

गायत्री को महामाया कहा गया है। साधना से उसका अनुग्रह साधक की अन्तरात्मा में उतरता है और निर्भ्रान्त स्थिति तक पहुँचने का अवसर मिलता है। यही दिव्य दृष्टि है-ज्ञान चक्षु का उन्मीलन इसी को कहते हैं। जीवन रहस्यों का उद्घाटन इसी स्थिति में होता है। जकड़ने वाले जंजाल पके हुए पत्तों की तरह झड़ जाते हैं और आत्म जागरण के कारण सब कुछ नये सिरे से देखने-सोचने का अवसर मिलता है। रात्रि स्वप्नों के बाद प्रात:काल का जागरण जिस प्रकार सारी स्थिति ही बदल देता है, उसी प्रकार महामाया का अनुग्रह जागृति की भूमिका में प्रवेश करने का द्वार खोलता है और इच्छा, विचारणा तथा क्रिया का स्वरूप ऐसा बना देता है जिसमें देवोपम स्वर्गीय जीवन का आनन्द मिलता रहे और बन्धन मुक्ति की ब्रह्मानुभूति का रसास्वादन अनवरत रूप से उपलब्ध होता रहे। महामाया परब्रह्म की समीपता तक पहुँचा देने वाली सच्ची देवमाता कही गई है। देवत्व ही उसका अनुग्रह है। गायत्री उपासना एक स्तर पर महामाया के रूप में साधक को हर दृष्टि से कृतकृत्य बनाती देखी गई है।

महामाया के स्वरूप, आयुध, वाहन आदि का संक्षिप्त विवेचन इस तरह है--

महामाया के एक मुख, चार हाथों में इंगित, श्रीफल, पाश और दंड। इंगित देवानुशासन का संकेत, अनुशासन मानने पर श्रीफल-श्रेष्ठफल की प्राप्ति का तथा मर्यादा तोड़ने पर पाश से बंधने तथा दंड से दंड भोगने का बोध होता है। वाहन-हंस-हित-अहित निर्धारण के विवेक का प्रतीक है। महामाया एवं उसके यंत्र आदि की चित्र संख्या २२-अ, ब में दर्शन-झाँकी की जा सकती है।

❑

**२३. पयस्विनी--**

**'द' तु पयस्विनी देवी देवता वरुणस्तथा।**
**बीजं 'वं' धौम्यं एवर्षिर्यन्त्रं वरुणयन्त्रकम्॥**
**विभूती च स्वधार्द्रे द्वे विद्यन्तेऽपि फलं तथा।**
**स्नेहः सरसता चेयं द्वयं देवि यथाक्रमम्॥**

अर्थात्-- 'द' अक्षर की देवी-'पयस्विनी', देवता-'वरुण', बीज-'वं',ऋषि-'धौम्य',यन्त्र-'वरुणयन्त्रम्', विभूति-'स्वधा एवं आर्द्रा' और प्रतिफल -'स्नेह एवं सरसता' है।

पयस्विनी गौ माता को कहते हैं। स्वर्ग में निवास करने वाली कामधेनु को भी पयस्विनी कहा गया है। गायत्री साधना की सफलता के लिए साधक में ब्राह्मणत्व और गौ के सानिध्य में अत्यन्त घनिष्टता है। पंचामृत , पंचगव्य को अमृतोपम माना गया है। गोमय, गोमूत्र की उर्वरता और रोग निवारिणी शक्ति सर्व विदित है। भारतीय कृषिकर्म के लिए गौवंश के बिना काम ही नहीं चल सकता। पोषक आहार में गोरस अग्रणी है। गौ की संरचना में आदि से अन्त तक सात्विकता भरी पड़ी है। पयस्विनी का महत्त्व जब इस देश में समझा जाता था, तब यहाँ दूध की नदियाँ बहती थीं और मनुष्य शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से देवोपम जीवन यापन करते थे।

गायत्री साधक के अन्त:करण में कामधेनु का अवतरण होता है। उसकी कामनाएँ भावनाओं में बदल जाती है। फलतः साधक को संसार के सबसे बड़े कष्ट-असंतोष से सहज ही निवृत्ति मिल जाती है। कामनाएँ असीम हैं। एक के तृप्त होते-होते दूसरी उससे भी बड़े आकार में उठ खड़ी होती है। संसार भर के समस्त साधन-सम्पदा मिल कर भी किसी एक मनुष्य की कामनाएँ पूर्ण नहीं कर सकती। पूर्ण तो सद्भावनाएँ होती हैं, जो अभीष्ट परिणाम न मिलने पर भी अपनी इच्छा और चेष्टा में उत्कृष्टता भरी रहने के कारण आनन्द, उल्लास से उमगती रहती हैं। चिन्तन के इसी स्तर को कल्प-वृक्ष कहते हैं। प्रकारान्तर से यही कामधेनु है।

कामधेनु गायत्री माता द्वारा प्रेरित प्रदत्त वह प्रवृत्ति है जो अन्तरात्मा में उच्चस्तरीय अध्यात्म-आस्था के रूप मे प्रकट होती है। यह साधक को वैसा ही आनन्द देती है जैसा बच्चे को अपनी माता का पयपान करते समय मिलता है। इसी को आत्मानन्द, ब्रह्मानन्द, परमानन्द कहते हैं। पूर्णता की परम तृप्ति

पाना ही जीवन लक्ष्य है। गायत्री का उच्चस्तरीय अनुग्रह इसी रूप में उपलब्ध होता है। यही तृप्ति वरदान कामधेनु की उपलब्धि है। गायत्री साधक उस दैवी अनुकम्पा का रसास्वादन करते और साधना की सफलता का अनुभव करते हैं।

गायत्री वर्ग में पाँच 'ग' परक श्रेष्ठताओं का समावेश है। गायत्री, गंगा, गौ, गीता, गोविन्द। गंगा और गायत्री का जन्म दिन एक ही है। गौ सेवा के सम्मिश्रण से वह त्रिवेणी बन जाती है। गायत्री उपासना की सफलता में गौ सम्पर्क हर दृष्टि से सहायक होता है।

गायत्री को कामधेनु कहा गया है। कामधेनु और पयस्विनी पर्यायवाची हैं। कामधेनु की चर्चा करते हुए शास्त्रकारों ने उसे कल्पवृक्ष के समान मनोकामनाओं की पूर्ति करने की विशेषता से युक्त बताया है। कामनाएँ तो इतनी असीम हैं कि उनकी पूर्ति कर सकना भगवान तक के लिए संभव नहीं हो सकता। पर कामनाओं को परिष्कृत करके वह आनन्द प्राप्त किया जा सकता जिनकी कामनाओं की पूर्ति होने पर मिलने की कल्पना की जाती है।

देवता आप्तकाम होते हैं। आप्तकाम उसे कहते हैं, जिसकी समस्त कामनाएँ पूर्ण हो जायें। पूर्ण एवं तृप्त वे उच्चस्तरीय कामनाएँ ही हो सकती हैं, जिन्हें सद्भावना कहते हैं। उत्कृष्ट चिन्तन एवं आदर्श पालन में किसी को कभी कुछ कठिनाई नहीं हो सकती। सद्भावनाओं को हर हालत में चरितार्थ किया जा सकता है। आप्तकाम को ही तुष्टि, तृप्ति एवं शान्ति का आनन्द मिलता है। कल्पवृक्ष स्वर्ग में है- देवता आप्तकाम होते हैं। कल्पवृक्ष कामनाओं की पूर्ति करता है। यह समस्त प्रतिपादन एक ही तथ्य को प्रकट करता है कि देवत्व और आप्तकाम मन:स्थिति एक ही बात है। अतृप्ति की उद्विग्नता देवताओं के पास फटकने नहीं पाती। यह सब लिप्सा-लालसाओं की कामनाओं को सद्भावनाओं और शुभेच्छाओं में बदलने से ही संभव हो सकता है। कल्पवृक्ष और कामधेनु दोनों की विशेषता यही है कि वे कामनाओं की पूर्ति तत्काल कर देते हैं। गायत्री को कल्पवृक्ष भी कहते हैं, और कामधेनु भी, उसकी छाया में बैठने वाला, पयपान करने वाला आप्तकाम रहता है। कामनाओं के परिष्कृत और लालसाओं के समाप्त होने पर मनुष्य को असीम संतोष एवं अजस्त्र आनन्द की प्राप्ति होती है। कामधेनु की अनुकम्पा इसी रूप में होती है। कथा है

कि गुरु वशिष्ठ के पास कामधेनु की पुत्री नन्दिनी गाय थी। उसने राजा विश्वामित्र को उपहार भी दिया और कुकृत्य का दण्ड भी। नन्दिनी के इन्हीं चमत्कारों से प्रभावित होकर विश्वामित्र ने राज्य छोड़कर तप करने का निश्चय किया था। यह नन्दिनी अथवा कामधेनु गायत्री ही है।

कामधेनु का पयपान करने वाले देवता अजर-अमर रहते हैं। अजर अर्थात् जरा रहित-बुढ़ापे से दूर-चिरयौवन का आनन्द लेने वाले। शरीर क्रम में तो यह संभव नहीं। सृष्टिक्रम में हर शरीर को जन्म-मरण के चक्र में घूमना पड़ता है और समयनुसार वृद्धावस्था भी आती है। कामधेनु का पयपान करने से जिस स्वास्थ्य और सौन्दर्य की चर्चा की गई है, वह शरीरिक नहीं मानसिक और आत्मिक है। गायत्री उपासक कामधेनु का कृपापात्र मानसिक दृष्टि से सदा युवा ही बना रहता है। उसकी आशाएँ, उमंगें कभी धूमिल नहीं पड़ने पाती। आंखों में चमक,चेहरे पर तेज, होठों पर मुसकान कभी घटती नहीं है। यही चिर यौवन है। इसी को अजर स्थिति कहते हैं। कामधेनु का- गायत्री का यह देवोपम स्तर प्रत्यक्ष वरदान है। कामधेनु का पयपान करने वाले अमर हो जाते हैं। गायत्री उपासक भी अमर होते हैं। शरीर धारण करने पर तो हर किसी को समयानुसार मरना ही पड़ेगा, पर आत्मा की वस्तुस्थिति का ज्ञान हो जाने पर अमरता का ही अनुभव होता है। शरीर बदलते रहने पर भी मरण जैसी विभीषिका आत्मज्ञानी के सामने खड़ी नहीं होती। उसके सत्कर्म एंव आदर्श ऐसे अनुकरणीय होते हैं कि उनके कारण यश अमर ही बना रहता है। गायत्री को पयस्विनी इसी कारण कहा गया है और उसे धरती की कामधेनु कह कर पुकारा गया है।

पयस्विनी के स्वरूप, आसन आदि का संक्षेप में विवेचन इस प्रकार है--

पयस्विनी के एक मुख चार हाथों में-पय कलश, पयपान से दि॰ क्षमता पोषण के लिए, कमल से सुसंस्कारिता और कमण्डलु से विराग का, आशीर्वाद मुद्रा से भक्त वत्सलता का बोध होता है। आसन-कमल-निर्विकारिता का प्रतीक है। चित्र संख्या २३-अ, ब में पयस्विनी एवं उसके यंत्र देखे जा सकते हैं।

❑

## २४. त्रिपुरा-

'यात्' वर्णस्य देवी तु त्रिपुरा देवताऽथ च।
त्र्यम्बकः 'त्रीं' च बीजं तन्मार्कण्डेयश्च स ऋषिः ॥
त्रिधा यन्त्रं च विद्यन्ते त्रिशूलाऽथ त्रिधाऽपि च।
विभूती तापमुक्तिः सा त्रिगुणाधिकृतिः फलम् ॥

अर्थात्-'यात्' अक्षर की देवी -'त्रिपुरा', देवता- 'त्र्यम्बक', बीज- 'त्रीं', ऋषि- 'मार्कण्डेय', यन्त्र-'त्रिधायन्त्रम्',विभूति-'त्रिधा एवं त्रिशूला' तथा प्रतिफल-त्रिगुणाधिकार एवं त्रितापमुक्ति है।

दक्षिणमार्गी गायत्री साधना त्रिपदा कहलाती है और वाममार्गी को त्रिपुरा नाम से सम्बोधित किया जाता है। त्रिपदा का कार्यक्षेत्र-सत्यं-शिवम्-सुन्दरम्, स्वर्ग-मुक्ति और शान्ति है। सत्-चित्-आनन्द-ज्ञान, कर्म, भक्ति है। त्रिपुरा में उत्पादन-अभिवर्धन-परिवर्तन, धन-बल-कौशल, साहस-उत्साह-पराक्रम की प्रतिभा, प्रखरता भरी पड़ी है। आत्मिक प्रयोजनों के लिए त्रिपदा का और ौतिक प्रयोजनों के लिए त्रिपुरा का आश्रय लिया जाता है। योग और तन्त्र के दो थ इन्हीं दो प्रयोजनों के लिए हैं।

साधना ग्रन्थों में त्रिपुरा महाशक्ति को त्रिपुर सुन्दरी-त्रिपुर भैरवी नाम भी दिये गये हैं। इन रूपों में उसके कितने ही कथानक हैं। देवी भागवत एवं मार्कण्डेय पुराण में इसका वर्णन, विवेचन अधिक विस्तार पूर्वक हुआ है। उनके प्रभाव और प्रयोगों का वर्णन अन्य ग्रन्थों में भी मिलता है। त्रिपुर भैरवी का लीला प्रयोजन असुर विदारिणी-विपत्ति निवारिणी के रूप में हुआ है। वह विकराल एवं युद्धरत है। त्रिपुर सुन्दरी को सिद्धिदात्री, सौभाग्य दायिनी, सर्वाङ्ग-सुन्दर बनाया गया है। भैरवी अभय दान देती है और सुन्दरी का अनुग्रह भीतरी और बाहरी क्षेत्र को सुखद सौन्दर्य से भरा बनाता है।

महिषासुर, मधुकैटभ,शुम्भ-निशुम्भ, रक्तबीज, वृत्रासुर आदि दैत्यों को निरस्त करने की गाथाओं में त्रिपुरा के प्रचण्ड पराक्रम का उल्लेख है। अज्ञान-अभाव, आलस्य, प्रमाद, पतन, पराभव जैसे संकट ही वे असुर हैं, जिन्हें त्रिपुरा के साहस, पराक्रम, उत्साह का त्रिशूल विदीर्ण करके रख देता है। तंत्र-

सम्प्रदाय में इस त्रिविध संघ को दुर्गा-काली-कुण्डलिनी का नाम दिया गया है। इन्हीं को चण्डी, महाशक्ति, अम्बा आदि नामों से संबोधित किया गया है। कालरात्रि-महारात्रि-मोहरात्रि के रूप में होली, दिवाली एवं शिवरात्रि के अवसर पर विशिष्ट उपासना की जाती है। क्रियायोग, जपयोग, ध्यानयोग से त्रिपदा और प्राणयोग, हठयोग, तंत्रयोग से त्रिपुरा की साधना की जाती है। एक को योगाभ्यास की और दूसरी को तपश्चर्या की अधिष्ठात्री कहा जाता है।

त्रिपदा और त्रिपुरा को परा और अपरा कहा गया है। दोनों की सम्मिश्रित साधना से प्राण और काया के समन्वय से चलने वाले जीवन जैसी स्थिति बनती है। ब्रह्मवर्चस् साधना में दोनों को परस्पर पूरक माना गया है और उनको संयोग, सुयोग का-ओजस्, तेजस् का, ऋद्धि-सिद्धि का, ज्ञान एवं वैभव का समन्वित आधार कहा गया है। यह गायत्री महाशक्ति की ही दिव्य धाराएँ हैं, जिन्हें साधना द्वारा व्यक्तित्व के क्षेत्र में आमंत्रित-अवतरित किया जा सकता है।

त्रिपुरा के स्वरूप, आयुध एवं वाहन आदि का संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है-

त्रिपुरा के तीन मुख-तीन आयामी सृष्टि, त्रिगुण, त्रिकाल के प्रतीक हैं। चार हाथों में त्रिशूल से त्रिताप नाश का, फल से श्रेष्ठ परिणाम प्राप्ति का कमण्डलु से पात्रता का और आशीर्वाद मुद्रा से दिव्य अनुदान का बोध होता है। वाहन-हंस उज्ज्वलता का प्रतीक है। त्रिपुरा एवं उसके यंत्रादि की दर्शन झांकी चित्र संख्या २४-अ, ब में की जा सकती है।

❑

# गायत्री चक्रम्-द्वितीय

## गायत्री महाशक्ति का संक्षिप्त तात्विक विवेचन )

गायत्री महामंत्र के २४ अक्षरों में सन्निहित २४ शक्ति धाराओं देवी, देवता बीजमन्त्र, ऋषि, यन्त्र, विभूति, प्रतिफल आदि तत्वों गायत्री चक्रम्-द्वितीय में अगले पृष्ठ पर दर्शाया गया है-

# गायत्री चक्रम्-द्वितीय

## (गायत्री महाशक्ति का संक्षिप्त तात्विक विवेचन)

गायत्री महामंत्र के २४ अक्षरों में सन्निहित २४ शक्ति धाराओं देवी, देवता बीजमन्त्र, ऋषि, यन्त्र, विभूति, प्रतिफल आदि तत्वों गायत्री चक्रम्-द्वितीय में अगले पृष्ठ पर दर्शाया गया है-

# गायत्री चक्रम्-द्वितीय

## गायत्री महाशक्ति का संक्षिप्त तात्विक विवेचन )

गायत्री महामंत्र के २४ अक्षरों में सन्निहित २४ शक्ति धाराओं देवी, देवता बीजमन्त्र, ऋषि, यन्त्र, विभूति, प्रतिफल आदि तत्वों गायत्री चक्रम्-द्वितीय में अगले पृष्ठ पर दर्शाया गया है-

# गायत्री चक्रम्

| क्र. | अक्षर | देवी | देवता | बीजमन्त्र | ऋषि |
|---|---|---|---|---|---|
| १. | तत् | आद्यशक्ति | परब्रह्म | ॐ | विश्वामित्र |
| २. | स | ब्राह्मणी | ब्रह्मा | ह्रीं | वशिष्ठ |
| ३. | वि | वैष्णवी | विष्णु | णं | नारद |
| ४. | तुर् | शाम्भवी | शिव | शं | अत्रि |
| ५. | व | वेदमाता | आदित्य | ओं | वेदव्यास |
| ६. | रे | देवमाता | इन्द्र | लृं | भृगु |
| ७. | णि | विश्वमाता | विश्वकर्मा | स्त्रीं | अंगिरा |
| ८. | यं | ऋतंभरा | हिरण्यगर्भ | ॠं | भारद्वाज |
| ९. | भ | मन्दाकिनी | वसु | उं | गौतम |
| १०. | र्गो | अजपा | मरूत | यं | पतंजलि |
| ११. | दे | ऋद्धि | गणेश | गं | कणाद |
| १२. | व | सिद्धि | क्षेत्रपाल | क्षं | अगस्त्य |
| १३. | स्य | सावित्री | सविता | ज्रं | पुलस्त्य |
| १४. | धी | सरस्वती | प्रजापति | ऐं | कश्यप |
| १५. | म | महालक्ष्मी | कुबेर | श्रीं | आश्वलायन |
| १६. | हि | महाकाली | महाकाल | क्लीं | दुर्वासा |
| १७. | धि | कुण्डलिनी | भैरव | लं | कण्व |
| १८. | यो | प्राणाग्नि | जातवेदा | रं | याज्ञवल्क्य |
| १९. | यो | भुवनेश्वरी | पुरन्दर | खं | जमदग्नि |
| २०. | नः | भवानी | रूद्र | हुं | वैशम्पायन |
| २१. | प्र | अन्नपूर्णा | पूषा | अं | पिप्पलाद |
| २२. | चो | महामाया | महादेव | हं | कात्यायन |
| २३. | द | पयस्विनी | वरूण | वं | धौम्य |
| २४. | यात् | त्रिपुरा | त्र्यम्बक | त्रीं | मार्कण्डेय |

| यन्त्रम् | विभूति | प्रतिफल |
|---|---|---|
| गायत्री यन्त्रम् | प्रज्ञा एवं दीक्षा | आप्तकाम, सुसंस्कारिता |
| ब्राह्मी यन्त्रम् | श्रद्धा, युक्ता | सृजनशक्ति, सुसन्तति |
| वैष्णवी यन्त्रम | निष्ठा , क्षेमा | वर्चस्, दिव्य वैभव, |
| शाम्भवी यन्त्रम् | मुक्ता, शिवा | मुक्तिप्राप्ति,अनिष्टनिवारण |
| विद्या यन्त्रम् | स्मृति,विद्या | दिव्यस्फुरणा, सद्ज्ञान |
| देवेश यन्त्रम् | दिव्या, देवयानी | देवत्व, सच्चरित्रता |
| मातृ यन्त्रम् | विराटा,ध्येया | विराटानु., सहयोगसिद्धि |
| ऋत् यन्त्रम् | सत्या, सुमुखी | स्थिरप्रज्ञता, न्याय |
| निर्मला यन्त्रम् | निर्मला, विरजा | निर्मलता,पापनाश |
| निरंजना यन्त्रम् | निरंजना,सहजा | शान्ति, भयनाश |
| ऋद्धि यन्त्रम् | तुष्टा,भद्रा | तुष्टि, गुणवत्ता |
| सिद्धि यन्त्रम् | सूक्ष्मा, योगिनी | तन्मयता,कार्यकुशलता |
| सावित्री यन्त्रम् | कल्याणी, इष्टा | ब्रह्मविद्या, साफल्य |
| सरस्वती यन्त्रम् | हर्षा, प्रभवा | उल्लास, कलात्मकता |
| श्री यन्त्रम् | तारिणी, श्रीमुखी | सदिच्छा, सम्पन्नता |
| कालिका यन्त्रम् | भर्गा,वज्रिणी | कल्मषनाश, शत्रुनाश |
| भैरव यन्त्रम् | धृति, प्रतिभा | ओजस्विता, उन्नति |
| ऊर्जा यन्त्रम् | स्वाहा, अजरा | पुष्टि, आरोग्य |
| विभूति यन्त्रम् | गौरी, विश्वोत्तमा | सुयश, ऐश्वर्य |
| दुर्गा यन्त्रम् | ध्रुवा, अमोघा | संकल्प सिद्धि, अजेयता |
| अन्नपूर्णेश्वरी यन्त्रम् | तृप्ता, पूर्णोदरी | तृप्ति,अभावमुक्ति |
| योगिनी यन्त्रम् | मेधा, पाशिनी | तत्वदृष्टि, भ्रममुक्ति |
| वरुण यन्त्रम् | स्वधा, आर्द्रा | स्नेह, सरसता |
| त्रिधा यन्त्रम् | त्रिधा, त्रिशूला | त्रिगुणाधिकार, त्रितापमुक्ति |

गायत्री के उपरोक्त सभी देवी, देवता,बीजमंत्र, ऋषि, यंत्र, विभूति एवं प्रतिफल-उन मनुष्यों की बुद्धि के सर्वतोमुखी विकास के लिए कहे गये है, जो योगियों के समान अलौकिक बुद्धिसम्पन्न एवं ऋद्धि-सिद्धियों के स्वामी बनना चाहते हैं। यह तभी संभव है, जब श्रेष्ठ लक्ष्यों के निमित्त श्रेष्ठ भावना से अनुशासति साधना की जाए, निष्ठापूर्वक नियमित रूप से यज्ञ किया जाए, सदाचार से दिनचर्या नियन्त्रित की जाए, तो देवत्व भी प्राप्त हो जाता है और मुक्ति भी।

यह गायत्री महामंत्र के चौबीस अक्षरों में सन्निहित शक्तियों का तात्त्विक विवेचन है। तत्वदृष्टि सभी के पास नहीं होती, इसीलिए तत्त्वदर्शन को प्रतीक-प्रतिमाओं एवं यंत्रों के माध्यम से व्यक्त करने की शैली ऋषियों ने विकसित की थी। देवी-देवताओं के स्वरूप इसी आधार पर निर्मित-निर्धारित किये गये थे।

गायत्री के २४ शक्तिधाराओं के स्वरूप का निर्धारण-उद्देश्यपूर्वक किया गया है। उनके स्थूल दर्शन से-प्रतीकों एवं यंत्रों के माध्यम से-सूक्ष्म भावों का संचार संभव भी है और उपयोगी भी। अत: उपरोक्त तत्त्वदर्शन को समझकर साधक अपनी कमियों के निवारण तथा विशेषताओं के जागरण-विकास के लिए साधना कर सकते हैं। प्रतिमा विशेष अथवा यंत्र विशेष का स्मरण करते हुए जिन विभूतियों के विकास की आवश्यकता है, उनके लिए प्रार्थना भाव रखकर नियमित गायत्री महामंत्र का जप करने से प्रतिभा परिष्कार-प्रतिभा विकास के माध्यम से असाधारण लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं। गायत्री मंत्र में किसी प्रकार का परिवर्तन करने, बीज मंत्र आदि लगाने का स्वयं प्रयास न किया जाए। केवल भाव चेतना को दिशाबद्ध करने से ही पर्याप्त लाभ प्राप्त किए जाने संभव हैं।

❑

# चौबीस देव गायत्री

गायत्री परिकर सुविस्तृत हैं। उसके अन्तर्गत अवतार, देवता, देवियाँ, ऋषि आदि का समावेश है। अनेकों शक्तियों की गरिमा और साधनाओं की महिमा का वर्णन है। संक्षेप में इस छोटे से २४ अक्षर वाले ब्रह्म सूत्र में वह सब कुछ है जो मनुष्य को भौतिक प्रगति एवं आत्मिक समृद्धि के लिए आवश्यक है।

गायत्री में अपनी निजी २४ सामर्थ्य हैं, जिनके अन्तर्गत समृद्धियों और विभूतियों का सारा परिकर भली भाँति समा जाता है। प्रतिपादन कर्ताओं ने देवताओं के स्वतन्त्र अस्तित्व को भी मान्यता दी है और उनकी आराधना के विधि-विधान बनाये हैं। इस वर्ग के लिए भी गायत्री के माध्यम से अन्य देवताओं की उपासना की जा सकती है। जिनके उपास्य इष्ट अन्य देवता हैं, वे उनके निमित्त बनाई गई देव-गायत्री के माध्यम से अपने लक्ष्य तक अधिक सरलता पूर्वक पहुंच सकते हैं।

तन्त्र ग्रन्थों में २४ देव गायत्री भी बताई गई है। आवश्यकतानुसार अनुभवी मार्ग दर्शन में इनकी उपासना भी की जा सकती है। देवताओं का विवरण एवं प्रतिफल शास्त्रों में इस प्रकार लिखा मिलता है।

गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों में से प्रत्येक के देवता क्रमशः (१)गणेश (२) नृसिंह (३) विष्णु (४) शिव (५) कृष्ण (६) राधा (७) लक्ष्मी (८) अग्नि (९) इन्द्र (१०) सरस्वती (११) दुर्गा (१२) हनुमान (१३) पृथ्वी (१४) सूर्य (१५) राम (१६) सीता (१७) चन्द्रमा (१८) यम (१९) ब्रह्म (२०) वरुण (२१) नारायण (२२) हयग्रीव (२३) हंस (२४) तुलसी हैं।

उन शक्तियों के द्वारा क्या-क्या लाभ मिल सकते हैं, इसका विवरण नीचे दिया गया है-

**१. गणेश**-सफलता शक्ति। फल-कठिन कामों में सफलता, विघ्नों का नाश, बुद्धि-वृद्धि।

**२. नृसिंह**-पराक्रम शक्ति। फल-पुरुषार्थ, पराक्रम, वीरता, शत्रु नाश, आतंक, आक्रमण से रक्षा।

३. **विष्णु**-पालन-शक्ति। फल-प्राणियों का पालन, आश्रितों की रक्षा, योग्यताओं की वृद्धि, रक्षा।

४. **शिव**-कल्याण शक्ति। फल-अनिष्ट का विनाश, कल्याण की वृद्धि, निश्चयता, आत्मपरायणता।

५. **कृष्ण**-योग-शक्ति। फल-क्रियाशीलता, आत्म-निष्ठा, अनासक्ति, कर्मयोग, सौन्दर्य, सरसता।

६. **राधा**-प्रेम शक्ति। फल-प्रेम दृष्टि, द्वेष-भाव की समाप्ति।

७. लक्ष्मी-धन-शक्ति। फल-धन, पद, यश और भोग्य पदार्थों की प्राप्ति।

८. **अग्नि**-तेज-शक्ति। फल-उष्णता, प्रकाश, शक्ति और सामर्थ्य की वृद्धि, प्रभावशाली, प्रतिभाशाली,तेजस्वी होना।

९. **इन्द्र**-रक्षा-शक्ति। फल-रोग, हिंसक, चोर, शत्रु, भूत-प्रेत,अनिष्ट आदि के आक्रमणों से रक्षा।

१०. **सरस्वती**-बुद्धि-शक्ति। फल-मेधा की वृद्धि, बुद्धि की पवित्रता, चतुरता, दूरदर्शिता, विवेकशीलता।

११. दुर्गा-दमन-शक्ति। फल-विघ्नों पर विजय, दुष्टों का दमन, शत्रुओं का संहार, दर्प की प्रचंडता

१२. **हनुमान**-निष्ठा-शक्ति। फल-कर्तव्यपरायणता, निष्ठावान, विश्वासी, ब्रह्मचारी एवं निर्भय होना।

१३. **पृथ्वी**-धारण-शक्ति। फल-गम्भीरता, क्षमाशीलता, सहिष्णुता, दृढ़ता, धैर्य, भार-वहन करने की क्षमता।

१४. **सूर्य**-प्राण-शक्ति। फल-निरोगिता, दीर्घजीवन, विकास, वृद्धि, उष्णता, विकारों का शोधन।

१५. **राम**-मर्यादा-शक्ति। फल-तितिक्षा, कष्ट में विचलित न होना, धर्म, मर्यादा, सौम्यता, संयम, मैत्री।

१६. **सीता**-तप-शक्ति। फल-निर्विकार, पवित्रता, मधुरता, सात्विकता, शील, नम्रता।

१७. **चन्द्र**-शान्ति-शक्ति। फल-उद्विग्नताओं की शान्ति, शोक, क्रोध, चिन्ता, प्रतिहिंसा आदि विक्षोभों का शमन, काम, लोभ, मोह एवं तृष्णा का निवारण, निराशा के स्थान पर आशा का सञ्चार।

१८. **यम**-काल-शक्ति। फल-समय का सदुपयोग, मृत्यु से निर्भयता, निरालस्यता, स्फूर्ति, जागरूकता।

१९. **ब्रह्मा**-उत्पादक-शक्ति। फल-उत्पादन, शक्ति की वृद्धि। वस्तुओं का उत्पादन बढ़ना, सन्तान बढ़ना, पशु,कृषि, वृक्ष, वनस्पति आदि में उत्पादन की मात्रा बढ़ना।

२०. **वरुण**-रस-शक्ति। फल-भावुकता, सरलता, कलाप्रियता, कवित्व, आर्द्रता, दया, दूसरों के लिए द्रवित होना, कोमलता, प्रसन्नता, माधुर्य।

२१. **नारायण**-आदर्श-शक्ति। फल-महत्वाकांक्षा, श्रेष्ठता, उच्च आकांक्षा, दिव्य गुण, दिव्य स्वभाव, उज्ज्वल चरित्र, पथ-प्रदर्शन, कार्य शैली।

२२. **हयग्रीव**-साहस-शक्ति। फल-उत्साह, साहस, वीरता, शूरता, निर्भयता, कठिनाइयों से लड़ने की अभिलाषा, पुरुषार्थ।

२३. **हंस**-विवेक-शक्ति। फल-उज्ज्वल कीर्ति, आत्म-संतोष, सत्-असत् निर्णय, दूरदर्शिता, सत्-संगति, उत्तम आहार-विहार।

२४. **तुलसी**-सेवा-शक्ति। फल-लोक-सेवा में प्रवृत्ति, सत्य प्रधानता, पतिव्रत, पत्निव्रत आत्म-शान्ति, पर दुःख निवारण।

जिसे अपने में जिस शक्ति की, ज़िस गुण, कर्म, स्वभाव की कमी या विकृति दिखाई पड़ती हो, उसे उस शक्ति वाले देवता की उपासना विशेष रूप से करनी चाहिए। जिस देवता की जो गायत्री है, उसका दशांश जप गायत्री साधना के साथ-साथ करना चाहिए। जैसे कोई व्यक्ति सन्तानहीन है, सन्तान की कामना करनी चाहिए। यदि देव- गायत्री की दश मालाएं नित्य जपी जाय तो एक माला ब्रह्म गायत्री की भी जपनी चाहिए। केवल मात्र ब्रह्म गायत्री की भी जपने से काम न चलेगा, क्योंकि ब्रह्म-गायत्री की स्वतन्त्र सत्ता उतनी बलवती नहीं है। देव-गायत्रियाँ, उस महान् वेदात्मा गायत्री की छोटी शाखायें तभी तक हरी-भरी रहती हैं, जब तक वे मूल वृक्ष के साथ जुड़ी हुई हैं। वृक्ष से अलग कट जाने पर शाखा निष्प्राण हो जाती है, उसी प्रकार अकेली देव-गायत्री भी निष्प्राण होती है, उनका जप महागायत्री के साथ ही करना चाहिए।

# चौबीस देव गायत्री के मंत्र

नीचे चौबीसों देवताओं की गायत्रियाँ दी जाती है, इनके जप से उन-देवताओंके साथ विषेष रूप से सम्बन्ध रखने वाले गुण, पदार्थ एवं अवसर साधक प्राप्त कर सकते हैं।

१. **गणेश गायत्री**-ॐ एक दंताय विद्महे, वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्तिः प्रचोदयात्।

२. **नृसिंह गायत्री**- ॐ उग्र नृसिंहाय विद्महे, वज्र नंखाय धीमहि। तन्नो नृसिंह प्रचोदयात्।

३.**विष्णु गायत्री**- ॐ नारायणाय विद्महे, वासुदेवाय धीमहि। तन्नों विष्णुः प्रचोदयात्।

४.**शिव गायत्री**- ॐ तत्पुरुषाय विद्महे, महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।

५.**कृष्ण गायत्री**- ॐ देवकी नन्दनाय विद्महे, वासुदेवाय धीमहि। तन्नः कृष्ण प्रचोदयात्।

६.**राधा गायत्री**- ॐ वृषभानुजायै विद्महे, कृष्ण प्रियायै धीमहि। तन्नो राधा प्रचोदयात्।

७.**लक्ष्मी गायत्री**- ॐ महालक्ष्म्यै च विद्महे, विष्णु प्रियायै धीमहि। तन्नो लक्ष्मी: प्रचोदयात्।

८.**अग्नि गायत्री**- ॐ महाज्वालाय विद्महे, अग्निमग्नाय धीमहि। तन्नो अग्निः प्रचोदयात्।

९.**इन्द्र गायत्री**- ॐ सहस्त्रनेत्राय विद्महे, वज्र हस्ताय धीमहि। तन्नो इन्द्रः प्रचोदयात्।

१०.**सरस्वती गायत्री**- ॐ सरस्वत्यै विद्महे, ब्रह्मपुत्र्यै धीमहि। तन्नो देवी प्रचोदयात्।

११.**दुर्गा गायत्री**- ॐ गिरिजायै विद्महे, शिव प्रियायै च धीमहि। तन्नो दुर्गा प्रचोदयात्।

१२.**हनुमान गायत्री**- ॐ अञ्जनी सुताय विद्महे, वायु पुत्राय धीमहि। तन्नो वीरः प्रचोदयात्।

१३.**पृथ्वी गायत्री**- ॐ पृथ्वी देव्यै च विद्महे, धरामूर्तये धीमहि। तन्नः पृथ्वी प्रचोदयात्।

१४.**सूर्य गायत्री**- ॐ भास्कराय विद्महे, दिवाकराय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्।

१५.**राम गायत्री**-ॐ दाशरथाय विद्महे, सीता वल्लभाय धीमहि। तन्नो रामः प्रचोदयात्।

१६. **सीता गायत्री**- ॐ जनकनन्दिन्यै विद्महे, भूमिजायै धीमहि। तन्नो सीता प्रचोदयात्।

१७. **चन्द्र गायत्री**- ॐ क्षीर पुत्राय विद्महे, अमृततत्त्वाय धीमहि। तन्नः चन्द्रः प्रचोदयात्।

१८. **यम गायत्री**- ॐ सूर्य पुत्राय विद्महे, महाकालाय धीमहि। तन्नो यमः प्रचोदयात्।

१९. **ब्रह्मा गायत्री**- ॐ चतुर्मुखाय विद्महे, हंसारूढ़ाय धीमहि। तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात्।

२०. **वरुण गायत्री**- ॐ जलबिम्बाय विद्महे, नील पुरुषाय धीमहि। तन्नोऽम्बु प्रचोदयात्।

२१. **नारायण गायत्री**- ॐ नारायणाय विद्महे, शेषशायिने धीमहि। तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्।

२२. **हयग्रीव गायत्री**- ॐ वागीश्वराय विद्महे, हयग्रीवाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात्।

२३. **हंसगायत्री**- ॐ परमहंसाय विद्महे, महातत्त्वाय धीमहि। तन्नो हंसः प्रचोदयात्।

२४. **तुलसी गायत्री**- ॐ तुलसी पत्राय विद्महे, विष्णु प्रियायै धीमहि। तन्नो वृन्दाः प्रचोदयात्।

उपर्युक्त चौबीस देव गायत्री के अतिरिक्त शताक्षरी गायत्री महामंत्र भी है, जिसका जप प्रायः पुरश्चरण आदि उच्चस्तरीय साधनाओं में करने का विधान है। मंत्र इस प्रकार है-

**शताक्षरगायत्रीमन्त्रः-**

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐजातवेदसेसुनवामसोममरातीयतोनिदहातिवेदः। सनः पर्षदतिदुर्गाणिविश्वानावेवसिन्धुदुरितात्यग्निः। ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात्॥

❑

# शक्तिधाराओं की साधना का निर्धारण

गायत्री महामंत्र एक है, किन्तु परमाणु की तरह उसके अन्तःक्षेत्र में भी अनेक घटक हैं। इन घटकों में से प्रत्येक अपनी विशिष्ट क्षमता रखते हुए भी मूलतः एक ही शक्ति केन्द्र के साथ जुड़ा है और उसी से अपना पोषण प्राप्त करता है। हृदय एक है, नाड़ियाँ अनेक। हर नाड़ी का अपना स्वरूप, कार्यक्षेत्र और उत्तरदायित्व है। इतने पर भी वे सभी एक ही केन्द्र पर केन्द्रीभूत हैं। गायत्री को हृदय और उसकी चौबीस शक्तियों को २४ शक्तिधारायें कहा जा सकता है। गायत्री हिमालय है, उससे निकलने वाली सरिताओं के समतुल्य गायत्री की भी विशिष्ट शक्तियाँ हैं। संसार की सृष्टि संचालन शक्ति एक ही है- हीट, लाइट, मोशन, ग्रैविटेशन, मैग्नेटिज्म आदि। इलैक्ट्रिसिटी, कास्मिक रे आदि प्रकृति की अनेकों शक्तिधारायें अपने-अपने क्षेत्र में काम करती हैं। जीवनी शक्ति में भी विचारणा, भावना, आस्था, आदत जैसी कितनी ही धारायें हैं। इतने पर भी वे सब एक ही स्त्रोत से अपना पोषण प्राप्त करती हैं। आद्य शक्ति गायत्री को भी विश्व चेतना के अन्तर्गत गतिशील अनेकानेक प्रवाहों का उद्गम केन्द्र-प्रेरणा स्रोत मानना चाहिये। समस्त देवी-देवता उसी की छाया में अपने-अपने उत्तरदायित्वों को निभाते, कार्यक्षेत्रों को संभालते हैं।

समग्र गायत्री उपासना के तीन स्वरूप हैं। (१) नित्यकर्म में दैनिक साधना (२) विशिष्ट उपचार-अनुष्ठान, पुरश्चरण (३) उच्चस्तरीय तप साधना- पंचकोशों का अनावरण, कुण्डलिनी जागरण। इनके लिये दाक्षिण मार्गी और वाम मार्गी-योग और तंत्र के दो साधना विधान काम में लाये जाते हैं।

विशेष प्रयोजनों के लिए गायत्री की २४ शक्ति धाराओं में से आवश्यकतानुसार उनकी विशिष्ट साधनायें भी की जाती हैं। इसके लिये निर्धारित विधि-विधानों में पृथकता है। उनके अलग-अलग बीज मंत्र हैं। जो गायत्री मंत्र में व्याहृतियों के उपरान्त और तत्सवितुर्वरेण्यं के पहले नियोजित किये जाते हैं। दक्षिण मार्ग में प्रतिमायें प्रयुक्त होती हैं, जिनकी आकृतियाँ, वाहन तथा आयुध पृथक् प्रकार के हैं। तन्त्र में प्रतिमाओं के स्थान पर यन्त्र काम में लाये जाते हैं। इन्हें रेखा चित्र कह सकते हैं। ये इनके केन्द्र स्थल हैं। जिस प्रकार त्रिपदा गायत्री के ब्राह्मी, वैष्णवी, शाम्भवी तीन रूप हैं और उनके साधना काल

तथा पूजा विधान पृथक् हैं, उसी प्रकार चतुर्विंशाक्षरी गायत्री के प्रत्येक अक्षर की पूजा पद्धति भी अलग-अलग है।

इन विधानों की एक जैसी प्रक्रिया हर किसी के लिये प्रयुक्त नहीं होती। इस निर्धारण के लिये साधक के स्वभाव, संस्कार एवं अभाव को ध्यान में रख कर उपचार विधान के अन्दर काम करना पड़ता है। एक ही शक्ति धारा के विभिन्न व्यक्तियों के लिये उनकी स्थिति एवं आवश्यकता के अनुरूप पृथक्-पृथक् विधानों का निर्धारण किया जाता है। असंख्य प्रकृति के व्यक्तियों के लिये उनकी सामयिक स्थिति एवं आवश्यकता के अनुरूप निर्धारण करना इस विधा के विशेषज्ञों का काम है। सामान्य साधना सबके लिये समान है, पर २४ विशिष्ट प्रवाहों का उपयोग करने के लिये अनुभवी पारंगतों का परामर्श एवं सहयोग आवश्यक है। साधना प्रयोजनों में गुरु को-अनुभवी मार्ग दर्शक को वरण करना इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुये आवश्यक माना गया है। पुस्तकों की सहायता से इस प्रकार के गम्भीर निर्णय स्वेच्छानुसार स्वयं ही कर लेना कई बार अहितकर भी सिद्ध हो सकता है।

व्यक्तियों के स्तरों-उनकी आवश्यकताओं से तालमेल बिठाने वाले उपासना विधानों का निर्धारण बहुत विस्तृत हो सकता है। बारीकियों की चर्चा करते हुए इस प्रकार का साधना शास्त्र अत्यधिक बढ़े-चढ़े कलेवर का हो सकता है। इतना सब कुछ लिख सकना आज की परिस्थितियों में सम्भव नहीं। चिकित्सा शास्त्र और औषधि निर्माण की व्यवस्था होते हुए भी रोगी की स्थिति के अनुरूप निर्धारण और उतार चढ़ावों के अनुरूप बार-बार परिवर्तन की आवश्यकता बनी ही रहती है। ठीक इसी प्रकार गायत्री की २४ शक्तिधाराओं में से कब, किसे, क्यों, किस प्रकार, क्या साधना विधान अपनाना चाहिये, इसका निर्धारण करने के लिये अनुभवी मार्गदर्शक की सहायता प्राप्त करने से ही काम चलता है।

इस प्रकार की सहायता एवं मार्गदर्शन ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, शान्तिकुंज हरिद्वार में उपलब्ध है। जबाबी पत्र भेजकर अथवा पहुँचकर आवश्यकतानुसार परामर्श प्राप्त किया जा सकता है।

❑

## दिव्य चेतना का उद्‌गम केन्द्र

# शान्तिकुञ्ज

शान्तिकुञ्ज सप्त सरोवर क्षेत्र में हरिद्वार-ऋषिकेश मार्ग पर सड़क के किनारे स्टेशन से छ: किलोमीटर दूरी पर स्थित एक विशाल दर्शनीय गायत्री तीर्थ है।

हिमालय की छाया एवं गंगा की गोद में विनिर्मित यह आश्रम युग ऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य एवं माता भगवती देवी शर्मा की प्रचण्ड तप साधना के संस्कारों से अनुप्राणित है।

भारतीय संस्कृति के तत्वदर्शन, गायत्री एवं यज्ञ के तत्वज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने वाला यह जाग्रत् तीर्थ लाखों-करोड़ों गायत्री साधकों का गुरुद्वारा है।

यहाँ पर गायत्री माता का एक भव्य मंदिर तथा सप्त ऋषियों की प्रतिमाओं की स्थापना है। गायत्री साधक यहाँ आते व यहाँ के पूजा-उपचार क्रम में भाग लेकर अपनी मनोकामना पूरी करके जाते हैं।

सन् १९२६ से सतत् जल रहा अखण्ड दीप यहाँ स्थापित हैं, जिसके सान्निध्य में २४०० करोड़ से अधिक गायत्री जप सम्पन्न हो चुके हैं। परम पूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य द्वारा जलाया गया यह दीपक इस विशाल गायत्री परिवार की सारी महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों का मूल स्रोत है। इसका दर्शन मात्र व्यक्ति को बंधनों से मुक्त कर देता है।

आश्रम की नौ कुण्डीय यज्ञशाला में नित्य नियमित हजारों साधक गायत्री यज्ञ सम्पन्न करते हैं। सभी प्रकार के संस्कार जो भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत आते हैं, यथा अन्नप्राशन, विद्यारंभ, उपनयन, विवाह, वानप्रस्थ तथा श्राद्धकर्म यहाँ नि:शुल्क संपन्न किए जाते हैं।

शान्तिकुञ्ज एक आध्यात्मिक सैनीटोरियम के रूप में विकसित किया गया है, जहाँ शरीर, मन व अन्त:करण को स्वस्थ-समुन्नत बनाने का व्यावहारिक मार्गदर्शन दिया जाता है।

अध्यात्म के गूढ़ विवेचनों की सरल व्याख्या कर उन्हें जीवन में कैसे उतारा जाय, इसका सतत् शिक्षण यहाँ के नौ दिवसीय संजीवनी साधना सत्रों में चलता है, जो यहाँ वर्ष भर संपादित होते रहते हैं। साधक यहाँ आते व संकल्पित अनुष्ठान पूरा कर अपना आध्यात्मिक कायाकल्प करके जाते हैं।

शान्तिकुञ्ज के दिव्य जड़ी-बूटी उद्यान में ३०० से भी अधिक प्रकार की दुर्लभ-सर्वोपयोगी वनौषधियाँ लगाई गई हैं। यहाँ प्रयोगशाला में समय-समय पर इन जड़ी-बूटियों की जाँच-पड़ताल होती रहती है व साधना सत्र में भाग ले रहे साधकों को निर्धारणानुसार कल्प सेवन कराया जाता है।

शान्तिकुञ्ज द्वारा आयुर्वेद का पुनर्जीवन कर पचास से अधिक वनौषधियों के चूर्णों व क्वाथ को जन-जन तक लागत मूल्य पर पहुँचाया गया है। सभी आगन्तुकों की शारीरिक, मानसिक जाँच-पड़ताल निष्णात चिकित्सकों द्वारा यहाँ निःशुल्क की जाती है व आहार साधना तथा वनौषधि संबंधी परामर्श दिया जाता है।

गायत्री महाविद्या की शब्द शक्ति एवं यज्ञ ऊर्जा पर वैज्ञानिक अनुसंधान हेतु एक आधुनिकतम ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की यहाँ स्थापना की गयी है। गायत्री एवं यज्ञ विज्ञान पर चिरपुरातन काल से लेकर अब तक लिखा साहित्य इस संस्थान में संकलित किया गया है तथा बहुमूल्य प्रयोगशाला में मंत्र विद्या, साधना विज्ञान एवं यज्ञ प्रक्रिया के परीक्षण नियमित रूप से होते रहते हैं।

हिमालय के दुर्गम प्रान्तों एवं देश के कोने-कोने से यहाँ के प्रतिभाशाली व अनुभवी आयुर्वेद विशेषज्ञों द्वारा एकत्र की गयी दुर्लभ एवं दिव्य जड़ी-बूटियों की एक विशाल व जीवन्त प्रदर्शनी ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान में स्थापित है। देश-विदेश के शोधार्थियों एवं आयुर्वेद विशेषज्ञों को इसके अवलोकन से असली एवं नकली वनौषधियों का परिचय प्राप्त करनें में पर्याप्त सहायता मिलती है।

यहाँ से 'अखण्ड ज्योति' एवं 'युग निर्माण योजना' नामक हिन्दी मासिक तथा 'युग शक्ति गायत्री' गुजराती, मराठी, उड़िया, बंगला, तमिल व तेलुगू भाषाओं में प्रकाशित होती है। भारत व विश्व में इन सभी पत्रिकाओं के पाठकों की संख्या पचास लाख से अधिक है।

गायत्री परिवार के संस्थापक परम पूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य द्वारा गायत्री महाविद्या, जीवन जीने की कला, व्यक्ति-परिवार तथा समाज निर्माण जैसे विषयों पर तीन हजार से अधिक पुस्तकें लिखी गयी हैं, जिनका प्रकाशन गायत्री तपोभूमि, मथुरा एवं अखण्ड ज्योति संस्थान मथुरा द्वारा हिन्दी व अन्यान्य दस भाषाओं में किया गया है। इस युग साहित्य ने करोड़ों व्यक्तियों के चिंतन को प्रभावित किया है। प्रज्ञापुराण चार खण्डों में, समग्र आर्ष साहित्य तथा वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर लिखा गया साहित्य विशेष रूप से लोकप्रिय हुआ है।

यहाँ का पत्राचार विद्यालय भारत व विश्व भर में बैठे जिज्ञासुओं-प्रज्ञा परिजनों से दैनन्दिन जीवन की उलझनों को सुलझाने का मार्गदर्शन देता है।

शान्तिकुञ्ज के प्रयत्नों से देश भर में तीन हजार से अधिक भव्य गायत्री शक्तिपीठ एवं लगभग इतने ही प्रज्ञापीठें बनी हैं। इनके माध्यम से जन-जन में आस्था विस्तार तथा नैतिक पुनरुत्थान के कार्यक्रम दस लाख लोकसेवी कार्यकर्त्ताओं के माध्यम से चलते हैं।

लोकसेवियों का सर्वांगपूर्ण शिक्षण कर धर्मतंत्र से लोकमानस का परिष्कार यहाँ का एक विशिष्ट कार्यक्रम है। एक माह के सत्रों में प्रतिमाह प्राय: ढाई सौ से अधिक भावनाशील कार्यकर्त्ता नैतिक, बौद्धिक एवं सामाजिक क्रान्ति का परिपूर्ण शिक्षण वर्ष भर लेते हैं। शिक्षण, निवास व भोजन की व्यवस्था नि:शुल्क है।

प्रतिदिन यहाँ के विशाल भोजनालय में प्राय: दो हजार से अधिक आगन्तुक, श्रद्धालु तथा अनुमति लेकर आए शिक्षार्थी बिना मूल्य भोजन प्रसाद पाते हैं।

जन-जन में सुसंस्कारिता संवर्धन तथा आस्था संवर्धन हेतु शान्तिकुञ्ज से प्रज्ञा टोलियाँ जीप-कार एवं साइकिलों से देश भर तथा विदेशों में भी जाती है। एक हजार से अधिक पीले रंग की साइकिलों पर वानप्रस्थी, परिव्राजक पूरे देश का सतत् भ्रमण करते रहते हैं। स्थान-स्थान पर साधना सभा आयोजित कर ये कार्यकर्त्ता शांतिकुंज की दैवी चेतना का विस्तार जन-जन तक करते हैं।

सौर ऊर्जा की उपलब्धियों पर आधारित तथा पवन ऊर्जा से चालित उपकरण यहाँ स्थापित हैं, जिनसे वैकल्पिक ऊर्जा का ग्रामीण वर्गों को शिक्षण दिया जाता है।

केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों के विभिन्न पदाधिकारियों को यहाँ नैतिक, बौद्धिक तथा व्यक्तित्व परिष्कार का शिक्षण पाँच दिवसीय सत्रों में विद्वान् उपाध्यायों द्वारा दिया जाता है। अब तक बीस हजार से अधिक अधिकारी इन मूल्यपरक शिक्षण में लाभ पा चुके हैं।

जन साधारण में उमंग व प्रेरणा भरने के लिए यहाँ के आधुनिकतम वीडियो-स्टूडियो में नाटक, गीत, एक्शन सांग व छोटी-छोटी टेली- फिल्में तैयार कर जन-जन तक प्रज्ञा वाहनों के माध्यम से बड़े पर्दे पर दिखाने के लिए पहुँचायी जाती है।

दैवी सत्ता द्वारा परोक्ष रूप से संचालित इस विराट् मिशन की सारी व्यवस्था लाखों व्यक्तियों द्वारा प्रतिदिन एक मुट्ठी अनाज एवं दस पैसे की राशि से विगत साठ वर्षों से चल रही है। निष्ठावान् परिजन एक से चार घंटे नित्य समय, एक-एक दिन की आजीविका इस पुण्य प्रयोजन के लिए देते हैं।

एक हजार से अधिक उच्च शिक्षित कार्यकर्त्ता यहाँ स्थाई रूप से परिवार सहित निवास करते हैं। निर्वाह हेतु वे औसत भारतीय स्तर का भत्ता मात्र संस्था से लेते हैं।

गायत्री तीर्थ शान्तिकुंज की प्रमुख स्थापनाओं में मथुरा-उत्तरप्रदेश स्थिति अखण्ड ज्योति संस्थान, गायत्री तपोभूमि, आँवलखेड़ा (आगरा) एवं ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान हैं। इसके साथ ही शान्तिकुंज की विद्याविस्तार योजना के अन्तर्गत **"देव संस्कृति विश्व विद्यालय"** की स्थापना की गयी है। यों तो महाविद्यालय के रूप में इसकी शुरूआत इक्कीसवीं सदी के शुभागमन के साथ ही हो गयी थी, किन्तु विश्वविद्यालय के रूप में प्रतिष्ठापना इसी वर्ष अप्रैल २००२ में हुई है। यह विश्वविद्यालय परम पूज्य गुरुदेव एवं परम वंदनीया माताजी के दिव्य संकल्प की नूतन सृष्टि है। प्राचीन भारत के तक्षशिला, नालंदा, वलभी, विक्रमशीला जैसे विश्वविख्यात विश्वविद्यालयों

के ऐतिहासिक युग की यह नयी श्रृंखला है। यह वशिष्ठ, विश्वामित्र, सन्दीपनि एवं शौनक जैसे पुरातन महर्षियों की विद्या एवं साधन विज्ञान का तथा चरक, कणाद, याज्ञवल्क्य, जीवक, नागार्जुन जैसे जन सेवा समर्पित विशेषज्ञों, चिकित्सा विज्ञानियों का नूतन अनुशंधान केन्द्र है। कौडिन्य, कुमारजीव एवं संघमित्रा की परम्परा में देव संस्कृति के संदेशवाहक धर्मदूतों की टकसाल के रूप में इसकी स्थापना की गयी है, जहाँ मानवता के सच्चे एवं समर्पित सेवा-साधक तैयार होंगे और अपने धवल व्यक्तित्व के आलोक से जन-जन को आलोकित करेंगे।

शांतिकुंज एक ऐसी स्थापना है, जिसे सच्चे अर्थों में तीर्थ, गुरुकुल एवं आरण्यक कहा जा सकता है। यहाँ आने वाला हर व्यक्ति कृतकृत्य होकर जाता है व नैसर्गिक सौन्दर्य तथा आध्यात्मिक ऊर्जा से अनुप्राणित वातावरण में बार-बार आने का उसका मन होता है।

इस स्थापना को देखने के लिए सबको सहर्ष आमंत्रण है।

आद्यशक्ति माँ गायत्री के वरद पुत्र आचार्य श्रीराम शर्मा जी